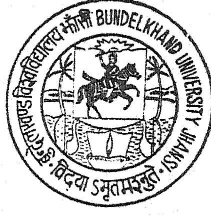
“बुन्देलखण्ड प्रक्षेत्र के छात्र/छात्रा-अध्यापकों के गृह-पर्यावरण का उनके व्यक्तितत्व पार्श्वदृश्य तथा शिक्षण कौशल पर प्रभाव का अध्ययन।”



बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय

से

''शिक्षा शास्त्र'' में विद्या वारिधि

(पी-एच. डी.) उपाधि हेतु प्रस्तुत

शोध-प्रबन्ध

निर्देशक :

डॉ० आर. पी. पाण्डेय

रीडर, शिक्षा विभाग,

बुन्देलखण्ड कालेज, झाँसी

शोधकर्ती :

श्रीमती कल्पना शर्मा

अक्टूबर १९९५

प्रमाण-पत्र

मैं प्रमाणित करता हूँ कि श्रीमती कल्पना शर्मा ने "बुन्देलखण्ड प्रक्षेत्र के छात्र/छात्रा-अध्यापकों के गृह-पर्यावरण का उनके व्यक्तित्व पाश्र्वदृश्य तथा शिक्षण-कौशल पर प्रभाव का अध्ययन" विषय पर बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय, झाँसी के शोध अध्यादेश में उल्लिखित निर्धारित अवधि तक उपस्थित रह कर मेरे निर्देशन में परिश्रम के साथ शोध कार्य पूर्ण किया है । इसकी विषय सामग्री मौलिक है । यह बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय के पी-एच0डी0 अध्यादेश के सभी उपबन्धों की पूर्ति करता है । मैं संस्तुति करता हूँ कि यह इस योग्य है कि मूल्यांकन हेतु विश्वविद्यालय में प्रस्तुत किया जाय ।

दिनांक- 20 अक्तूबर, 1995.

(डॉ0 आर0 पी0 पाण्डेय)
रीडर, शिक्षा विभाग
बुन्देलखण्ड स्नातकोत्तर महाविद्यालय,
झाँसी.

आमुख

"धृति, क्षमा, दमो स्तेयं शोचमिन्द्रिय निग्रहं ।
धी र्विद्या सत्यं अक्रोधो दशकं धर्म लक्षणम् ।।"
§मनुस्मृति§

मानवीय एंव सामाजिक गुणों का प्रस्फुटन "मनु" ने धैर्य, क्षमा, दमन, अस्तेय, स्वच्छता, इन्द्रिय निग्रह, विद्वता, विवेकशीलता, सत्य और क्रोध, आदि का विकास पारिवारिक वातावरण में ही माना है । परिवार एक छोटा समाज होता है, जिसमें प्रत्येक सदस्य एक दूसरे के साथ इतना सन्निकट रहता है जितना कि शरीर के साथ प्रत्येक अवयव । संसार के समस्त सुखों की तुलना में पारिवारिक सौहार्द का महत्व भारी बैठता है । माता-पिता का वात्सल्य, पत्नी प्रेम, भाई-बहनों का सहयोग, आदि का प्रभाव पारिवारिक जीवन को सृजनशील बना देता है ।

मानव और उसके वातावरण का गत्यात्मक रूप सदैव से ही परिवार को प्रभावित करता रहा है । समाजशास्त्रियों ने परिवार को सबसे महत्वपूर्ण संस्था माना है जहाँ भावी पीढ़ी का जन्म तथा निर्माण होता है और मानवों के अनुसार उनकी सभी आवश्यकताओं की पूर्ति की जाती है । "राल्फ लिण्डन" का विचार है, "शिशु के समुचित विकास के लिए शारीरिक आवश्यकताओं की संतुष्टि पर्याप्त नहीं है । बच्चों का वैयक्तिक ध्यान, प्रेम और क्रिया के सन्तोष की अधिक आवश्यकता होती है । मानवीय गुणों के अभाव में मानसिक विकास में रुकावट पड़ती है । पारिवारिक सम्बन्ध वह भावात्मक लगाव है जो अंत: क्रियाओं द्वारा ही स्थापित होता है । इसका प्रत्यक्ष सम्बन्ध पारिवारिक पर्यावरण की सम्पन्नता से ही होता है । अत: बच्चों के विकास में वातावरण एक शक्तिशाली उत्प्रेरक होता है ।"

वर्तमान भौतिकवादी दृष्टिकोण ने "शिक्षक व्यवसाय", को रोजगारपरक मान लिया है । महात्मा गाँधी §1937§ की "नई तालीम" ने शिक्षा के साथ

व्यवसाय यानि अर्थकरक् शिक्षा का विकास किया । स्वतन्त्रता के पश्चात् अनेक जिलों में बहुउद्देशीय स्कूलों की स्थापना हुई, लेकिन ये प्रयोग सफल नहीं हुए । आज 1993-94 से "आदर्श पाठ्यक्रम" लागू करके सरकार ने व्यावसायिक शिक्षा को फिर से सुदृढ़ बनाने का प्रयास किया है । शोधकर्ती इस प्रयास की सफलता "तकनीकी प्रशिक्षकों" की सृजनात्मकता को मानती है । इन्हीं प्रशिक्षकों में छात्र/छात्रा-अध्यापक (बी०एड० प्रशिक्षणरत) भी आते हैं । ये अपने-अपने पारिवारिक पर्यावरण से धारण किये गये लक्षणों या विशेषताओं का हस्तांतरण अपने प्रशिक्षण के दौरान करके लाभान्वित होते हैं । अतः प्रशिक्षण के द्वारा समर्पित उपयुक्त अध्यापक ही तैयार नहीं होते हैं बल्कि राष्ट्रीय गौरव के लिये नागरिकों, समाज और सभ्यता तथा संस्कृति का सम्बर्द्धन कैसे किया जाय ? भी सिखाया जाता है ।

आज शिक्षा के द्वारा शाश्वत तथा परिवर्तित मूल्यों की स्थापना में शिक्षा की सबसे महती भूमिका है । इसका सम्पूर्ण उत्तरदायित्व शिक्षक के कंधों पर आता है । शिक्षक व्यक्तित्व की संरचना पारिवारीय संस्कार, शिक्षा तथा प्रशिक्षण के द्वारा सम्बर्द्धित होती है । "यंग" (1941) ने प्रयोगों द्वारा पता लगाया कि धनी (समृद्धिशाली) परिवारों के बच्चे अपने भाषायी ज्ञान में अधिक उन्नति कर लेते हैं, अपेक्षाकृत निर्धन परिवार के बच्चों के । परिवार का पर्यावरण उनके शारीरिक, मानसिक और संवेगात्मक विकास को प्रभावित करता है । परिवार का शिक्षण बच्चों में बुद्धि, समायोजनशीलता, विचार संकलन और क्रियाओं का चयन, आदि में मदद करता है (जीन पियाजेट (1952)) । यही अधिगम वयस्कता में प्रत्येक व्यक्ति को अपने व्यवसाय में सफलता दिलवाने में भी मदद देता है ।

व्यक्तित्व विकास का कार्य परिवार से प्रारम्भ होता है । उसकी विशेषतायें वंशानुक्रम से निर्धारित होती हैं, लेकिन विकास परिवार के पर्यावरण में होता है । "हिल गार्ड" (1962) ने बालक के विकास का आधार - पूर्व निर्धारित-स्थापित स्थितियों को माना है । जिस समाज में बच्चे का जन्म होता है, उसके आश्रित होने से उसको अपनी स्थितियों का चयन करना पड़ता है । यही क्रम वयस्कता के

समय भी जारी रहता है । परिणामस्वरूप यह प्रत्येक स्थान पर अपनी छाप लगाता है । प्रस्तुत अध्ययन में छात्र/छात्रा-अध्यापकों के उच्च पारिवारीय वातावरण तथा निम्न-पारिवारीय वातावरण का अध्ययन उनकी व्यक्तित्व विशेषताओं और शिक्षण कौशल के सन्दर्भ में किया गया है ।

वर्तमान समय में पर्यावरण शिक्षा का अपना महत्व है । इसीलिए नेता व्यक्तित्व, खिलाड़ी व्यक्तित्व, हीरो व्यक्तित्व, प्रशासनिक व्यक्तित्व और अध्यापक व्यक्तित्व, आदि के रूप में पर्यावरण प्रसिद्ध हो रहा है । शोधकर्ती ने छात्र/छात्रा-अध्यापकों के व्यक्तित्व तथा शिक्षण कौशल का अध्ययन पारिवारिक आधार (सरकार) पर करने का प्रयत्न किया है । प्रस्तुत कार्य शिक्षक-प्रशिक्षण के तथा पर्यावरणीय विशेषज्ञों के सहयोग से सम्भव हो पाया है । अतः शोधकर्ती का यह परम कर्तव्य हो जाता है कि वह इनके सहयोग के प्रति आभार प्रदर्शित करे ।

मेरे परम आदरणीय पित्र तुल्य ससुर श्री रमेश बाबू शर्मा एंव मातृ तुल्य सास जी श्रीमती शकुन्तला शर्मा की हार्दिक मनोकामना थी कि मैं शोध कार्य करूँ । यह शोध कार्य इन्हीं के आशीर्वाद एंव प्रेरणा का प्रतीक है । मैं इसे उन्हीं के श्री चरणों में समर्पित करती हूँ ।

मैं परम आदरणीय डॉ0 आर0 पी0 पाण्डेय, रीडर, बुन्देलखण्ड कॉलेज, झाँसी की आभारी हूँ जिनके सहयोग और कुशल निर्देशन से यह शोध कार्य पूर्णता प्राप्त कर सका । साथ ही डॉ0 एस0डी0 कपूर, डॉ0 जे0 पी0 श्रीवास्तव, मेरठ, डॉ0 राम शकल पाण्डेय, इलाहाबाद तथा डॉ0 श्रुति कुमार, आगरा, आदि विद्वानों की आभारी हूँ जिन्हों ने "शिक्षण कौशल" अनुसूची के विकास में सहयोग दिया ।

अतर्रा कॉलेज, अतर्रा, डी0वी0 कॉलेज, उरई एंव बुन्देलखण्ड कॉलेज, झाँसी के प्राचार्यों की भी हार्दिक आभारी हूँ जिससे प्रदत्तों का संकलन समय से हो सका ।

मैं अपने मौसा जी श्री ज्ञान सागर रिछारिया एंव डॉ0 कमलेश कुमार शर्मा अनुभाग अधिकारी, बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय की भी हृदय से आभारी हूँ, जिनके माध्यम

से इस शोध कार्य का निर्देशन डॉ0 पाण्डेय द्वारा प्राप्त हो सका । मैं अपने परम आदरणीय माता श्रीमती माया दीक्षित एंव पिता श्री राम स्वरूप दीक्षित को आभार व्यक्त करना चाहती हूँ जिनके सहयोग एंव आशीर्वाद से यह शोध कार्य पूर्ण कर सकी । श्री त्रिपाठी एंव श्री पंकज राना की भी हृदय से आभारी हूँ जिन्होंने इस शोध प्रबन्ध का टंकण कार्य पूर्ण किया ।

अन्त में मैं अपने स्नेही पति श्री संजीव शर्मा को भी आभार व्यक्त करना चाहती हूँ जिनके सहयोग, प्रेरणा तथा उत्साहवर्द्धन से प्रस्तुत शोध कार्य पूर्णता प्राप्त कर सका ।

झाँसी

दिनांक- 20 अक्तूबर, 1995

Kalpana Sharma

(श्रीमती कल्पना शर्मा)

विषय-सूची

शोध कार्य में प्रयुक्त तालिका

सूची ।

शोध कार्य प्रयुक्त रेखा चित्र

अध्याय - प्रथम

प्रस्तावना

1.1 समस्या की पृष्ठभूमि

1.2 समस्या का आभास

1.3 समस्या की आवश्यकता

1.4 समस्या का स्पष्टीकरण

1.5 समस्या के उद्देश्य एंव परिकल्पनायें

1.6 अध्ययन की परिसीमायें

1.7 अध्ययन की रूपरेखा

प्रस्तावना

मानव अपनी वंशानुक्रमीय धरोहर के पर्यावरण के द्वारा अपनाता व समृद्ध बनाता है । इसका आधार उसका बचपन का गत्यात्मक विकास और परिवार के बीच स्थापित तादात्मीकरण होता है । "बालक की प्रथम पाठशाला" उसके घर को ही माना गया है । विद्वानों के अध्ययनों से स्पष्ट होता है कि गृह पर्यावरण ही बच्चों के विकास को निर्धारित करने में अहं भूमिका अदा करते हैं । उसके व्यक्तित्त्व का विकास व निर्माण गृह पर्यावरण के आधार पर ही सामान्य या असामान्य रूप लेता है । इसी स्थान पर वह खेलकर, सीखकर, सभ्य और सुसंस्कृत प्राणी के रूप में परिवर्तित होता है । वह यहीं पर अपनी सभ्यता और संस्कृति का प्रथम पाठ पढ़ता है और धीरे-धीरे अपने शारीरिक, मानसिक, संवेगात्मक, मनोवैज्ञानिक, आर्थिक एंव अन्य विकासों को एक निश्चित दिशा देता है जो स्वयं को अन्यों से भिन्न स्थापित करता है ।

1.1 समस्या की पृष्ठभूमि :-

वर्तमान समय में पारिस्थितिक संसाधनों के अंधाधुन्ध दोहन और शोषण के कारण मानव का सामाजिक वातावरण दूषित होता जा रहा है । आज मानव द्वारा विकसित बहुआयामी विकास स्वयं उसी के विकास में अवरोधक बन रहा है । जिसका सीधा प्रभाव गृह पर्यावरण पर पड़ता जा रहा है । एक ओर अमीरी उच्च सीमा पर पहुँच रही है और दूसरी ओर गरीबी तथा दुश्चक्रों का विस्तार होता जा रहा है । आज मानव पर्यावरण संरक्षण और उसके विकास के साथ-साथ सामाजिक-आर्थिक विकास की गति के बीच सन्तुलन स्थापित करने की सोच रहा है ।

यह सन्तुलन दूसरे परिवारों को जोड़ने से ही स्थापित हो सकता है । "ल्योकोक" (1949, पृ० 38) का विचार है, "मानव अपनी रुचि, क्षमता और आवश्यकता के अनुसार पर्यावरण का प्रत्यक्षीकरण करता है । यह प्रत्यक्षीकरण एक संस्कृति से दूसरी संस्कृति में भिन्न होता है । यह ठीक उसी प्रकार है, जिस प्रकार विचारार्थ तय किये गये एक विषय पर लोगों की अलग-अलग राय होती है । इस तथ्य की पुष्टि हेतु विभिन्न मानव संस्कृतियों की "चिन्ताओं" पर कोई प्रश्न करें, तो निश्चित रूप से विभिन्न वर्गों की अहं चिन्तायें भिन्न होंगी । परिणाम स्वरूप गृह पर्यावरण सिर्फ बच्चों के विकास को ही प्रभावित नहीं करता है बल्कि उसमें रहने वाले सभी सदस्यों को प्रभावित करता है ।

परिवार, समाज की एक मौलिक व सार्वभौम संस्था है । इसी के द्वारा मानव की विभिन्न आवश्यकताओं की पूर्ति होती है । यह आदिकाल से ही बालक के विकास व संरक्षण में महत्वपूर्ण सहयोग देता रहा है । इनमें सबसे प्रमुख बच्चों का पालन-पोषण होता है । परिवार में माता-पिता, भाई-बहिन तथा अन्य सदस्य बच्चों के सही पालन-पोषण में मुख्य भूमिका निबाहते हैं । इसमें बच्चे के शारीरिक मानसिक स्वास्थ्य को ध्यान में रखा जाता है । उसके लिये विटामिन्स, कैल्शियम तथा अन्य आवश्यक प्रोटीन आदि का प्रयोग शारीरिक रूप से स्वस्थ रहने तथा सही विकास हेतु किया जाता है । इस पालन-पोषण में पोषक भोजन के साथ-साथ परिवार के सदस्यों का व्यवहार भी प्रमुख होता है ताकि उसके ज्ञानात्मक, भावात्मक और क्रियात्मक आदि पक्षों का सही विकास होता रहे ।

परिवार का अन्य दायित्व नियन्त्रण माना गया है । बालक को पारिवारिक पर्यावरण अपने मानकों, रीतिरिवाजों, आदतों और मान्यताओं के अनुरूप ढाल देता है । इसमें बालक की क्रियाओं या व्यवहारों को सहानुभूति के साथ परिस्कृत किया जाता है । ताकि वह अपने में सन्तुलन और सामंजस्य स्थापित करना सीख जाये । इस नियन्त्रण का आधार पारिवारिक सन्तोष, आत्मसंयम,

सदस्यों का आदर-सम्मान, सहयोग और श्रम निष्ठा आदि को माना जाता है । एक बालक अपने परिवार से इनको सीखता है, धारण करता है और भविष्य में इनका समयोचित प्रयोग भी करता है ।

पारिवारिक पर्यावरण का अन्य घटक "पुरस्कार व दण्ड" भी होता है। बालक अपनी जिज्ञासाओं को शान्त करने के लिये क्रियाशील होता है । इस समय बच्चों में "अतिरिक्त शक्ति" की अधिकता स्वाभाविक रूप से होती है । परिणामतः वह किसी न किसी कार्य को करना चाहता है । ये प्रयत्न और भूल उसके सीखने को सकारात्मक और नकारात्मक भी बनाते हैं । जहाँ पुरस्कार और दण्ड उसके विकास में सन्तुलन, तीव्रता और प्रखरता लाता है, वहीं पर वह उचित परिवर्तन लाकर उसके व्यवहार को सकारात्मक (उपयोगी) भी बनाता है । वयस्क अवस्था में यही पुरस्कार और दण्ड का भाव प्रसंशा और निन्दा के रूप में प्रगति का द्योतक बन जाता है ।

प्रत्येक अवस्था का जीव स्वयं की प्रतिष्ठा तथा सम्मान चाहता है । छोटे बच्चों के अध्ययनों में पाया गया है कि सामाजिक सम्मान की मूलप्रकृति जागृत होकर व्यक्ति को ऐसे कार्य करने को अग्रसर करती है, जिसमें उसका समाज में स्थान बन सके । छोटे बच्चों को सामूहिक व्यवहार में सम्मिलित न करने पर वे समाज विरोधी कार्य करके अपने तिरस्कार को प्रदर्शित करते हैं । ताकि आपका ध्यान उनकी ओर जाये और उनको भी सभी के साथ सम्मिलित होने का अवसर मिले । शिक्षा शास्त्री "मीड" महोदया का मत है कि बच्चों में उत्पन्न "मैं" की भावना को पारिवारिक पर्यावरण ही "हम" के भाव में परिवर्तित करता है । इसी प्रकार से सामाजिक सम्मान, प्रतिष्ठा या क्रियाशीलता वयस्कों में भी सामाजिकता की द्योतक होती है । इससे सिर्फ क्रियाशीलता में वृद्धि ही नहीं होती है बल्कि व्यक्ति का आउटपुट भी बढ़ जाता है ।

परिवार बालक को पूर्ण संरक्षण प्रदान करता है । वह उसको प्रबुद्ध नागरिक बनाता है ताकि वह सामाजिक संरक्षण की धारणा का विकास कर सके । इस संरक्षण

में सुरक्षा, भाषा, संस्कृति, मूल्य, संस्कार और आदर्श आदि सभी आते हैं । महान मनोवैज्ञानिक "वाटसन" का मत है कि एक बालक अपने पूर्वजों से जिन विशेषताओं को हस्तांरण में असफल रहता है, पारिवारिक पर्यावरण उन विशेषताओं का विकास अपनी समृद्धिशीलता से कर सकता है । यही विशेषतायें वयस्क होने पर व्यक्तित्व के शीलगुण बन जाते हैं और इन संस्कारों, मूल्य, आदर्श आदि का प्रगटीकरण वह अपने दैनिक व्यवहार तथा क्रियाओं में करता है ﴾इलियट एंव मैरिल, 382﴿ ।

इस प्रकार से स्पष्ट होता है कि व्यक्ति का विकास वंशानुक्रमीय विशेषताओं के साथ-साथ परिवार के वातावरण पर अधिक निर्भर करता है । परिवार ऐसी सामाजिक व्यवस्था है जिसमें बुद्धि, कौशल, वैभव, व्यावसायिक दक्षता आदि का प्रगटीकरण या प्रादुर्भाव ऐच्छिक सहयोग से होता रहता है ताकि प्रत्येक सदस्य की अधिक से अधिक भलाई हो सके ﴾डेविस, 1927, पृ० 699﴿ ।

शोधकर्त्री का विचार है कि प्रत्येक परिवार अपनी उपलब्धियों की पहचान, मूल्यांकन, भविष्यवाणी और परिष्करण आदि आयामों के रूप में बच्चों को देता है । मानव का और पर्यावरण का अन्योन्याश्रित सम्बन्ध है । बालक की प्रारम्भिक पाठशाला उसका परिवार और शिक्षक उसके माता-पिता होते हैं । यहीं पर उसकी सभी आवश्यकताओं की पूर्ति होती है जिससे वह राष्ट्र का सफल नागरिक बनता है । अपने सदस्यों के बीच में वह भाषा सीखता है, उठना बैठना सीखता है, खाने-पीने के तरीके अपनाता है, शिष्टाचार सीखता है, संस्कारों को प्रगट करते हुए बातचीत करना और परिवारीय सदस्यों के बीच अन्त:क्रिया करना आदि सीखता है । इस प्रकार के ग्रहण किये गये व्यवहार तथा प्रगट की गई क्रियाओं के द्वारा वह परिवार तथा समाज में अपनी उपादेयता सिद्ध करता है जिससे वयस्क होने तक उसको समाज का सम्माननीय सदस्य माना जाने लगता है । परिवार तथा समाज में बालक द्वारा स्थापित पहचान उसके विकास के लिये उपयुक्त है या नहीं इस बात का मूल्यांकन उसके बाह्य क्षेत्र में प्रगट व्यवहार से लगाया जाता है ।

परिवार से बच्चों ने क्या सीखा, इसका मूल्यांकन विद्यालय में लगाया जाता है । वहाँ पर बच्चों की आपसी क्रियायें, आदतें, मनोवृत्तियाँ, सभ्यता और संस्कृति का प्रगटीकरण आदि का प्रत्यक्ष रूप से आंकलन होता रहता है । इसी आधार पर शिक्षक बालक के भविष्य को निश्चित करते हैं और नई दिशा में ढालते हैं । इसी आयाम को मनोवैज्ञानिकों ने भविष्यवाणी करना बतलाया है । माता-पिता के द्वारा प्रदत्त पर्यावरण से प्राप्त सर्वांगींण परिपक्वता, क्षमता को आधार मानकर बच्चे के विकास की दिशा को निर्धारित किया जाता है । वर्तमान शिक्षाविद् इसी आधार पर पाठ्यक्रम शिक्षण विधि, अनुशासन और अन्य शिक्षण कौशलों की संरचना करते हैं । इनमें प्राप्त सफलता के प्रतिशत से ही बच्चों के भविष्य का निर्धारण किया जाता है ।

परिवार का वातावरण बच्चों के व्यक्तित्व निर्माण में ही सहायता नहीं करता है बल्कि उनके सांस्कृतिक विकास को परिस्कृत भी करता है । धीरे-धीरे इन्हीं परिणामों के फलस्वरूप उसका व्यवहार सामाजिक मान्यताओं में परिवर्तित होता जाता है । पारिवारिक सम्बन्धों का प्रभाव बालक के वयस्क व्यक्तित्व निर्माण पर भी पड़ता है । "मन" (1956, पृ0 168) का मत है कि माता-पिता का प्रतिक्रियात्मक व्यवहार बच्चों के भाव रूप को निर्धारित करते हैं जिसमें उनके समस्त विकासों का परिस्करण सम्मिलित होता है । "राल्फ लिंटन" का मत है : "शिशु के समुचित विकास के लिये सिर्फ शारीरिक आवश्यकताओं की संस्तुष्टि पर्याप्त नहीं है बल्कि बच्चों के लिये व्यक्तिगत सहायता, प्रेम, और सहयोगी क्रियाओं आदि से मिलने वाले संतोष की अधिक आवश्यकता होती है ।" मानवीय गुणों का विकास बहुआयामी होता है वह बच्चों के वयस्क होने पर मानसिक विकास, सोच आदि को प्रभावित करता है । इस प्रकार से परिवार का पर्यावरण बच्चों में भावात्मक और रागात्मक-तादात्म्य को स्थायी बनाने में सहायक होता है । परिणामतः वयस्क व्यक्तित्व की क्रियाशीलता, रचनात्मकता और सृजनशीलता के प्रति उत्तरदायी बन जाती है, जिससे उसके प्रौढ़ व्यक्तित्व में एक निश्चितता

व निखार उत्पन्न होता है । यही निखार-सोच उसको शिक्षा के प्रति अपना दर्शन प्रगट करने को प्रेरित करता है ताकि वह एक समर्पित व्यक्तित्व (अध्यापक) बन सके ।

उपर्युक्त वर्णन एवं विद्वानों के मतों से स्पष्ट होता है कि घर का पर्यावरण सिर्फ बच्चों को ही प्रभावित नहीं करता है, बल्कि वह छात्र/छात्रा अध्यापकों के विकास को भी प्रभावित करता है । बच्चों के मार्गदर्शक बनकर पारिवारीय सदस्य तथा अन्य साधन उनको एक सफल शिक्षक बनने की ओर प्रेरित करते हैं । बचपन के अनुभव धीरे-धीरे स्थायी रूप ले लेते हैं और वयस्कों को उचित मार्ग प्राप्त करने हेतु निर्देशित करते रहते हैं । मानवीय व्यक्तित्व सामाजिक धरोहर होती है जिसको प्रत्येक माता-पिता अपने प्रतिमानों के आधार पर और उनकी विलक्षणताओं के मूल्यांकन के आधार पर विकसित करते हैं । परिवार में अनुकरण, संकेत, सहानुभूति, क्रियात्मकता आदि कारक प्रचुर मात्रा में उपलब्ध रहते हैं जिनका प्रयोग ही वयस्कता का द्योतक होता है । इस विकास पर पारिवारिक प्रतिमानों का सकारात्मक प्रभाव पड़ता है । बच्चे प्रतिमानों को आत्मसात् करते समय माता-पिता के शील-गुणों का अनुकरण भी करते हैं और साथ ही उनके नैतिक तथा सांस्कृतिक मानकों को ग्रहण कर लेते हैं (मारगेन, 1956ए, पृ0 239) ।

1.2 समस्या का आभास :-

प्रत्येक राष्ट्र का विकास मानवीय सत्ता में निरन्तर होने वाले परिष्करण के द्वारा होता है । यह परिष्करण बुद्धिजीवियों के कार्यों की व्यवहारिक परिणति मात्र होती है । बुद्धिजीवी वर्ग का प्रमुख शिक्षक होता है जो अपने शांतमय विचार श्रृंखलाओं का प्रयोग छात्र विकास के द्वारा करता रहता है । चाहे वे स्वामी विवेकानन्द हों, सुकरात हों, या महात्मा गांधी- सभी ने अपने उपदेशों (शिक्षा) के द्वारा मानव को एक नई दिशा दी है जो सामयिक समस्याओं का समाधान करने के साथ-साथ भविष्य के लिये स्थायी मार्ग प्रशस्त करती है । मार्ग की प्रशस्ति और

व्यवहारों का परिस्कार मिलकर सामाजिक क्षेत्र में सभ्यता और संस्कृति का विकास करते हैं ।

शिक्षक एक कलाकार की तरह से सजीव मूर्तियों में चेतना का विकास करता है वे अपना सर्वागींण विकास करने में समर्थ हो । इनका यह श्रम समर्पित भाव, सृजनात्मक प्रयोजनों के लिये होता है । इस प्रकार से नागरिकों की कुसंस्तरिकता, असामाजिकता, विकृत चिन्तन अदिग्नता आदि विकारों में शनैः शनैः परिवर्तन होता है । वह समाज की संस्कृति एंव परम्पराओं की सामयिक व्याखया रक्षा और प्रस्तर करता है । शिक्षक ही शिक्षा के माध्यम से राज्य और समाज के बीच संतुलन स्थापित करता है । किसी राष्ट्र की गरिमा उसकी शिक्षा पद्धति मे संतुलन स्थापित करता है । किसी राष्ट्र की गरिमा उसकी शिक्षा पद्धति के ऊपर निर्भर करती है, शिक्षा पद्धति गुणों, शिक्षकों पर, और गुणी शिक्षक परिवार के पर्यावरण की देन होता है । "वाटसन" का मत है कि परिवार का पर्यावरण बच्चों को कम आयु में ही प्रभावित नहीं करता है बल्कि उसका प्रभाव जीवन भर चलता रहता है । इसी प्रकार से महान दार्शनिक तथा शिक्षा-शास्त्री डॉ० राधाकृष्णन् का विचार है - "शिक्षक का समाज में महत्वपूर्ण स्थान है । वह मानवीय पीढ़ियों में बौद्धिक परम्पराओं का हस्तांतरण करता है । प्राविधिक कुशलता बनाये रखता है और सभ्यता के दीप को आलोकित करता है । वह केवल व्यक्ति को मार्ग ही नहीं दिखलाता है, बल्कि सारे राष्ट्र का मार्ग निर्देशित करता है ।"

श्रीमान् नारायण (1968, पृ० 8) का मत है, "किसी राष्ट्र की महानता उसकी भव्य अट्टालिकाओं, वृहद् विकास योजनाओं और महान सेनाओं से नहीं मूल्यांकित होती है, बल्कि उनके नागरिकों के गुणों के द्वारा आँकी जाती है ।" प्रस्तुत कथन से स्पष्ट होता है कि शिक्षक ऐसा पर्यावरण तैयार करता है ताकि समस्त राष्ट्र का कल्याण उसके द्वारा जलाये गये दीपक से हो । यह दीपक पर्यावरण होता है जिसमें नागरिकों को मनानुकूल गढ़ा जाता है । अतः प्रशिक्षण लेने वाले अध्यापकों को गरिमायुक्त पर्यावरण प्रदान किया जाये ताकि वे अपने अर्द्ध विकसित व्यक्तित्व को पूर्ण स्वरूप प्रदान कर सकें ।

शोधकर्त्री एक शिक्षिका है । उसने अपने सहयोगियों, अपने प्रेरक गुरुओं आदि की भूमिका का प्रत्यक्षीकरण विभिन्न रूपों में किया है । इन सभी शिक्षकों में उत्तम कोटि के अध्यापक ∛समर्पित व्यक्तित्व∛ वाले आते हैं । ये लोग तन, मन और धन से अपने उद्देश्यों, मूल्यों का प्रसार छात्रवर्ग में करते रहते हैं । ये कठिनाई महसूस करते हैं, लेकिन रास्ते से पथ-भ्रष्ट नहीं होते हैं । इनका मत होता है कि हम सभी छात्रों को अच्छा नागरिक नहीं बना सकते हैं लेकिन कुछ को बनायेंगे । परिणामस्वरूप कुछ का सर्वांगीण विकास होता है जो इस कार्य को आगे जारी रखते हैं । अतः इनके प्रशिक्षण का प्रभाव आशावादिता से प्रेरित होता है और आत्मतोष का स्थायी भाव स्वयं में होता है । द्वितीय स्तर के वे शिक्षक होते हैं जो समय काटने के लिये अध्यापन व्यवसाय से जुड़ जाते हैं । ये मौके से फायदा उठाने वाले होते हैं । इनका कोई अपना जीवन दर्शन व लक्ष्य नहीं होता है । ये लोग आराम पसन्द और सन्तोषी जीव की तरह से अपने में रमें रहते हैं । अतः इनके कार्यों से शिक्षा को कोई लाभ नहीं होता है । तृतीय स्तर पर वे शिक्षक लोग आते हैं जो शिक्षा के क्षेत्र में सिर्फ नेतागीरी करके अपना स्वार्थ पूरा करते हैं । वे साम, दाम, दण्ड, भेद आदि प्रक्रियाओं का प्रयोग करके अपना वर्चस्व बनाये रखते हैं । इन पर शिक्षा प्रशासन, अध्यापक संघ, छात्र विश्वास आदि निर्भर रहता है । इस प्रकार से ये लोग शिक्षक कम और नेता अधिक होते हैं ।

शोधकर्त्री ने "नवीन राष्ट्रीय शिक्षा नीति" 1986 तथा क्रियान्वयन कार्यक्रम 1992 का अध्ययन किया तो पाया कि अध्यापक शिक्षा के पूर्ण सुधार पर सरकार ने बल दिया है । यह तभी संभव हो सकता है जब प्रशिक्षण प्राप्त करने वाले छात्र/छात्रा अध्यापकों के चयन के समय उनके पारिवारिक पर्यावरण और व्यक्तित्व का अध्ययन किया जाये । प्रशिक्षण प्राप्त करने के समय छात्र/छात्रा की शारीरिक आयु 18 वर्ष से अधिक तथा योग्यता शिक्षा स्नातक होती है । यह समय किशोरा-वस्था और युवावस्था के संधि का काल होता है । अतः इस समय मानसिक सोच में स्थिरता, व्यवसाय का चुनाव, सामाजिक सम्मान का भाव आदि में परिवर्तन आना स्वाभाविक है । इन सबका गठन उनके पारिवारिक पर्यावरण से प्रदत्त शिक्षा

से होता है । यही आगे चलकर व्यक्तित्व के निर्माण में प्रमुख भूमिका अदा करते हैं। इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद (1990) द्वारा आयोजित सेमिनार "अध्यापक शिक्षा का नवीनीकरण" में भी अध्यापकीय प्रशिक्षण में पर्यावरण को महत्त्व दिया गया । डॉ० पाण्डेय ---- छात्र-अध्यापन नीरस और निरुद्देश्य हो रहा है, प्रो० मलिक ---- अध्यापक शिक्षण की गिरावट पूरे समुदाय से सम्बन्धित होता है । प्रो० टी० पति --- अध्यापक और छात्र के मध्य की खाई को सकारात्मक वातावरण से पाटना आवश्यक है ।

इस प्रकार से अध्यापक शिक्षा के आयाम --- गुणवत्ता, दक्षता, और चरित्र (प्रो० लोकेश) आदि पर विशेष ध्यान देना चाहिए । लेकिन इन तीनों आयामों का निर्माण क्या एक दम हो सकता है ? या प्रशिक्षण के एक वर्ष में किया जा सकता है । या प्रत्येक प्रशिक्षार्थी में विकसित हो सकता है । आदि शोधकर्त्री के लिये समस्या के रूप में हैं । अतः स्वयं का मानना है कि इन तीनों आयामों (गुणवत्ता, दक्षता और चरित्र) का निर्माण प्रशिक्षणकर्ताओं के पारिवारीय परिसर से होता है । जहाँ पर उनको विभिन्न प्रकार का वातावरण व साधन मिलते हैं जो उनमें मूल्यात्मक शिक्षा के प्रति प्रेरणा व उत्साह जागृत करते हैं । फलस्वरूप वे लोग स्वयं के व्यक्तित्व में गुणवत्ता, दक्षता, और चरित्र का विकास धीरे-धीरे कर लेते हैं । वयस्क होने तक वे अपने चुने गये व्यवसाय की ओर उनकी धारा (स्त्रोत) को मोड़ते भर हैं ।

उपर्युक्त तथ्यों के आधार पर शोधकर्त्री ने अपने मन के वातावरण के प्रभाव को जानने के लिये प्रमुख विद्वानों के अध्ययनों पर दृष्टिपात किया तो पाया कि व्यक्ति की व्यवसायिक उन्नति के लिये पर्यावरण एक समृद्धिशाली घटक या कारक के रूप में कार्य करता है । काम्पवेल (1956), रेडिन (1975), एन०सी०आर०टी० (1978), सालू (1979), अग्रवाल (1988) आदि प्रभृति विद्वानों ने अपने-अपने अध्ययनों से स्पष्ट किया कि वातावरण का प्रभाव मानसिक योग्यता तथा शैक्षिक उपलब्धि पर सकारात्मक रूप से पड़ता है । इस प्रकार से यह स्पष्ट हो जाता है कि आज शिक्षण कौशल की नकारात्मक भूमिका पर प्रशिक्षणरत छात्र/छात्रा अध्यापकों

के व्यक्तित्व का प्रभाव पड़ता है । क्योंकि उनके व्यक्तित्व का विकास एवं गठन पारिवारिक पर्यावरण के प्रभाव से समायोजित है । परिणामस्वरूप शोधकर्त्री ने विचार किया कि प्रशिक्षणरत छात्र/छात्रा अध्यापकों के व्यक्तित्व गठन तथा शिक्षण कौशल पर उनके गृह पर्यावरण का अध्ययन किया जाये । ये अध्ययन तथा सकारात्मक पक्ष लिये हुये हैं ।

1.3 समस्या की आवश्यकता :-

प्रशिक्षणरत छात्र/छात्रा-अध्यापकों के व्यवहार का स्थायीकरण, परिपक्वता, ज्ञानात्मक पक्ष, भावात्मक पक्ष और गामक पक्ष आदि के विकास के रूपों में शैशव-काल से ही प्रारम्भ हो जाती है । शैशवकालीन पर्यावरण इन तीनों ही विकासों में समन्वय स्थापित करते हैं । इस हेतु अलग-अलग शिक्षण करना और समन्वय स्थापित करना माता-पिता और गुरु के द्वारा ही सम्भव होता है । अतः प्रशिक्षण संस्थाओं में छात्र/छात्राओं को इस आधार पर विकसित किया जाये ताकि वे अपने शिक्षण व्यवसाय के द्वारा बच्चों को ज्ञानात्मक, भावात्मक और गामक विकास में समन्वय स्थापित करने में समर्थ हों । अतः प्रस्तुत अध्ययन विषय का मुख्य उपयोग बालकों के माता-पिता के लिये है जो उनके सर्वांगींण विकास हेतु संतुलित पर्यावरण प्रस्तुत करते हैं ।

शिक्षा एक ऐसी प्रक्रिया है या अध्यवसाय है, जिसमें मानव समाज के अधिक परिपक्व लोग, न्यून परिपक्व व्यक्तियों की अधिकाधिक परिपक्वता के लिए प्रयास करते हैं, तथा इस प्रकार से मानव जीवन को अच्छा बनाने में योगदान करते हैं (विटलर, 1951, पृ0 10) । इस कथन से स्पष्ट होता है कि समाज के अधिक परिपक्व लोग माता-पिता और शिक्षक ही होते हैं जो शैक्षिक पर्यावरण तैयार करके बच्चों के विकास को समुचित दिशा देते हैं जो वयस्क होने पर अपने व्यक्तित्व में इसी धरोहर का प्रगटीकरण करते हैं । अतः यह अध्ययन परिवार के प्रत्येक सदस्य के लिये अपने योगदान के लिये उपयोगी हो सकता है ।

प्रस्तुत अध्ययन की एक अन्य उपादेयता समाज व नागरिकों में "मूल्य" विकास के लिये हो सकता है। भारतीय मनीषियों ने मूल्य विकास का आधार परिवार को ही माना है। परिवार का सम्पूर्ण प्रभाव पर्यावरण के रूप में बच्चों को प्रभावित करता है। शास्वत् मूल्य (सत्यं, शिवं और सुन्दरम्) का अपना विशिष्ट स्थान है लेकिन भारतीय परिवार में इनका विकास सामान्य रूप से होता है। यह मूल्य सम्पूर्ण मानव जाति के हैं किसी धर्म, सम्प्रदाय, जाति, या राष्ट्र के नहीं। इसीलिए इनका विकास शनैः शनैः प्रत्येक मनुष्य में होता रहता है। इसके द्वारा ही परिवर्तित मूल्य व्यक्ति की अन्तर्भावना के द्वारा विकसित व निश्चित होते हैं। ये मूल्य – सैद्धांतिक, आर्थिक, सामाजिक, राजनैतिक, सौन्दर्यात्मक और धार्मिक – आदि रूपों में विकसित होते हैं (साल्पोर्ट-वरनन, 1931) इनके प्रगटीकरण और विकास का परिणाम ही अभिवृद्धि तथा परिपक्वता होती है। इसी तरह से बालक का व्यक्तित्व माता-पिता के संघर्षात्मक व्यवहार का परिणाम होता है जिसका आधार उनके "विवेक" को माना जा सकता है (मन, 1956 ए, पृ0 168)।

"लिंटन" (1955, पृ0 279) का मत है कि व्यक्तित्व का गठन "कार्य व्यवहार" के सिद्धान्त के आधार पर होता है। कार्य व्यवहार में आयु-लिंग, व्यवसाय, सम्मान, परिवार या पर्यावरण और अनुकूलता आदि के प्रभाव को प्रमुखता दी जाती है। इस प्रकार से यह स्पष्ट होता है कि प्रत्येक मानव के व्यक्तित्व विकास में उसके पारिवारिक व्यक्तित्व का अत्यधिक महत्व होता है। माता-पिता के साथ-साथ अन्य पारिवारीय सदस्य भी बच्चों के व्यवहार को तरह-तरह से प्रभावित करते हैं। इसके आधार पर बच्चों की आदतें, मनोवृत्तियाँ और रुचियों आदि का विकास होता है। उनमें समानता, सहिष्णुता, सहकारिता और सहयोग जैसे प्रजातांत्रिक गुणों का विकास होता है जो माता-पिता अपने परिवार में समायोजन से रहते हैं और अपने बच्चों के साथ प्रेम, व मानवता का व्यवहार करते हैं उनके बच्चे स्वभावतः आत्मविश्वास विकसित कर लेते हैं और अच्छे नागरिक बनते हैं। यही विकास का क्रम यौवनावस्था पर उनके व्यवसायिक चयन में भी मदद देता है (शर्मा, 1968, पृ0 585)।

भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति का प्रसार ही बच्चों में व्यवहारकुशलता (एटीकेट्स) लाता है । माता-पिता अपने "प्रतिमान" को बच्चों के समक्ष प्रस्तुत करते हैं । जिससे वे अनुकरण, संकेत और प्रयत्न तथा भूल आदि माध्यमों से आदर्श व्यक्तित्व का विकास करते हैं । इस विकास पर उनके पर्यावरण का सीधा प्रभाव तादात्मीकरण के रूप में झलकता है । इसी का प्रयोग शिक्षक व्यवसाय में छात्र/छात्रा-अध्यापक करते हैं । इस प्रकार से बच्चे परिवार द्वारा प्रस्तुत प्रतिमाओं को आत्मसात् करके नैतिक तथा सांस्कृतिक मानकों को ग्रहण कर लेते हैं (मारगेन, 1956, पृ0 239) ।

इस प्रकार से स्पष्ट होता है कि गृह पर्यावरण के द्वारा मानव की वंशानुक्रमीय विशेषताओं का प्रगटीकरण होता है जो उनके व्यक्तित्व की विशेषताओं को पूर्ण करती है । आगे चलकर यही विशेषतायें (विलक्षणतायें) उनकी व्यवसायिक अभिरुचि सम्पादन में सहयोग प्रदान करती हैं । अतः छात्र/छात्रा-अध्यापकों की प्रगति का आधार उनकी व्यक्तित्व विलक्षणतायें होती हैं, जिनको वे अपने गृह-पर्यावरण से स्वतः ही प्राप्त करते हैं । इसीलिए शोधकर्त्री ने अपने अध्ययन का क्षेत्र गृह पर्यावरण, व्यक्तित्व और शिक्षण कौशल को माना है जो बच्चों में ज्ञानात्मक, भावात्मक और गामक विकासों में समन्वय करने में सक्षम होते हैं ।

1.4 समस्या का स्पष्टीकरण :-

शोधकर्त्री ने उपर्युक्त विचारों से प्रेरित होकर अपने शोध हेतु "बुन्देलखण्ड प्रक्षेत्र के छात्र/छात्रा-अध्यापकों के गृह पर्यावरण का उनके व्यक्तित्व पार्श्वदृश्य तथा शिक्षण कौशल पर प्रभाव का अध्ययन" नामक विषय को चुना है ।

प्रस्तुत शोधकार्य सिर्फ बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय परिक्षेत्र और झाँसी मंडल के जिले - झाँसी, बाँदा, ललितपुर, हमीरपुर और जालौन आदि से सत्र 1993-94 में प्रवेश लेने वाले छात्र/छात्रा-अध्यापकों पर किया जायेगा । इनमें बी0एड0 का शिक्षण करने वाले महाविद्यालय - बुन्देलखण्ड कॉलेज, झाँसी, पं0 जवाहरलाल नेहरू

कॉलेज, बाँदा, अतर्रा कॉलेज, अतर्रा, डी0 वी0 कॉलेज, उरई तथा गाँधी कॉलेज, उरई (जालौन) आदि को अध्ययन हेतु चुना गया है । इसमें शोधकर्त्री प्रशिक्षणरत सभी छात्र/छात्रा-अध्यापकों के व्यक्तित्व निर्माण और शिक्षण दक्षता पर पारिवारिक प्रभाव अध्ययन का मूल्याँकन करेगी । इस प्रकार से शिक्षण के क्षेत्र में पर्यावरण का महत्व स्पष्ट हो सकेगा और अध्यापकों का प्रशिक्षण सही दिशा प्राप्त कर सकेगा । विषय का यही केन्द्रीय भाव है, जिसके तहत समस्या के विभिन्न आयामों का विवरण निम्न प्रकार से प्रस्तुत है :-

1.4. गृह-पर्यावरण :-

व्यक्तित्व के विकासात्मक सिद्धान्त व्यक्ति की जैव सम्भाव्यताओं को मानते हैं, लेकिन वे इस बात पर बल देते हैं कि संभाव्यता केवल सीमा निर्धारित करती है जिसमें व्यक्तित्व का निर्माण होता है । इसके साथ ही अधिगम और परिपक्वता वातावरण पर निर्भर करते हैं । परिपक्वता विकास की नींव डालती है और सीखना यह निर्धारित करता है कि व्यक्ति अपनी परिपक्व संभाव्यताओं के साथ क्या करता है । इस प्रकार से गृह-पर्यावरण के प्रभाव व्यक्ति के विकास को निरन्तरता प्रदान करते रहते हैं ताकि उसका उपयुक्त विकास हो सके । अतः बालक के लिये पर्यावरण तैयार करना सभी परिवारीय सदस्यों की जिम्मेदारी होती है । इस प्रकार से यह स्पष्ट होता है कि जीव के विकास पर वंशानुक्रम और पर्यावरण दोनों का प्रभाव पड़ता है । गृह-पर्यावरण से तात्पर्य परिवार से प्राप्त उन सभी प्रकार के पोषणों से होता है, जो बालक को प्रौढ़ एवं एक स्वस्थ नागरिक बनाने में सकारात्मक योगदान देती हैं । सभी छात्र/छात्रा के सम्पर्क में आने वाले वे सभी घटक जो प्रभाव छोड़ते हैं, और गृह से प्राप्त होते हैं तथा जिनके बीच वे वयस्कता प्राप्त करते हैं ---- गृह-पर्यावरण कहा जाता है । इसके अन्तर्गत परिवार के विचारात्मक, भावात्मक और गामक क्रियायें समाहित रहती हैं । जिनके परिणामस्वरूप वे वयस्क होकर अपनी व्यावसायिक दिशा को निश्चित करते हैं ।

1.4.2 व्यक्तित्व पार्श्वदृश्य :-

व्यक्ति का किसी उद्दीपक के प्रति विलक्षणतापूर्ण व्यवहार ही व्यक्तित्व का प्रगटीकरण होता है जो उसके व्यक्तित्व के प्रतिमान को प्रगट करता है । इन्हीं व्यक्तित्व प्रतिमानों (शीलगुण) का सम्मिलित स्वरूप व्यक्तित्व पार्श्वदृश्य कहा जाता है । अतः शोधकर्त्री के लिये व्यक्तित्व के कुछ सिद्धान्तों की व्याख्या करना अनिवार्य हो जाता है ताकि व्यक्तित्व के स्वरूप, विकास और संगठन, आद के बारे में पूर्ण जानकारी प्राप्त हो जाये ।

व्यक्तित्व सिद्धान्त :-

अभी तक व्यक्तित्व सम्बन्धी अवधारणाओं को व्यक्त करने के लिए व्यक्तित्व का कोई ऐसा सिद्धान्त नहीं है, जिसको सभी विद्वान एकमत से स्वीकार करते हों । इसका कारण यह है कि कोई सिद्धान्त व्यक्तित्व के किसी पक्ष पर बल देता है तो कोई किसी अन्य पक्ष पर, इसका परिणाम यह है कि एक सिद्धान्त महत्त्वपूर्ण होने पर भी व्यक्तित्व की व्याख्या करने में असमर्थ रहता है । इतना अवश्य मानना पड़ता है कि कुछ सिद्धान्तों के अन्दर जो परिकल्पनायें मिलती हैं उनका प्रयोगात्मक परीक्षण काफी मात्रा में हुआ है ।

व्यक्तित्व सिद्धान्तों ने मानवीय व्यवहार को केन्द्र माना है । अतः शोधकर्त्री को संक्षेप में प्रत्येक व्यक्तित्व सिद्धान्त का वर्णन करना है । वर्तमान शोध में व्यक्तित्व मापन के लिये कठिल के द्वारा विकसित प्रश्नावली को हिन्दी स्थान्तरित का प्रयोग किया गया है, अतः व्यक्तित्व का लक्षण सिद्धान्त मुख्य रूप से प्रस्तुत किया जायेगा, जो अध्ययन का आधार है । इसी सिद्धान्त पर छात्र-अध्यापक के व्यक्तित्व पार्श्वदृश्य की पहचान एंव आंकलन का आधार बनाया गया है । अतः व्यक्तित्व सिद्धान्तों को मुख्य रूप से निम्न भागों में अध्ययन किया जाता है :-

1. व्यक्तित्व का प्रकार सिद्धान्त :-

व्यक्तित्व अध्ययन के प्रारंभिक दिनों में व्यक्तित्व को "प्रकार" रूप में जानने की कोशिश की गई थी । आज के शिक्षाशास्त्री एंव मनोवैज्ञानिक इसको कोई महत्व नहीं देते है । फिर भी इतने व्यक्तित्व अध्ययनों में शारीरिक बनावट, स्वभाव को प्रकृति और जैवरसायनों के महत्व को स्पष्ट कर दिया है । इसके साथ ही प्रकार सिद्धान्त इस अवलोकन पर आश्रित है कि कुछ लोग तो कम से कम ऐसे होते हैं जिनके व्यक्तित्व कुछ प्रमुख लक्षणों के आसपास होते हैं, जैसे - महत्वाकांक्षा, गर्व, साहस, शारीरिक सुख । अतः विद्वानों ने मनुष्यों को व्यक्तित्व प्रकार के रूप में वर्गीकृत किया है ।

"क्रैश्मर" {1925} महोदय ने व्यक्तित्व का एक सिद्धान्त शारीरिक बनावट एंव गढ़न के आधार पर विकसित किया । यह सिद्धान्त काफी पुराना है । फिर भी, विद्वान इस बात पर विश्वास करते हैं कि शारीरिक संगठन, स्वास्थ्य तथा बल व्यक्तित्व को अभिव्यक्तियों को निर्धारित करते हैं । आपने एस्थनिक, एथलेटिक, और पिकनिक, आदि शारीरिक बनावट के आधार पर मनुष्यों के व्यक्तित्व को माना है । क्रैश्मर का यह सिद्धान्त आनुभविक प्रमाणों के आधार पर विकसित नहीं किया गया है, अतः यह प्रभावशाली न हो सका ।

इसके पश्चात् "शेल्डन, स्टीवन्स, तथा टकर {1940} ने व्यक्तित्व को लेकर एक पुस्तक "द वेरायटीज ऑफ ह्यूमन फिजीक" लिखी, जिसमें शारीरिक गुणों के आधार पर व्यक्तित्व को विकसित करने के प्रयत्न किये गये हैं । आपने व्यक्तियों को तीन अवयवों - एण्डोमार्फी, मैसोमर्फी, तथा एक्टोमार्फी में विभक्त किया है । एण्डोमार्फी व्यक्ति में आंत तथा अन्य अंतरंग की प्रधानता रहती है। स्थूलकाय व्यक्ति में इस अवयव की विशेष मात्रा पाई जाती है । मसोमार्फिक व्यक्ति में हड्डी एंव पेशी की प्रधानता रहती है । ऐसे व्यक्ति पहलवान, सिपाही,

खिलाड़ी, आदि होते हैं । एक्टोमार्फी व्यक्ति संवेदी तंत्रिकातंत्र पर निर्भर होते हैं । ऐसे व्यक्ति लम्बे, दुबले-पतले, और झुके हुये कंधों वाले होते हैं ।

व्यक्तित्व का आधार शरीर रसायन को भी माना गया है । इसका प्रतिपादन "विलियम्स" (1956) ने किया है । प्राचीन यूनान में भी व्यक्तियों के चार प्रकार - सनग्विसन, फलग्मेटिक, मैलिनकोलिक, तथा कोलरिक, आदि बताये गये थे जो शरीर रसायनों पर ही आधारित थे । विलियम्स महोदय ने स्वभाव का आधार शरीर-रसायन को माना है प्रत्येक मनुष्य के अंदर एक प्रकार की ही अन्तःस्त्रावी ग्रन्थियां होती हैं, किन्तु उनका आकार भिन्न-भिन्न होता है । इसीलिये व्यक्तित्व भिन्नता भी पायी जाती है । इससे यह निष्कर्ष निकला कि प्रत्येक व्यक्ति में अन्तःस्त्रावी क्रिया का अपना एक विशिष्ट प्रकार होता है ।

व्यक्तित्व प्रकार के सिद्धान्त का प्रतिपादन करने के लिये शरीर गठन, शरीर क्रियात्मकता के साथ-साथ व्यवहारिक प्रकार भी प्रमुखता रखता है । मनोवैज्ञानिक "जुग" (1923) ने व्यक्तित्व को परिभाषित करने के लिये मनोवैज्ञानिक प्रकार के सिद्धान्त को प्रतिपादित किया । आपने व्यक्तित्व को अंतर्मुखी, बहिर्मुखी और उभयमुखी रूपों में विभाजित किया है । "जुग" महोदय ने लिखा है, "अंतर्मुखी व्यक्ति की रुचि आत्मगत होती है । इसका परिणाम यह होता है कि वह आत्मनिष्ठ रूप में अपनी शक्तियों को काम में लाता है । वह अपने एकान्त जीवन में मग्न रहता है । यह कम बोलने वाला होता है । वह अपने भावों कोअन्य लोगों के सामने व्यक्त करने में असफल रहता है । वह दूसरों के समक्ष सहानुभूति भी प्रगट नहीं कर पाता है । वह शर्मीला होता है और एकान्त में कार्य करने में आनंद लेता है । दूसरों के साथ कार्य करने में उसका मन नहीं लगता है । इसके विपरीत बहिर्मुखी व्यक्तित्व समाज प्रिय तथा प्रसन्नचित्त रहताहै । उसका समय मित्रों के बीच में व्यतीत होता है । वह उदार हृदय का होता है । वह ऐसे कार्य करने में रुचि लेता है जिससे अन्य लोगों के साथ सम्पर्क स्थापित हो सके । कभी-कभी वह अच्छे कपड़े पहनकर घूमता है और पुराने विचारों का होता है ।

2. विकास का मनोविश्लेषणात्मक सिद्धान्त :-

मनोविश्लेषणात्मक सिद्धान्त के दो पक्ष हैं - एक विकासात्मक तथा दूसरा अन्योन्वक्रियात्मक ।

अभिप्राय यह है कि एक तो व्यक्ति के शैशव का उसके विकास क्रम से इतना सम्बन्ध है और दूसरा किसी विशेष स्थिति में घटित होने वाले उसके अभिप्रेरणात्मक संघर्षों और संकटकालीन अवस्थाओं से । यहाँ हम मुख्यतः इस सिद्धान्त के विकासात्मक पक्ष पर विचार करेंगे और इसके बाद आगे चलकर अन्योन्वक्रियात्मक (गतिशील) पक्ष पर । मनोविश्लेषण की दृष्टि से वृद्धि में एक धारावाहिक निरन्तरता पाई जाती है और वह शैशवकाल से ही प्रारम्भ हो जाती है । रचना की प्रक्रिया चलती रहती है, जिसकी परिणति सापेक्ष स्थायी व्यक्तित्व-संरचना में होती है । यह कार्य धीरे-धीरे होता रहता है और अन्त में परिपक्वता आ जाती है ।

संस्थापित मनोविश्लेषण के अनुसार विकास की आधारभूत परिपक्वता की रूपरेखा कुछ स्थान्तरणों के साथ काम-आवेगों का ही प्रकाशन है । इस विकास की रूपरेखा में जब तक व्यक्ति भिन्नलिंगी सामान्य काम-सम्बन्धों की परिपक्व लैंगिक अवस्था तक पहुँचता है तब तक अनेक अवस्थायें आती हैं । यहां काम का बड़ा व्यापक अर्थ लिया गया है । प्रारम्भिक तीन अवस्थायें हैं - मुखीय, गुदीय तथा लैंगिक जिनको एक साथ पूर्वजनन अवस्था कहा जाता है । इनका प्रजनन का उद्देश्य नहीं होता है । ये केवल उद्दीपन के द्वारा सुख प्रदान करने के स्त्रोत हैं । एक अर्थ में वे परिपक्व यौन-सुख के साधन हैं ।

मुखीय अवस्था लगभग एक वर्ष रहती है । सुख के स्त्रोत हैं होंठ, मुख, चूषण खाना, अंगुष्ठ चूषण । जब शिशु के दांत आ जाते हैं तब उसको काटने के द्वारा सुख मिलने लगता है । गुदीय अवस्था लगभग दूसरे वर्ष में रहती है । सुख के स्त्रोत मल धारण तथा मल विसर्जन, तथा पेशीय नियंत्रण होते हैं । लैंगिक अवस्था तीसरी वर्ष से पांचवें वर्ष तक रहती है । इसको इडिपस अवस्था भी कहा जा सकता है ।

इस अवस्था में सुख जननेन्द्रिय के उद्दीपन से मिलता है । लड़का अपनी माँ से प्रेम करने लगता है और अपने प्रतिद्वन्दी पिता से ईर्ष्या करने लगता है । लड़की अपने पिता से प्यार करने लगती है और माँ की प्रतिद्वन्दी हो जाती है । इस स्थिति को ईडिपस ग्रन्थि कहा जाता है ।

प्रत्येक अवस्था के व्यक्तित्व सम्बन्धी विकास का महत्व विभिन्न प्रकार से रूपान्तरित होने वाले प्रारम्भिक अनुभवों की वृत्ति पर आश्रित रहता है, विशेष रूप से विस्थापन के द्वारा उदाहरणार्थ, मल को रोकने का सुखी किसी भी मूल्यवान वस्तु पर अधिकार रखने के सुख में बदल जाता है । यह विस्थापन की प्रक्रिया कहलाती है, क्योंकि सुख का एक पदार्थ दूसरे को विस्थापित कर देता है । दूसरा उदाहरण भी दिया जा सकता है जिसमें विस्थापकों का क्रम स्पष्ट हो सकता है । इस उदाहरण से पता चलता है कि एक के बाद एक आने वाला विकल्प मौलिक करण से क्रमशः तादात्म्य रखता है । किसी लड़के का प्रथम प्रेम पात्र साधारणतया उसकी माता होती है । सर्वप्रथम उसको आदर्श स्त्री के रूप में देखा जाता है । लड़का यह समझ लेता है कि वह उस पर अपना पूर्ण अधिकार नहीं जमा सकता है और बाद में वह उसमें अपूर्णता भी देखता है । फलतः वह किसी ऐसे पात्र की तलाश में रहता है जिसको वह पूर्ण रूपेण प्राप्त कर सके तथा वह पूर्ण भी हो । उसके चुनाव का पात्र कोई पड़ोसी या कोई चाची-मामी हो सकती है । ये तब तक उसके वरण के पात्र बने रहते हैं जब तक वह यह नहीं जानता कि वे ही अप्राप्य तथा दोषपूर्ण हैं । आगे चलकर वह अपने से किसी अधिक आयु वाली लड़की से प्रेम करने लगता है जो संभवतः बड़ी बहिन व बड़े भाई की सखी होती है । अन्त में ये वरण उसको रुद्ध-मार्ग के समान प्रतीत होते हैं । वह कभी किसी आदर्श स्त्री के सम्बन्ध में दिवास्वप्न देखने लगता है या उसको चलचित्रों अथवा पुस्तकों में पाने का प्रयास करने लगता है । यदि वह प्रतिभाशाली होता है तो वह उसके सम्बन्ध में कविता करता है, वह ऐसे चित्र बनाता है जिनमें उसकी कल्पना साकार होती हो । एक समय आता है जब वह किसी वास्तविक स्त्री पर स्थिर हो जाता है । ऐसी स्त्री उसकी माँ से मिलती-जुलती हो सकती है । माता के स्थानापन्नों की खोज में विस्थापन के बाद विस्थापन

का ऐसा ढेर लगता जाता है, जिस पर पात्र-वरण का जाल सा बिछ जाता है । अवरुद्ध वरण से प्राप्त ऊर्जा अनेक क्रियाओं में इस प्रकार विभक्त हो जाती है मानों एक रुकी हुई नदी अनेक धाराओं में प्रवाहित हो गई हो ।

यद्यपि विश्लेषणात्मक सिद्धान्त को विकसित हुये अर्द्ध शताब्दी से कुछ ही समय अधिक हुआ है, फिर भी यह काफी विख्यात हो गया है । जिस रूप में इस सिद्धान्त की स्थापना हुई थी, उससे इसमें काफी परिवर्तन आ गया है और अब भी यह परिवर्तन की अवस्था में है । अपने संस्थापित रूप में इस सिद्धान्त ने एक व्यक्ति के व्यक्तित्व में परिवर्तन पर बल दिया है, जिस पर जैव परिपक्वता का विशेष प्रभाव था और सामाजिक एवं वातावरण का प्रभाव अत्यन्त न्यून । अनेक आलोचकों का कहना है कि वह स्कीम सर्वसामान्य बिल्कुल नहीं है, किन्तु पाश्चात्य संस्कृति में पले हुये बच्चों के लिये वह तत्व सी प्रतीत होती है । एक व्यक्ति के विकास की अवस्थाओं का अवलोकन करने से पता लगता है कि विकसित होने वाले अन्त-वैयक्तिक सम्बन्ध बराबर मिलते हैं । मुखीय अवस्था में शिशु का प्रथम सम्बन्ध माता के साथ होता है, जिसका सामाजिक परिणाम यह होगा कि समाज में अन्य व्यक्तियों के साथ बच्चा या तो अपने को सुरक्षित अनुभव करेगा या असुरक्षित । गुदीय अवस्था में दूसरा सम्बन्ध उन व्यक्तियों से होता है जो शिशु को शौच का प्रशिक्षण देते हैं । इस काल के दण्ड और पुरस्कार आगामी सामाजिक अन्योन्यक्रिया होती है । लैंगिक ईडिप्स अवस्था विशेष महत्त्वपूर्ण होती है, क्योंकि इसमें बच्चों को सामाजिक सम्बन्धों का ज्ञान हो जाता है । इसमें एक ही समय में दो से अधिक व्यक्तियों के साथ सम्बन्ध रहता है, कम से कम माता, पिता और बच्चा एवं दूसरे सहोदर भी हो सकते हैं । ऐसा कहा जाता है कि ईडिप्स ईर्ष्या इसलिए उत्पन्न होती है कि माता और पिता में एक-दूसरे के प्रति जो विशेष सम्बन्ध होता है, उसको बच्चा भांप लेता है किन्तु वह उससे वंचित रहता है । ईडिप्स समाधान बच्चे को इस बात का ज्ञान कराने से होता है कि सम्बन्ध अनेक प्रकार के होते हैं तथा माता और पिता में परस्पर विशेष सम्बन्ध होने मात्र से बच्चा तिरस्कृत नहीं हो

जाता है । माता और पिता के साथ जो तादात्म्य होता है उसमें बड़ी जटिलता होती है और बच्चा माता-पिता का अनुसरण भी करता है । विकास की इस अवस्था में जो समस्यायें उठती हैं, उनका बच्चे के आगामी जीवन में बहुत अच्छा समाधान हो जाता है ।

काम-प्रसुप्ति काल पांच वर्ष से प्रौढ़ावस्था तक रहता है । संस्थापित मनोविश्लेषणात्मक सिद्धान्त काम-प्रसुप्तिकाल की समस्याओं को ठीक तरह से सुलझा नहीं सका, क्योंकि इसमें बच्चे द्वारा बाल्यावस्था में सीखी हुई महत्वपूर्ण बातों की बहुत कुछ उपेक्षा कर दी गई थी तथा उस समय की बच्चे की संतुष्टियों की व्याख्या इस प्रकार की गई कि वे उसके यौन सुख की स्थापन्न हैं, जबकि यौन इच्छायें बच्चे द्वारा दमित कर दी गई थीं । प्रौढ़ावस्था में ईडिप्स संघर्ष अस्थायी रूप में पुनः उभर आते हैं, माता-पिता के लिये उनके अन्दर ईर्ष्या का भाव नये सिरे से प्रकट हो जाता है और यदि सब ठीक रहा तो वह माता-पिता से मुक्ति प्राप्त कर लेता है और अपनी अवस्था के किसी ऐसे पात्र को ढूँढ लेता है, जिसके साथ उसकी काम-वासना की तृप्ति हो सके ।

एरिक्सन ने मनोविश्लेषण के अन्तर्गत संस्थापित सिद्धान्त की कमियों को सुधारने एंव विकास को हर एक अवस्था पर जो वातावरण सम्बन्धी और सामाजिक समायोजन की आवश्यकता होती है, उसे लाने का प्रयत्न किया । उन्होंने परि-पक्वता की ऐसी एक स्कीम तैयार की, जिसमें मनोलैंगिक अवस्थाओं को कुछ तरमीम करके दिया है । किन्तु हर एक अवस्था के साथ वे मनः सामाजिक संकटों की एक-रूपता करते हैं । यदि उनका सामना सफलता से किया गया, तो मनोवैज्ञानिक विकास की परिपक्वता आ जाती है और यदि उनका सामना असफलता से किया गया तो मनस्तानीय अवशेष छोड़ जाते हैं । उनकी स्कीम अगले पृष्ठ पर दी गई है।

एरिक्सन की इस स्कीम को देखने से पता चलता है कि हर एक मनो-सामाजिक संकट शब्दों के युग्मों में दिखायागया है जिनमें से एक शब्द अनुकूल परिणाम का द्योतक है और दूसरा प्रतिकूल परिणाम का । यह सिद्धान्त प्रतिपादित करता है कि हमारे सम्पूर्ण जीवन में एक संकट के हर एक प्रारम्भिक जनयोजन के परिणाम

अपने साथ रहते हैं । वे एक प्रकार से समस्या का समाधान होते हैं जिनसे हम निरन्तर सीखते रहते हैं । इसका अन्तिम परिणाम यह होता है कि इन विकास के परिवर्तनों के द्वारा व्यक्तित्व संरचना का जो निर्माण होता है, वह अद्वितीय होता है ।

हिलगार्ड के अनुसार एरिक्सन की उक्त स्कीम संस्थापित मनोलैंगिक विकास प्रतिरूप की पूरक है । फलत: वह बड़ी प्रभावशाली सिद्ध हुयी है । इसमें कुछ शब्द एक दूसरे के बिल्कुल विपरीत हैं, जैसे विश्वास बनाम अविश्वास । कुछ शब्दों को सर्वथा भिन्न संदर्भों से लिया गया है, जैसे स्वायत्तता बनाम लज्जा तथा शंका। हिलगार्ड का कहना है कि एरिक्सन की उपर्युक्त स्कीम वैज्ञानिक सिद्धान्त का भाग नहीं बन सकती है, जब तक कि इसको एक सुन्दर क्रम में न रखा जाये ।

यह बात कि संकट का सामना करने के पूर्णकालीन ढंग वर्तमान स्थिति में भी बने रहते हैं, स्थिरीकरण के मनोविश्लेषणात्मक प्रत्यय में भी बताई गई है । स्थिरीकरण से तात्पर्य अवरुद्ध विकास से है । यह सम्भव है कि एक व्यक्ति विकास की किसी अवस्था पर स्थिरीकरण द्वारा अपरिपक्व रह गया हो, जिससे उसके प्रौढ़ जीवन के व्यवहार में उस अवस्था की अतिशय अभिव्यक्ति होती रहती है । इस प्रकार का अवरुद्ध विकास केवल आंशिक होता है, किन्तु ऐसा व्यक्ति दूसरे अर्थ में पूर्णरूपेण विकसित हो सकता है । स्थिरीकरण से चरित्र संरचना के रूपों का विकास होता है, अथवा व्यक्तित्व संरचना विकसित होती है, जो कि उस अवस्था से सम्बन्धित होती है, जिस पर व्यक्ति का स्थिरीकरण होता है । व्यक्तित्व संरचना के दो रूप, जिनका विस्तृत अध्ययन हुआ है, मनोविश्लेषणात्मक व्याख्या करने के लिए उपस्थित किये जा सकते हैं और वे हैं : बाध्य व्यक्तित्व तथा सत्तावादी व्यक्तित्व ।

बाध्य व्यक्तित्व में अतिशय स्वच्छता, व्यवस्था, हठ तथा कृपणता पाई जाती है । कुछ बातों में उसका व्यवहार पुनरावृत्ति तथा कर्मकांडपरक हो जाता है । मनोविश्लेषकों का यह विश्वास था कि ऐसी व्यक्तित्व संरचना इस कारण

हुई थी कि प्रारम्भिक शैशव काल में उसको अतिशय सफाई में रखा जाता था, अतः उन्होंने विकास की उस अवस्था के बाद उसको गुदीय चरित्र कहना प्रारम्भ कर दिया । इस दृष्टि से यदि गुदीय अवस्था से सम्बन्धित संकटों का नियोजन सफलतापूर्वक नहीं होता तो अब शेष स्थिरीकरणों की अवस्था आ जाती है, अर्थात् इस अवस्था के अतिशय अवशेष उसके प्रौढ़ावस्था के व्यवहार को प्रभावित करते रहते हैं । बाद के अनुसंधानकर्ताओं ने इस प्रकार के व्यक्तित्व के प्रतिरूप के सरलीकरण पर आपत्ति उठाई है, यद्यपि उन्होंने इसकी सत्ता को स्वीकार नहीं किया है । उनका कहना है कि जो माता-पिता अपने बच्चों को अतिशय स्वच्छता का प्रशिक्षण देते हैं, वे ही प्रारम्भिक शैशवकाल के बाद उनसे अनुरूपता, समय की पाबन्दी, आदि की आशा कर सकते हैं । हिलगार्ड इस बात को मानते हैं कि यदि बच्चे को निरन्तर प्रशिक्षण दिया जाये, तो उसकी इस प्रकार की भी व्यक्तित्व संरचना बन सकती है ।

सत्तावादी व्यक्तित्व एक दूसरी ही व्यक्तित्व संरचना है, जिसके विषय में अनेक अध्ययन हो चुके हैं । ऐसा कहा जाता है कि जब माता-पिता बच्चे को अत्यन्त तिरस्कृत कर देते हैं या उस पर अपना प्रभुत्व स्थापित करते हैं, जिससे उसकी शत्रुता दमित हो जाती है, तब सत्तावादी व्यक्तित्व की उत्पत्ति होती है । अपनी प्रौढ़ावस्था में छोटे-छोटे समूहों पर प्रहार करने में वह शत्रुता प्रकट होती है । इस प्रकार के व्यक्तित्व प्रतिरूप में रूढ़ व्यवहार, अन्ध-विश्वास, विध्वंसकता, दोषानुसंधान, शक्तिशाली होने की इच्छा तथा कामवासना सम्मिलित हैं ।

अधिगम सिद्धान्त - अधिगम सिद्धान्त भी इस बात को मानता है कि एक व्यक्ति अपने बाद के जीवन में जिस प्रकार समस्या-समाधान करता है उसका उसके प्रारम्भिक विकासात्मक अनुभवों तथा प्रारम्भिक अनुभव के अवशेषों से सम्बन्ध होता है । अतः यह कहना गलत न होगा कि वे सिद्धान्त मनोविश्लेषणात्मक सिद्धान्तों के साथ परस्पर व्यापी हैं । इन दोनों प्रकार के सिद्धान्तों में भेद यह है कि अधिगम सिद्धान्तों के समर्थक यह मानते हैं कि दण्ड और पुरस्कार के विशिष्ट अनुभव

व्यक्तित्व के विकास की रचना करते हैं किन्तु संस्थापित मनोविश्लेषक यह मानते हैं कि विभिन्न संस्कृतियों में जो सर्वसामान्य प्रतिरूप पाये जाते हैं उनका विकास पर प्रभाव पड़े बिना नहीं रहता । ये दोनों सिद्धान्त जहाँ तक वास्तविकता का वर्णन करते हैं वहाँ तक उनमें परस्पर व्याप्ति पायी जाती है ।

अधिगम सिद्धान्तों के कुछ ऐसे समर्थक भी हैं जिन्होंने फ्रॉयड के सिद्धान्तों को बहुत कुछ माना है किन्तु उनको अधिगम के रूप में ढालने का प्रयत्न किया है । यह बात "डोलार्ड तथा मिलर" एंव "व्हाइटिंग तथा चाइल्ड" दोनों के सम्बन्ध में कही जा सकती है ।

डोलार्ड तथा मिलर का कहना है कि अधिगम की प्रक्रिया में चार महत्त्व-पूर्ण प्रयत्न हैं - चालना, संकेत, अनुक्रिया तथा पुनर्बलन ।

चालना इतना तीव्र उद्दीपक होती है जिससे व्यक्ति कार्य करने के लिए प्रेरित हो जाता है । यह व्यक्ति के व्यवहार को शक्ति प्रदान करती है किन्तु यह स्वयं उसको दिशा नहीं दिखाती । यदि कोई उद्दीपक विशेष तीव्र हो जाता है तो वह चालना का रूप धारण कर सकता है । कुछ चालनाओं को जन्मजात अथवा मुख्य चालनायें कहा जाता है, और इनका प्रायः शरीर क्रियात्मक प्रक्रियाओं से सम्बन्ध होता है । इनके उदाहरण पीड़ा, भूख, प्यास तथा काम हैं । मुख्य चाल-नाओं के अतिरिक्त गौण चालनायें भी होती हैं । अपने विकास के क्रम में एक व्यक्ति अनेक प्रकार की गौण चालनायें विकसित कर लेता है ।

अनुक्रिया एक स्थिति में एक व्यक्ति का व्यवहार होती है । वह पेशीय होती है । जैसे नृत्य करना, मौखिक होती है, जैसे भाषा सीखना तथा संवेगात्मक भी होती है, जैसे किसी वस्तु को देखकर त्रस्त होना । कोई व्यक्ति अनुक्रियायें तब तक नहीं सीखता जब तक उसको पुरस्कार के द्वारा सन्तोष नहीं मिलता । पुरस्कार मिलने पर, उसकी अनुक्रिया का पुनर्बलन हो जाता है । जब उसका लगातार पुनर्बलन

होता रहता है तब वे पुनर्बलन एकीकृत आदत उत्पन्न कर देते हैं । यदि पुरस्कार के स्थान पर व्यक्ति को दण्ड मिलता है तो वह अनुक्रिया नहीं करता ।

संकेत - ऐसा उद्दीपक है जो प्राणी की अनुक्रिया का मार्गप्रदर्शन करता है । चालना उद्दीपक प्राणी को क्रियाशील बना देते हैं, किन्तु संकेत अनुक्रिया का वास्तविक स्वरूप निर्धारित करते हैं । संकेत निर्धारित करते हैं कि वह अनुक्रिया कब करेगा, वह अनुक्रिया कहां करेगा और वह कौन सी अनुक्रिया करेगा ।

डोलार्ड तथा मिलर ने अधिगम तथा विकास की प्रक्रिया में विशेष रूचि ली है । अत: यह स्वाभाविक है कि उन्होंने व्यक्तित्व की संरचना में कम रूचि दिखाई है । इतना अवश्य कहा है कि व्यक्तित्व के संरचनात्मक पक्षों में आदत का प्रमुख स्थान है । आदत उद्दीपक तथा अनुक्रिया के बीच एक सन्धि है । यद्यपि व्यक्तित्व आदतों का बना होता है फिर भी उनकी विशेष संरचना उन अद्वितीय घटनाओं पर निर्भर रहेगी जिनमें व्यक्ति को रहना पड़ता है ।

व्यक्तित्व की गत्यात्मकता व्यक्ति की चालनाओं से प्रकट होती है । व्यक्तित्व की संरचना तथा गत्यात्मकता के अतिरिक्त व्यक्तित्व के विकास का भी प्रश्न आता है । इसमें अधिगम की प्रक्रिया का विशेष महत्त्व है । अधिगम की प्रक्रिया में जो महत्वपूर्ण प्रत्यय सम्मिलित हैं उनका वर्णन हम अभी कर चुके हैं ।

व्हाइटिंग तथा चाइल्ड ने अभिप्रेरणात्मक प्रणालियों का विशेष अध्ययन किया है । उन्होंने देखा है कि पोषण, शौच, प्रशिक्षण, काम, आक्रमण तथा परि-निर्भरता के क्या परिणाम होते हैं । व्हाइटिंग तथा चाइल्ड के दृष्टिकोण से इनमें से व्यवहार का प्रत्येक पक्ष समाजीकरण का क्षेत्र है किन्तु एक मनोविश्लेषण के लिये इनमें से प्रत्येक मनोलैंगिक विकास का भी क्षेत्र है ।

यह प्रश्न हो सकता है कि अधिगम सिद्धान्तों तथा मनोविश्लेषणात्मक सिद्धान्तों में समानता और अन्तर किस सीमा तक है, संस्थापित मनोविश्लेषण, काम तथा आक्रमण को आधारभूत चालनायें मानता है किन्तु अधिगम सिद्धान्त उनमें भूख,

प्यास तथा पीड़ा भी सम्मिलित करता है । विकास की जिन अवस्थाओं को मनो-विश्लेषक मनोलैंगिक कहता है उनको अधिगम सिद्धान्त भी मानते हैं किन्तु उनकी दृष्टि से वे केवल काम पर आश्रित न रहकर परिपक्वता के अन्य पक्षों पर भी निर्भर रहते हैं । इसके साथ यह बात भी है कि एक विशेष संस्कृति में माता-पिता द्वारा बच्चे को जो दण्ड और पुरस्कार दिये जाते हैं उनका उसकी आदत के निर्माण में महत्त्वपूर्ण प्रभाव रहता है । चेतन तथा अचेतन का भेद ऐसा ही है जैसा कि किसी वस्तु का नाम रखना अथवा नाम न रखना । यदि एक व्यक्ति किसी अनुभव का नाम रख सकता है और उसके सम्बन्ध में कुछ बात कर सकता है तो उस अनुभव को चेतन कहा जाता है और यदि वह उसके सम्बन्ध में अस्पष्ट ज्ञान रखता है, उसका नाम नहीं रख सकता और उसके विषय में बात नहीं कर सकता तो उसके प्रभाव अचेतन रूप से पड़ते हैं । नाम रखना सीख लेना स्वयं एक आदत की घटना है ।

अधिगम तथा मनोविश्लेषणात्मक सिद्धान्तों में जो समानता है वह यह है कि वे वर्तमान की व्याख्या अतीत के माध्यम से करते हैं । एक व्यक्ति का अतीत स्मृतियों तथा अनुभवों का अवशेष प्रदान करता है । जिनका उपयोग वह वर्तमान में समस्या आने पर कर सकता है । यह कहना अनुचित न होगा कि हमारे व्यक्तित्व का विकास अतीत काल के अनुभवों द्वारा ही हुआ है । हम आज की समस्याओं का सामना उसी प्रकार करने का प्रयत्न करते हैं जिस प्रकार कि हम उनका सामना अपने अतीत में करते रहे हैं ।

कार्य सिद्धान्त :-

कार्य सिद्धान्त यह प्रतिपादन करते हैं कि व्यक्तियों के जिस प्रकार के कार्य होते हैं, उसी प्रकार से ये समाज की आशाओं को पूरा करते हैं । कार्य अनेक प्रकार के होते हैं, जैसे बच्चे का कार्य, माता-पिता का कार्य, मनुष्य का कार्य, स्त्री का कार्य तथा एक नागरिक का कार्य । ये सिद्धान्त अधिगम सिद्धान्तों से इस अर्थ में मिलते-जुलते हैं कि एक जैव व्यक्ति विभिन्न प्रकार के कार्यों के लिये अपने को अनुकूल

बना लेता है । यह स्पष्ट है कि उसको अपनी संस्कृति में अनुभव द्वारा अपना कार्य-व्यवहार अर्जित करना पड़ता है । इन दोनों सिद्धान्तों में भेद यह है कि अधिगम सिद्धान्तों के दृष्टिकोण से व्यक्ति के व्यवहार में जो सातत्य पाया जाता है वह मुख्य रूप से आदत के कारण होता है किन्तु कार्य सिद्धान्तों के अनुसार सातत्य बहुत कुछ इसलिये होता है कि उसमें कार्य की स्थिरता पाई जाती है । अतः जितना समाज का स्थाई होना महत्वपूर्ण है उतना ही व्यक्ति की आदतों का स्थाई रहना आवश्यक है ।

यहां यह बता देना आवश्यक है कि कार्य-व्यवहार समाज द्वारा स्थापित कार्य स्थानों पर निर्भर रहता है । अभिप्राय यह है कि अन्य व्यक्तियों के साथ व्यवहार करने के कुछ ढंग उनके विभिन्न प्रकार के स्थानों द्वारा निर्धारित होते हैं । लिंटन के अनुसार सरलतम समाज में भी पांच प्रकार के स्थान पाये जाते हैं : §1§ आयु-लिंग स्थान, §2§ व्यावसायिक स्थान, §3§ सम्मान स्थान, §4§ परिवार, गौत्र अथवा घरेलू स्थान, तथा §5§ अनुकूलता अथवा सामान्य रुचियों पर आधारित संस्था समूहों में स्थान । इन पांचों के उदाहरण आसानी से दिये जा सकते हैं । आयु-लिंग स्थान प्रायः सब समाजों में पाये जाते हैं । इनमें से सात को स्पष्ट रूप से जान लिया गया है । जैसे -शिशु का स्थान, लड़के का स्थान, लड़की का स्थान, नवयुवक का स्थान, नवयुवती का स्थान, वृद्ध पुरुष का स्थान, तथा वृद्धा का स्थान । व्यावसायिक स्थान कम से कम हर समाज में मिलते हैं, जैसे - दर्जी, व्यापारी । सम्मान स्थान भी अनेक होते हैं, जैसे - मुखिया या सेवक । परिवार, गौत्र अथवा घरेलू स्थान का उदाहरण चतुर्वेदी परिवार का एक सदस्य हो सकता है । अनुकूलता अथवा सामान्य रुचियों पर आधारित संस्था समूहों में स्थान के उदाहरण रुचि समूहों की सदस्यता अथवा विरोधी दल, आदि है ।

समाज में जिसको जैसा स्थान मिला हुआ है उसको वैसा ही कार्य करना चाहिए । कुछ व्यवहार विहित व्यवहार कहलाते हैं, कुछ अनुमोदित होते है तथा कुछ निषिद्ध होते हैं । उदाहरणार्थ, माता-पिता को अपना कार्य पूरा करने के लिए यह अनिवार्य है कि वे अपने बच्चों का पालन-पोषण करें तथा उनको परेशान न करें ।

इसी प्रकार एक वैद्य के कार्य का यह आवश्यक अंग है कि वह अपने रोगियों का इलाज ठीक प्रकार से करे । हमारे समाज में पगड़ी पहनना अनुमोदित है किन्तु यह आवश्यक नहीं कि एक व्यक्ति पगड़ी पहने । अतः विहित तथा अनुमोदित व्यवहार में अन्तर है । इन दोनों से निषिद्ध व्यवहार भिन्न है, जैसे, एक वैद्य का यह व्यवहार नहीं होना चाहिए कि वह अपने रोगियों को जहर दे । यह निषिद्ध कार्य है ।

कार्य-व्यवहार के द्वारा व्यक्तित्व को अध्ययन करने की सम्भावना आंशिक रूप से उपयुक्त ही है क्योंकि अध्ययन करने योग्य व्यवहार के जो प्रतिचयन हैं वे कुछ सीमा तक कार्य द्वारा विशेषीकृत होते हैं । उदाहरणार्थ, माता का जो व्यवहार अपने बच्चे के प्रति होता है, स्त्री का जो व्यवहार पति के साथ होता है तथा स्वामी का जो व्यवहार सेवक के प्रति होता है, वह संगत ही है ।

व्यक्तित्व विकास का कार्य सिद्धान्त संक्षेप में इस प्रकार है । शिशु कुछ पूर्व-व्यवस्थित स्थितियों में जन्म लेता है । जैसे - परिवार, लिंग तथा राष्ट्रीयता। उसकी स्वतन्त्रता इन स्थितियों द्वारा सीमित हो जाती है क्योंकि उसकी बहुत सी इच्छायें जन्म लेने से पहले ही निर्धारित हो जाती हैं, जैसे वह कहाँ रहेगा, उसको कौन-सी भाषा सीखनी होगी, आदि । जब वह उन पर निर्भर रहता है तब उसके माता-पिता उसको इन पूर्व स्थापित स्थितियों के अनुकूल व्यवहार सिखाने के लिये बाध्य हो जाते हैं । जिस समाज में उसका जन्म हुआ है उसके आश्रित होने से उसकी अपनी स्थितियों का चयन करना पड़ता है, जैसे - उसे संगीत सीखना चाहिए अथवा नहीं, उसे व्यायाम के कार्यों में भाग लेना चाहिए अथवा नहीं, तथा उसे अपने जीवन में क्या व्यवसाय करना चाहिए । इन क्षेत्रों में भी उसके सामाजिक वातावरण से ऐसे बड़े-बड़े दबाव पड़ सकते हैं जो उसकी इच्छाओं को सीमित कर देते हैं किन्तु वह प्रत्येक कार्य में अपनी उस स्थिति की छाप लगा देता है जिसमें वह व्यवहार करता है । सारांश यह है कि उसका व्यक्तित्व उसके कार्य-व्यवहार का संगत रूप है ।

विकासात्मक सिद्धान्तों का यह प्रतिपादन उचित लगता है कि व्यक्ति जिस संस्कृति में रहता है उसमें सीखता है । फलतः यह कहना गलत न होगा कि कोई भी प्रौढ़ व्यक्ति अपने विकास का परिणाम होता है । इससे समस्या का समाधान नहीं होता । कुछ बातें अभी ऐसी हैं जिनका हल नहीं हो सका है । वे हैं -

1. बचपन के उत्तरकालीन वर्षों की तुलना में प्रारम्भिक वर्षों का महत्त्व क्या है ? मनोविश्लेषणात्मक सिद्धान्त कुछ अधिगम सिद्धान्त भी इस बात पर बल देते हैं कि व्यक्तित्व के निर्माण में प्रारम्भिक वर्षों का विशेष प्रभाव पड़ता है । हम यह नहीं कह सकते कि प्रभाव किस प्रकार प्रतिवर्ती है ।

2. अधिगम की अपेक्षा शरीर गठन की देन का सापेक्ष महत्व क्या है ? इस बात का जितना महत्व बुद्धि के क्षेत्र में है उतना व्यक्तित्व के अध्ययन में भी है । यदि कुछ लोगों के कहने के अनुसार यह मान भी लिया जाये कि शरीर रचना तथा अन्तः स्रावी ग्रंथियों का सन्तुलन महत्त्वपूर्ण है, तो यह प्रश्न होता है कि वे किस प्रकार महत्त्वपूर्ण हैं ।

3. क्या विकास में ऐसी सातत्व प्रक्रिया है जिसमें क्रमिक परिपक्वता, क्रमिक अर्जित आदतों के साथ अन्योन्य-क्रिया करती रहती है, अथवा क्या विकास में निश्चित परिपक्वता की अवस्थाओं के साथ असातत्व पाया जाता है । जैसा कि मनोलैंगिक विकास के मनोविश्लेषणात्मक सिद्धान्त से विदित है ।

4. वैयक्तिक आदतों के सातत्व की तुलना में सामाजिक संरचना की स्थिरता द्वारा व्यक्तित्व का सातत्व किस सीमा तक बना रह सकता है । अधिगम तथा कार्य सिद्धान्तों में यह विवाद का विषय है ।

5. विकासात्मक सिद्धान्त में व्यक्तित्व का उचित मूल्यांकन किस प्रकार किया जा सकता है ।

3. व्यक्तित्व-गत्यात्मकता के सिद्धान्त :-

व्यक्तित्व को एक दूसरे ढंग से भी देखा जा सकता है । एक व्यक्ति वर्तमान काल में जो व्यवहार करता है वह उसकी अनेक प्रवृत्तियों की अन्योन्यक्रिया का परिणाम होता है और वे प्रायः संघर्ष करती रहती है । यह संघर्ष सदैव वर्तमान काल में ही होते हैं, भले ही उनका अतीत का स्त्रोत कुछ रहा हो । व्यक्तित्व-गत्यात्मकता के सिद्धान्त व्यक्ति के वर्तमान काल के संघर्षों के साथ सम्बन्ध रखते हैं । वे विकासात्मक सिद्धान्त न होकर अन्योन्यक्रियात्मक सिद्धान्त हैं । इस बात से हमारे सामने एक समस्या खड़ी हो जाती है । क्योंकि ऐसे अनेक सिद्धान्त हैं जो कि दृष्टिकोण से विकासात्मक हैं किन्तु दूसरे दृष्टिकोण से उनका सम्बन्ध व्यक्तित्व-गत्यात्मकता से है । यह बात मनोविश्लेषण तथा अधिगम सिद्धान्तों के सम्बन्ध में सत्य है । जो भी हो, यहाँ हम उन सिद्धान्तों का विवेचन करेंगे जो व्यक्तित्व की गत्यात्मकता से सम्बन्धित है ।

व्यक्तित्व-गत्यात्मकता का विश्लेषणात्मक सिद्धान्त :-

फ्रॉयड का विश्लेषणात्मक सिद्धान्त मुख्यतः गत्यात्मक है । इसका एक रूप विकासात्मक भी है जिसका वर्णन पहले किया जा चुका है । व्यक्तित्व-गत्यात्मकता का सिद्धान्त समकालीन व्यक्तित्व संगठन तथा कार्य के रूप के साथ भी सम्बन्ध रखता है जबकि विकास का विश्लेषणात्मक सिद्धान्त व्यक्तित्व में ऐतिहासिक स्त्रोत से सम्बन्धित है ।

फ्रॉयड ने मनुष्य को शक्तियों की गत्यात्मक व्यवस्था माना है । व्यक्तित्व तीन मुख्य व्यवस्थाओं का बना होता है - इड, अहं तथा पराहं । मनोवैज्ञानिक बलों की तीन व्यवस्थायें गत्यात्मक रूप से परस्पर क्रिया करके व्यक्ति का व्यवहार उत्पन्न करती हैं ।

यद्यपि इनमें से प्रत्येक व्यक्तित्व का अंश हैं और प्रत्येक का अपना-अपना विकासात्मक इतिहास है फिर भी यहाँ हम उन अन्योन्यक्रियाओं से सम्बन्धित हैं जो प्रौढ़ व्यक्तित्व में हुआ करती हैं । इड पूर्णरूप से अचेतन होता है । यह प्रमुखत: वासना द्वारा निर्मित होता है और जन्मजात होता है । इसका बाह्य पर्यावरण से सीधा सम्बन्ध नहीं होता और यह उससे पृथक् रहता है, इसके न इन्द्रियाँ होती हैं और न पेशियाँ । यह कुछ नहीं जानता और न अपने आप कुछ कर सकता है । यह एक प्रकार की काम वासना है जिसकी न कोई संरचना होती है और न कोई व्यवस्था । इड कभी नहीं बदलता और सुख के नियम का पालन करता है । इसका केवल एक विकास है और वह अहं है, जो प्रारम्भ में अविकसित होता है और इड को बाहर आने से नहीं रोकता । जब अहं अनुभव द्वारा सीख जाता है तब वह इड पर शासन करने लगता है । इसका कार्य यथासम्भव इड से मूल-प्रवृत्तियों को ग्रहण करना है और उन्हें वास्तविक नियम के अनुरूप कर देना है । जब वह इड की इच्छा का दमन करता है, तब वह दमित इच्छा अन्दर चली जाती है और इड से जुड़ जाती है । इसका परिणाम यह होता है कि इड पहले से भी ज्यादा दु:खदायी हो जाता है ।

वस्तुत: अहं हमारे सामान्य सामाजिक अहं का प्रतिरूप है । जो कि संसार में क्रियाशील रहता है । यथासम्भव विवेकशील होने के कारण दूसरे लोगों के साथ अनुकूलता कर लेता है । यह वास्तविकता-नियम का पालन करता है ।

अभी हमने तृतीय अवयव पराहं का विवेचन नहीं किया है । सामाजिक वास्तविकता के साथ अहं के जो अनुभव होते हैं उनमें पराहं का विकास होता है । पराहं अन्तरात्मा का समानार्थक है । पराहं यह कहता है कि "ऐसा किया जायेगा और ऐसा न किया जायेगा" किन्तु ऐसा करने का कारण नहीं बता सकता । प्रारम्भिक बचपन के उत्पन्न अहं के आदर्शों के अनुसार वह हमसे कार्य कराता रहता है, विशेषत: माता-पिता के निषेधों के द्वारा ।

व्यक्तित्व की गत्यात्मक व्याख्या की दृष्टि से मूल विचार यह है कि व्यक्तित्व के वे तीनों अनुमित अवयव प्रायः कलह की अवस्था में रहते हैं। अहं उन सन्तुष्टियों को टालता रहता है जिसकी तुष्टि इड तुरन्त चाहता है। पराहं, इड तथा अहं दोनों से विरोध करता है क्योंकि उनका नैतिक स्तर इतना ऊँचा नहीं होता जितना पराहं का। व्यक्तित्व के इन तीन अवयवों के विषय में यह कहते हुए कुछ शंका होती है कि एक व्यक्ति के अन्दर तीन व्यक्तियों का विरोध चलता रहता है किन्तु अधिक क्या कहें व्यक्तित्व का इन तीन भागों में वर्गीकरण उन विरोधी प्रवृत्तियों की ओर ध्यान आकर्षित करता है, जो एक ही व्यक्ति में सामान्य रूप से पाई जाती हैं।

व्यक्तित्व के सम्बन्ध में यह कहा जा सकता है कि फ्रॉयड के विचारों का उस पर विशेष प्रभाव पड़ा। उनके सिद्धान्त ने जैव निर्धारकों तथा सामाजिक निर्धारकों को एक स्थान दिया है। इसी सिद्धान्त से एडलर, यंग तथा अन्य मनोवैज्ञानिकों ने प्रेरणा ली।

लैंबिन का क्षेत्र सिद्धान्त :-

व्यक्तित्व-गत्यात्मकता का दूसरा सिद्धान्त लैंबिन का है जिसके दृष्टिकोण से एक व्यक्ति के लिए उसका अतीत इतना महत्वपूर्ण नहीं जितनी उसकी समकालीन स्थिति। लैंबिन ने अपने "स्थान-मनोविज्ञान" में क्षेत्र सिद्धान्त पर बल दिया है। इस प्रकार उन्होंने इस प्रत्यय का मनोविज्ञान में प्रयोग किया। क्षेत्र सिद्धान्त यह प्रतिपादित करता है कि एक क्षेत्र के किसी भाग का व्यवहार उस सम्पूर्ण क्षेत्र से प्रभावित रहता है जिसमें उसका भाग होता है। दूसरे शब्दों में, इस सिद्धान्त के अनुसार जिन स्थितियों में एक व्यक्ति होता है, वे सदैव ऐसी जटिलपूर्ण होती हैं, जिनका व्यक्ति प्रत्यक्षीकरण करता है और अपने लिये उनकी व्याख्या करता है।

लैंबिन व्यक्ति अथवा जीनोटाइप को महत्व देते हैं, न कि उस पद्धति को जिसमें सांख्यिकीय औसत अथवा फीनोटाइप को बल दिया जाता है। उनका सूत्र

इस प्रकार है - बी = स्फ (पी ई) जिसमें बी, व्यवहार के लिये है, स्फ, कार्य के लिए, पी, व्यक्ति के लिए तथा ई, पूर्ण पर्यावरण सम्बन्धी स्थिति के लिये ।

लैविन ने क्षेत्र सिद्धान्त का समर्थन किया है किन्तु वर्ग-सिद्धान्त की आलोचना की है जिसके अनुसार किसी वस्तु का व्यवहार इस बात से अनिर्धारित होता है कि वह किस वर्ग की है । वर्ग-सिद्धान्त अरस्तू के विचार के अनुरूप है, क्योंकि उनका यह मत था कि वस्तु नीचे इस कारण गिरती थी कि वह "भारी" वर्ग से सम्बन्धित थी । उन्होंने अरस्तू के इस विचार को गैलीलियो के विचार के विरुद्ध बताया है जिसके अनुसार एक वस्तु विभिन्न बलों के कारण नीचे गिरती थी, न कि इसलिये कि उसमें कुछ आन्तरिक तत्व पाये जाते थे । लैविन के दृष्टिकोण से किसी व्यक्ति की व्याख्या उसके लक्षणों के आधार पर करना सदोषी वर्ग विचार का उदाहरण है । उन्होंने व्यक्ति तथा उसकी स्थिति का अध्ययन करना उपयुक्त समझा ।

अस्थायी स्थिति जिसमें व्यक्ति होता है उसको लैविन ने जीवन-स्थान माना है । जीवन-स्थान में पर्यावरण की वे स्थितियाँ सम्मिलित होती हैं जिनके प्रति व्यक्ति प्रतिक्रिया करता है, जैसे वे व्यक्ति जिनसे वह मिलता है, वे वस्तयें जिनको वह प्रत्यक्ष करता है, तथा उसके निजी विचार एंव कल्पनायें । अभिप्राय यह है कि जीवन-स्थान मनोवैज्ञानिक संसार को कहते हैं, यह सम्पूर्ण मनोवैज्ञानिक वास्तविकता होती है । इसमें वे सब तथ्य सम्मिलित होते हैं, जो व्यक्ति के व्यवहार को निर्धारित करते हैं । लैविन की दृष्टि से गत्यात्मक मनोविज्ञान का कार्य यह है कि जीवन-स्थान में स्थित सम्पूर्ण मनोवैज्ञानिक तथ्यों से व्यक्ति के व्यवहार को ज्ञात करे । कभी-कभी व्यक्ति को ऐसा बिन्दु जाना जाता है जो जीवन-स्थान में भ्रमण करता है और यहाँ पर जो बल होते हैं उनसे प्रभावित रहता है । इस प्रकार व्यक्ति उन कार्यों से घृणा करता है जिनको वह नहीं चाहता, उनकी ओर आकर्षित होता है जिनको वह चाहता है, अवरोधों का सामना करता है, इत्यादि के कथन जीवन-स्थान में "गति" को निर्दिष्ट करते हैं । यहाँ पर गति की व्याख्या करना आवश्यक है ।

गति से तात्पर्य किसी व्यक्ति का कार्य में जुट जाना है जिससे तनाव दूर हो सके और सन्तुलन प्राप्त हो । लैबिन ने कहा है कि व्यवहार परिवर्तन का द्योतक है और यह परिवर्तन व्यक्ति में तब होता है, जब उसके मनोवैज्ञानिक पर्यावरण के साथ असन्तुलन पैदा हो जाता है । असन्तुलन आ जाने से तनाव पैदा हो जाता है जो सन्तुलन प्राप्त करने के लिये गति उत्पन्न कर देता है । उदाहरणार्थ - हम उस व्यक्ति की ओर देखने लगते हैं, जो सुन्दर होता है किन्तु हम अपनी आँखें कुरूप आदमी की ओर से फेर लेते हैं । जब हम यह सोचते हैं कि कल हमें क्या करना है तब हमारा जीवन-स्थान वह कमरा नहीं होता, जिसमें हम बैठे होते हैं, अपितु वह स्थान हमारे मन में आ जाता है जहाँ हम पहुँचना चाहते हैं और हमारी गति उसी ओर होने लगती है ।

एक व्यक्ति की अपनी संरचना भी होती है जिसकी ज्यामिति के रूप में निरूपण किया जा सकता है । इस चित्र में उन कर्मवाहक तथा प्रत्यक्षात्मक प्रदेशों को सतह पर दिखाया है जो पर्यावरण के साथ अन्योन्यक्रिया करते हैं और आंतरिक वैयक्तिक प्रदेश को अन्दर रखा है । आन्तरिक वैयक्तिक प्रदेश प्रत्यक्षात्मक कार्यवाहक क्षेत्र से घिरा हुआ है और न इसका उस सीमा से कोई सीधा सम्बन्ध है जो सीमा तथा व्यक्ति को पृथक् करती है ।

इसके बाद आन्तरिक वैयक्तिक प्रदेश को कोशिकाओं में विभाजित करना होता है जो कोशिकायें प्रत्यक्षात्मक कर्मवाहक प्रदेश के समीप हैं उनको परिधि कोशिकायें कहते हैं और जो वृत्त के केन्द्र में हैं उनको केन्द्रीय कोशिकायें ।

लैबिन ने इस बात का स्पष्टीकरण नहीं किया है कि प्रत्यक्षात्मक कार्य-वाहक क्षेत्र को छोटे-छोटे प्रदेशों में भेदीकृत किया जाये । उनका विचार था कि कर्मवाहक व्यवस्था इकाई के रूप में कार्य करती है क्योंकि वह सामान्यत: एक समय में एक ही कार्य करती है । इसी प्रकार प्रत्यक्षात्मक व्यवस्था भी इकाई के रूप में कार्य करती है क्योंकि एक व्यक्ति एक समय में एक वस्तु की ओर ध्यान दे सकता है और उसका प्रत्यक्ष कर सकता है । यहाँ यह कहना आवश्यक है कि कर्मवाहक

व्यवस्था का प्रत्याक्षात्मक व्यवस्था से अलग रखना चाहिए क्योंकि वे स्वतन्त्र व्यवस्थायें हैं ।

इस प्रकार हमने व्यक्ति की संरचना का प्रत्यक्षात्मक निरूपण किया है । व्यक्ति की परिभाषा इस प्रकार की जा सकती है कि वह जीवन-स्थान में भेदीकृत प्रदेश है ।

समय सापेक्षपूर्ण के अन्दर छोटे-छोटे प्रदेशों का जो भेदीकरण हो जाता है उसका व्यक्तित्व विकास से घनिष्ठ सम्बन्ध होता है । लैविन के व्यक्तित्व आरेख में प्रदेशों का जो निरूपण किया गया है उनका सीमाओं के द्वारा अन्त: सम्बन्ध होता है । सीमायें पारगम्य होती हैं अथवा अपारगम्य ।

4. <u>लक्षण सिद्धान्त</u> :-

व्यक्तित्व के प्रकार सिद्धान्त, विकासात्मक सिद्धान्त और गतिशीलता सिद्धान्त के पश्चात् लक्षण सिद्धान्त का वर्णन करना आवश्यक हो जाता है क्योंकि प्रस्तुत अध्ययन में अध्यापक (प्रशिक्षणार्थियों) के व्यक्तित्व लक्षणों को निर्धारित करने की कोशिश की जा रही है । यह सिद्धान्त व्यक्तित्व का वर्णन लक्षणों की संख्या के आधार पर करता है । यानि जिस व्यक्ति में जैसी मात्रा लक्षणों की होती है, वह उसी प्रकार का होता है और अन्य से भिन्न भी होता है । अत: शोधकर्ता व्यक्तित्व लक्षणों के सिद्धान्तों को स्पष्ट करता है ।

"आलपोर्ट" (1937) ने व्यक्तित्व विज्ञान की विवेचना अपने लक्षण सिद्धांत के आधार पर की है । आपकी राय में "लक्षण" कुछ प्रकार के उद्दीपकों के प्रति संगत तथा अनुकूली ढंग से अनुक्रिया करने की चिरस्थायी पूर्ववृत्ति होती है । इस प्रकार से आपने लक्षण का प्रयोग व्यापक अर्थ में किया है । आपने लक्षणों को निम्न भेदों में विभक्त किया है :-

प्रथम भेद के अन्तर्गत वे सामान्य लक्षणों तथा व्यक्तिगत वृत्तियों में भेद बताते हैं । सामान्य लक्षण वे होते हैं जिनकी व्यक्तियों में तुलना की जा सकती है । इनका मापना भी लक्षण स्केलों के द्वारा सम्भव होता है । इस प्रकार से 1960 में मूल्यों को मापने का स्केल विकसित किया था, जो सामान्य लक्षणों का मूल्यांकन करता है । इसके द्वारा प्रतिपादित मूल्यों - राजनैतिक, आर्थिक, सामाजिक, सौन्दर्यात्मक, सैद्धान्तिक, धार्मिक, के आधार पर एक व्यक्ति की दूसरे व्यक्ति के साथ तुलना की जा सकती है । यथार्थ लक्षणों को वे व्यक्तित्व वृत्तियाँ मानते हैं और वे व्यक्ति के लिये अपूर्व होती हैं । अतः एक व्यक्ति की तुलना दूसरे से करने पर उनका सही प्रयोग नहीं किया जा सकता है । इस प्रकार से सामान्य लक्षण, यथार्थ लक्षण कदापि नहीं हो सकता है, किन्तु वह व्यक्तिगत वृत्तियों की माप करने योग्य ऐसा पक्ष है जो प्रत्येक व्यक्ति में भिन्न-भिन्न होता है ।

द्वितीय मत से वृत्तियां क्षोपान क्रम में व्यवस्थित होती हैं । इनमें से कुछ अधिक महत्त्वपूर्ण होती हैं और कुछ कम । इस प्रकार इन आधारों पर आपने लक्षणों के तीन भेद किये हैं :- मुख्य (कार्डिनल), केन्द्रीय (सेंट्रल), तथा गौण (सेकेण्डरी) । इतिहास प्रसिद्ध व्यक्तित्व एक ही मुख्य लक्षण की विशिष्टता के कारण हुये हैं । मुख्य लक्षण युक्त व्यक्ति बहुत ही कम होते हैं, लेकिन केन्द्रीय लक्षण युक्त व्यक्ति अधिक होते हैं, जिनके आधार पर उनके व्यक्तित्व का वर्णन किया जा सकता है ।

अल्फ्रेड महोदय के अनुसार व्यक्तित्व का वर्णन करने के लिये उस व्यक्ति के मुख्य, केन्द्रीय तथा गौण लक्षणों का अध्ययन करके ही किया जा सकता है, क्योंकि वे लक्षण व्यक्तिगत वृत्तियाँ होती हैं ।

शोधकर्ता ने अपने अध्ययन में कैटिल द्वारा विकसित 16 पी॰एफ॰ का प्रयोग किया है । अतः जब तक कैटिल के लक्षण सिद्धान्त का वर्णन नहीं किया जाता, तब तक विषय की स्पष्टता नहीं हो पाती है । कैटिल (1945) ने व्यक्तित्व लक्षणों के सिद्धान्त को सांख्यिकी विधि के आधार पर वर्णन किया है । उनका मत है कि जब तक लक्षणों को क्रम में नहीं लाया जाता तब तक व्यक्तित्व के सामान्य लक्षणों का

सिद्धान्त केवल वर्णन मात्र है । आपने सांख्यिकीय विधि द्वारा उन गुणों का पता लगाया जो साथ-साथ बदलते हैं । इस प्रकार से गुणों का पुंज उस लक्षण की व्यवस्था करता है, जिसका व्यापक अर्थ होता है । इसलिए व्यक्तित्व लक्षणों को विद्वानों ने विशेषताओं के पुंज के रूप में परिभाषित किया है । कैटिल ने लक्षणों के दो भाग किये - सतही लक्षण और स्त्रोत लक्षण । सतही लक्षणों (सरफेस ट्रेट्स) से तात्पर्य उन लक्षणों से है जिनकी अभिव्यक्ति व्यक्तियों के कार्यों में प्रत्यक्ष रूप से होती है और जिनकी चेष्टाओं को प्रत्यक्ष रूप से तुरन्त देखा जा सकता है । स्त्रोत लक्षण (सोर्स ट्रेट्स) अप्रत्यक्ष रूप से क्रियाशील रहते हैं । इनकी अभिव्यक्ति सतही लक्षणों के माध्यम से ही होती है स्वतंत्र रूप से नहीं । इनका विकास वंशानुक्रम और पर्यावरण दोनों ही पक्षों से माना गया है । स्त्रोत लक्षणों का मूल्यांकन जीवन वृत्त, सेल्फ रेटिंग, और वस्तुनिष्ठ परीक्षणों के माध्यम से किया जाता है । इनके द्वारा मानव के व्यवहार के विभिन्न पहलुओं का आंकलन आसानी से किया जा सकता है । इन लक्षणों को तीन रूपों में जाना जा सकता है :-

गत्यात्मक लक्षण :-

गत्यात्मक लक्षण का प्रयोग उस समय देखने को मिलता है जब एक व्यक्ति अपने लक्ष्य के प्रति क्रियाशील होता है । इनके अंतर्गत-चालनायें, मनोवृत्तियां, स्थायी-भाव, भावना ग्रंथियां, पराअहं और अहं, आदि मानव की वृत्तियां सम्मिलितत रहती हैं ।

योग्यता लक्षण :-

इन लक्षणों के अन्तर्गत व्यक्ति की उस क्षमता का प्रदर्शन होता है जिसके द्वारा वह उच्च लक्ष्यों की प्राप्ति जीवन को सुन्दर बनाने के लिये करता है ।

प्राकृतिक लक्षण :-

इन लक्षणों का सम्बन्ध व्यक्ति के कान्सिटीट्यूशनल पक्ष से होता है जिसके द्वारा वह अनुक्रिया करने की तीव्रता, शक्ति, संवेगात्मक क्रियाशीलता का प्रदर्शन करता है ।

इस प्रकार से शोधकर्ता को स्पष्ट हो जाता है कि व्यक्तित्व का मापन करना आसान कार्य नहीं है । व्यक्तित्व लक्षणों के बारे में आलपोर्ट ने प्रेरकों के कार्यात्मक स्वातंत्र्य पर बल दिया है, जबकि आइजेनिक ने अनुक्रिया की आदत पर। इसके विपरीत कैटिल ने सतही लक्षण एंव स्त्रोत लक्षणों को व्यक्तित्व का आधार माना है । इस प्रकार से सतही लक्षण ही व्यक्तित्व विकास में क्रियाशील रहते हैं । अतः स्पष्ट होता है कि सतही लक्षणों के द्वारा ही व्यक्तित्व के गत्यात्मक परिवर्तनों का विकास होता है जिसका अनुभव व्यक्ति को क्षण-क्षण होता रहता है ।

1.4.3 शिक्षण कौशल :-

जब कोई कार्य कम समय, शक्ति तथा व्यय आदि के माध्यम से हो जाता है तो इसे व्यक्ति की प्रभाविकता कहा जाता है । एक शिक्षक अपने अध्यापन के समय छात्रों तथा पाठ्यक्रम के बीच शिक्षण कौशल का प्रदर्शन करता है । इस प्रकार से शिक्षक का मूल्यांकन शैक्षिक उपलब्धि के रूप में आंकी जाती है । इस प्रकार से छात्रों की अधिगम की प्रगति अध्यापक के शिक्षण कौशल का परिणाम मात्र होती है । सामान्यतः शिक्षण प्रभाविकता को शिक्षण के उत्पाद चरों तथा शिक्षण के प्रक्रम चरों के रूप में परिभाषित किया जाता है । इस प्रकार से कहा जा सकता है कि शिक्षण कौशल का ही परिणाम प्रभाविकता होता है जिसमें शिक्षक अपनी शिक्षण व्यवस्था, शैक्षिक रचना, कौशलों तथा युक्तियों का प्रयोग पाठ्यवस्तु को सिखाने हेतु करता है । डॉ० पाण्डेय (1982, पृ० 294) के विचार से, "शिक्षण प्रभाविकता के अन्तर्गत शिक्षण के अभीष्ट परिणामों, प्रभावों का मूल्यांकन करने की चेष्टा की जाती है ।"

शिक्षण कौशल से तात्पर्य शिक्षा में दक्षता हासिल करने से होता है । इसके

अन्तर्गत अध्यापन द्वारा छात्रों में वांछित परिवर्तन लाना, शिक्षा के उद्देश्यों को प्राप्त करना, कक्षा का समुचित विकास करना आदि शिक्षण के समस्त प्रभाव आ जाते हैं । शिक्षण कौशल (दक्षता) के अन्तर्गत (एनसाइक्लोपीडिया ऑफ एजूकेशनल रिसर्च, पृ० 1487) अध्यापक की निम्न बातें आती हैं :-

(1) शिक्षक व्यवहार (2) प्रक्रिया परिणाम (3) सहगामी क्रियायें, शोधकर्त्री ने शिक्षण कौशल के लिये उपयुक्त विचार "डेविड जी रायन्स" (1969) को प्रमुखता दी है । "शिक्षण कौशल को शिक्षण की उस सीमा तक प्रभावशाली माना जा सकता है, जब अध्यापक उन विधियों से व्यवहार करे जो मूल कुशलताओं समझदारी, कार्य करने की आदत, इच्छित अभिव्यक्ति, मूल्य, निर्णय, तथा छात्रों का स्वयं के वातावरण से समायोजन के लिये लाभकारी हों" ।

1.4.4 छात्र/छात्रा-अध्यापक :-

प्रस्तुत शोध अध्ययन में उन छात्र/छात्रा-अध्यापकों को लिया गया है जो बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय के विभिन्न महाविद्यालयों में अध्यापक शिक्षा में प्रशिक्षण ले रहे हैं । इन लोगों का अध्यापकीय व्यक्तित्व और शिक्षण कौशल का निर्धारण गृह पर्यावरण के द्वारा कितना निश्चित होता है, का मूल्यांकन शोध का प्रमुख लक्ष्य है । अतः शिक्षक-प्रशिक्षण को और अधिक स्पष्ट करने के लिये भारत में इसके विकास को देखना शोधकर्त्री ने आवश्यक समझा है ।

स्वतन्त्र भारत में शिक्षक प्रशिक्षण :-

स्वतन्त्र भारत में अध्यापक शिक्षा अपने विकास मार्ग पर तीव्रगति से अग्रसर हुई है । अतः शिक्षा के विभिन्नस्तरों पर प्रशिक्षित शिक्षकों की माँग में उत्तरोत्तर वृद्धि हुई । इसीलिये शिक्षा की पुनर्रचना में शिक्षक प्रशिक्षण को महत्वपूर्ण स्थान दिया गया । उनकी कमियों को दूर करने में एंव उनमें गुणात्मक उन्नति के उपायों को इंगित करने के लिये शिक्षा आयोगों की नियुक्ति की गयी है, जिनमें प्रमुख निम्न हैं :-

1. राधाकृष्णन आयोग ।
2. मुदालियर आयोग ।
3. कोठारी आयोग ।

विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग 1948-49 ने एक विश्वविद्यालय से दूसरे विश्वविद्यालय के प्रशिक्षण संस्थानों की दक्षता में अन्तर पाया और प्रशिक्षण की संरचना को पुनः इस प्रकार प्रारूपित करने की सिफारिश की कि विद्यालयों में प्रशिक्षण की अवधि एंव छात्रों की व्यवहारिक उपलब्धियों को विशेष महत्व दिया जाये ।

सन् 1950 से देश में अध्यापक शिक्षा में गुणात्मक सुधार एंव समस्याओं के निराकरण के सम्बन्ध में अनेक महत्वपूर्ण प्रयास किये गये जिसके अन्तर्गत अखिल भारतीय स्तर पर प्रशिक्षण विद्यालयों की संगोष्ठी क्रमशः बड़ौदा एंव मैसूर में आयोजित की गयी ।

माध्यमिक शिक्षा आयोग 1952-53 ने उस समय अध्यापक प्रशिक्षण की संचालित तीन तरह की संस्थाओं को कम करके दो तरह के प्रशिक्षण विद्यालयों की संस्तुति की । प्रथम - ट्रेनिंग कॉलेज, द्वितीय - ट्रेनिंग स्कूल/ट्रेनिंग कालेजों को विश्वविद्यालयों से सम्बद्ध करने तथा ट्रेनिंग स्कूलों हेतु अलग से बोर्ड बनाने की सिफारिश की गयी । प्रथम सिफारिश को तो अनेक विश्वविद्यालयों ने क्रियान्वित कर दिया परन्तु द्वितीय सिफारिश पर कोई विशेष ध्यान नहीं दिया गया ।

तत्पश्चात् माध्यमिक एंव प्राथमिक स्तर पर प्रशिक्षण हेतु सुझाव देने के लिए अनेक समितियों का गठन किया गया, जिनमें से प्रमुख निम्न हैं :-

1. माध्यमिक स्कूलों के शिक्षकों एंव पाठ्यक्रमों हेतु अन्तर्राष्ट्रीय अध्ययन दल, 1954.
2. अंग्रेजी भाषा केन्द्रीय संस्थान, हैदराबाद, 1958.
3. भारत में प्राथमिक शिक्षकों की शिक्षा, 1961.

सन् 1960 के बाद देश में अध्यापक शिक्षा के क्षेत्र में सुधार हेतु अनेक महत्वपूर्ण निर्णय लिये गये जिसके तहत राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एंव प्रशिक्षण परिषद तथा राज्य शिक्षा संस्थानों की स्थापना की गयी । अध्यापक प्रशिक्षण में शोध कार्य करने, प्रशिक्षण की रूपरेखा तैयार करने एंव अन्य समस्यओं के निराकरण हेतु चार "क्षेत्रीय महाविद्यालयों" अजमेर, भोपाल, भवनेश्वर एंव मैसूर की स्थापना की गयी । कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय में भी चार वर्षीय समन्वित प्रशिक्षण पाठ्यक्रम लागू किया गया । विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के सहयोग से एम0एस0 विश्वविद्यालय, बड़ौदा में अध्यापक शिक्षा में शोध एंव सुधार हेतु सी.ए.एस.ई. डिपार्टमेंट खोला गया । अखिल भारतीय शिक्षक प्रशिक्षण परिषद ने जून 1964 में अपनी सातवीं विचार गोष्ठी में यह सुझाव दिया कि प्राथमिक तथा माध्यमिक शिक्षकों के प्रशिक्षण के बीच अन्तर को कम करनेहेतु एक विस्तृत प्रशिक्षण कॉलेज की स्थापना की जाये । शिक्षा आयोग 1964-66 ने भी अध्यापकों के प्रशिक्षण एंव गुणात्मक सुधार हेतु विशेष ध्यान एंव सुझाव दिया, जिसके परिणामस्वरूप अलीगढ़, कुरुक्षेत्र एंव कानपुर विश्वविद्यालयों ने एम0ए0 स्तर पर शिक्षा शास्त्र पाठ्यक्रम शुरू किया । कुछ विश्वविद्यालयों ने अध्यापक शिक्षा के प्रसार हेतु ग्रीष्मकालीन एंव पत्राचार पाठ्यक्रम प्रारम्भ किये । क्षेत्रीय प्रशिक्षण महाविद्यालयों एंव राज्यों के प्रशिक्षण कॉलेजों ने अप्रशिक्षित अध्यापकों को प्रशिक्षित करके उनकी संखया में कमी कर दी । अध्यापक शिक्षा की समस्याओं के निराकरण हेतु अनेक राज्यों ने अध्यापक शिक्षा को विश्वविद्यालयों के शिक्षा विभाग से सम्बद्ध कर दिया परिणामस्वरूप योजना आयोग के निर्देशों का अनुपालन करते हुये चौथी पंचवर्षीय योजना 1969-74 में शिक्षा जगत में महत्वपूर्ण कार्य हुआ, जिसके कारण देश में वर्ष 1968-69 तक प्रशिक्षित प्राथमिक शिक्षकों का प्रतिशत 77 प्रतिशत हो गया । उत्तर प्रदेश में माध्यमिक स्तर के प्रशिक्षित अध्यापकों का वर्ष 1968-69 में प्रतिशत 73 प्रतिशत था । चौथी पंचवर्षीय योजना के अन्तिक चरणों में राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एंव प्रशिक्षण परिषद, नई दिल्ली ने कक्षा 01 से 12 तक के पाठ्यक्रम में सुधार करके 10+2+3 पद्वति लागू किया, जिसके फलस्वरूप विज्ञान शिक्षकों की माँग बढ़ गयी । इसलिए प्रशिक्षण विद्यालयों में 50 प्रतिशत स्थान विज्ञान स्नातकों एंव

परास्नातकों के लिये कर दिये गये । वर्ष 1973-74 तक भारत वर्ष में ट्रेनिंग स्कूल एंव ट्रेनिंग कॉलेजों की संखया क्रमशः 446 एंव 1120 थी तथा प्राथमिक, मिडिल तथा माध्यमिक स्तर पर प्रशिक्षित अध्यापकों का प्रतिशत क्रमशः 82.6, 84.9 तथा 80.4 था ।

शिक्षा मंत्रालय भारत सरकार के अनुसार 1950-83 की अवधि में शिक्षकों की कुल संखया 7.5 लाख से बढ़कर 32 लाख से भी अधिक हो गयी जो प्रतिवर्ष 4.6 प्रतिशत की वृद्धि बताती है । जहाँ प्राथमिक स्कूली शिक्षकों की संखया में प्रतिवर्ष वृद्धि की दर 3 प्रतिशत रही, वहीं सबसे अधिक वृद्धि मिडिल स्कूल के शिक्षकों में 7.5 प्रतिशत बताई गयी । शिक्षा के प्रत्येक स्तर पर पुरूष शिक्षकों की संखया की तुलना में महिला शिक्षकों की संखया में वृद्धि अपेक्षाकृत ज्यादा थी । प्रशिक्षित शिक्षकों की प्रतिशतता 1949-50 में बढ़कर 1982-83 में 88.4 प्रतिशत हो गयी । आँकड़ों से पता चलता है कि प्राथमिक स्कूलों के स्तर पर 1971-72 से 1982-83 के दौरान शिक्षक शिष्य अनुपात में कुछ अधिक परिवर्तन नहीं हुआ था । मिडिल स्कूलों में शिक्षक शिष्य अनुपात कुछ कम हो गया ।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1986) में शिक्षक एंव शिक्षक शिक्षा को महत्वपूर्ण माना गया है उनकी की गई सिफारिशें हैं - किसी समाज में अध्यापकों के दर्जे से उसकी सांस्कृतिक-सामाजिक दृष्टि का पता लगता है । कहा गया है कि कोई भी राष्ट्र अपने अध्यापकों के स्तर से ऊपर नहीं उठ सकता । सरकार और समाज को परिस्थितियाँ बनानी चाहिए जिनसे अध्यापकों को निर्माण और सृजन की ओर बढ़ने की प्रेरणा मिले । अध्यापकों को इस बात की आजादी होनी चाहिए कि वे नये प्रयोग कर सकें और सम्प्रेषण की उपयुक्त विधियों और अपने समुदाय की समस्याओं और क्षमताओं के अनुरूप नये उपाय निकाल सकें ।

अध्यापकों को भर्ती करने की प्रणाली में इस प्रकार परिवर्तन किया जायेगा कि उनका चयन उनकी योग्यता के आधार पर व्यक्ति-निरपेक्ष रूप से और उनके कार्य की अपेक्षाओं के अनुरूप हो सके । शिक्षकों का वेतन और सेवा की शर्तें उनके सामाजिक

और व्यावसायिक दायित्व के अनुरूप हों और ऐसी हों जिनसे प्रतिभाशाली व्यक्ति शिक्षक-व्यवसाय की ओर आकृष्ट हों । यह प्रयत्न किया जायेगा कि पूरे देश में वेतन में, सेवा शर्तों में और शिकायतें दूर करने की व्यवस्था में समानता का वांछनीय उद्देश्य प्राप्त किया जा सके । अध्यापकों की तैनाती और तबादले में व्यक्ति-निरपेक्षता लाने के लिये निर्देशक सिद्धान्त बनाये जायेंगे । उनके मूल्यांकन की एक पद्धति तय की जायेगी जो प्रकट होगी । आँकड़ों एंव तथ्यों पर आधारित होगी और जिसमें सबका योगदान होगा । ऊपर के ग्रेड में तरक्की के लिये शिक्षकों को उचित अवसर दिये जायेंगे । जबाब-देही मानक तय किये जायेंगे । अच्छे कार्य को प्रोत्साहित किया जायेगा और निष्क्रियता को निरुत्साहित । शैक्षिक कार्यक्रमों के बनाने और उन्हें क्रियान्वित करने में अध्यापकों की महत्वपूर्ण भूमिका बनी रहेगी ।

व्यावसायिक प्रामाणिकता की हिमायत करने, शिक्षक की प्रतिष्ठा बढ़ाने और व्यावसायिक दुर्व्यवहार को रोकने में शिक्षक संघों को अहम् भूमिका निभानी चाहिए । शिक्षकों के राष्ट्रीय संघ शिक्षकों के लिए एक व्यावसायिक आचार-संहिता बना सकते हैं और उसका अनुपालन करा सकते हैं ।

अध्यापकों की शिक्षा :-

1. अध्यापकों की शिक्षा एक सतत् प्रक्रिया है और इसके सेवापूर्व और सेवाकालीन अंशों को अलग नहीं किया जा सकता । पहले कदम के रूप में अध्यापकों की शिक्षा की प्रणाली को आमूल बदला जायेगा ।

2. अध्यापकों की शिक्षा के नये कार्यक्रम में सतत् शिक्षा पर और इस शिक्षा-नीति-की नई दिशाओं के अनुसार आगे बढ़ने की आवश्यकता पर बल होगा ।

3. "जिला शिक्षा और प्रशिक्षण संस्थान" स्थापित किये जायेंगे जिनमें प्राथमिक विद्यालयों के अध्यापकों की और अनौपचारिक शिक्षा और प्रौढ़ शिक्षा के कार्यकर्ताओं के प्रशिक्षण की व्यवस्था होगी । इन संस्थानों की स्थापना के साथ बहुत ही घटिया प्रशिक्षण संस्थाओं को बन्द किया जायेगा । कुछ चुने हुए

माध्यमिक अध्यापक-प्रशिक्षण कालेजों का दर्जा बढ़ाया जायेगा ताकि वे राज्य शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण संस्थानों के पूरक के रूप में काम कर सकें । राष्ट्रीय अध्यापक शिक्षा परिषद को सामर्थ्य और साधन दिये जायेंगे जिससे यह परिषद अध्यापक शिक्षा की संस्थाओं को मान्यता देने के लिये अधिकारिक हों और उनके शिक्षाक्रम और पद्धतियों के बारे में मार्ग-दर्शन कर सकें । अध्यापक-शिक्षा की संस्थाओं और विश्व-विद्यालयों के शिक्षा-विभागों में आपस में मिलकर काम करने की व्यवस्था की जायेगी।

इस प्रकार से शोधकर्ती ने शिक्षा के क्षेत्र के स्वअनुभव, अध्यापकों के व्यवहारों के अध्ययन, साहित्य में शिक्षक-प्रशिक्षण वर्णन एंव भारत में शिक्षक प्रशिक्षण, आदि पक्षों का विस्तृत अध्ययन किया और इस निष्कर्ष पर पहुँची कि शिक्षक व्यक्तित्व अमूल्य है, जिसे सजाना और संवारना प्रत्येक राष्ट्र का उत्तरदायित्व होना चाहिए । इन सभी तथ्यों से प्रभावित होकर शोधकर्त्री ने अध्यापन व्यवसाय की उत्तमता प्रदान करने के लिए, अध्ययन में रुचि जागृत करने के लिये, छात्र/छात्रा का विकास करने के लिए, शिक्षा में मनोविज्ञान का प्रयोग करने के लिये, अध्यापक दक्षता एंव कौशल का विकास करने के लिये पर्यावरण के अध्ययन को प्रमुखता दी है ।

1.5 समस्या के उद्देश्य :-

प्रस्तुत अध्ययन का प्रयास बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय से सम्बन्धित अध्यापक प्रशिक्षण महाविद्यालयों में प्रशिक्षणरत छात्र/छात्रा-अध्यापकों से सम्बन्धित है, जिसमें इनके गृह-पर्यावरण, व्यक्तित्व विशेषतायें तथा शिक्षण-कौशल आदि तीन परिवर्तियों का अध्ययन करना है । अतः अध्ययन के उद्देश्य निम्न रूप में प्रस्तुत हैं :-

1. शिक्षण-प्रशिक्षण प्राप्त कर रहे छात्र/छात्रा-अध्यापकों के गृह पर्यावरण आयामों का अध्ययन करना ।

2. शिक्षण-प्रशिक्षण प्राप्त कर रहे छात्र/छात्रा-अध्यापकों में पाये जाने वाले व्यक्तित्व लक्षणों का अध्ययन करना ।

3. शिक्षण-प्रशिक्षण प्राप्त कर रहे छात्र/छात्रा-अध्यापकों के शिक्षण कौशल का अध्ययन करना ।

4. उच्च तथा निम्न गृह-पर्यावरण वाले प्रशिक्षणरत छात्र/छात्रा-अध्यापकों के व्यक्तित्व पार्श्वदृश्य का अध्ययन करना ।

5. उच्च तथा निम्न गृह-पर्यावरण वाले प्रशिक्षणरत छात्र/छात्रा-अध्यापकों के शिक्षण-कौशल का अध्ययन करना ।

6. छात्र/छात्रा-अध्यापकों के गृह-पर्यावरण तथा व्यक्तित्व भिन्नता के मध्य सह-सम्बन्धों में यौन भिन्नता का अध्ययन करना ।

7. छात्र/छात्रा-अध्यापकों के गृह-पर्यावरण एंव शिक्षण कौशल के मध्य सह-सम्बन्धों में यौन-भिन्नता का अध्ययन करना ।

1.6 अध्ययन की परिकल्पनायें -

प्रस्तुत अध्ययन का मुख्य प्रयास गृह-पर्यावरण द्वारा विकसित व्यक्तित्व विशेषताओं को जानना है जो कक्षा व्यवहार को समुन्नत बनाने में सहयोग देते हैं । यह आशा की जाती है कि गृह-पर्यावरण के विभिन्न घटक शिक्षक व्यक्तित्व की विभिन्न विशेषताओं के विकास में सहायक होते हैं । यानि अपना प्रभाव छोड़ते हैं । परिणामस्वरूप वे अपने शिक्षण को विभिन्न कौशलों से परिपूरित करके बच्चों का सर्वांगीण विकास करते हैं । अतः शोधकर्त्री ने प्रस्तुत अध्ययन हेतु निम्नलिखित परिकल्पनायें स्थापित की हैं :-

1. प्रशिक्षणरत छात्र/छात्रा-अध्यापकों के गृह-पर्यावरण और उनकी व्यक्तित्व विशेषताओं के बीच सार्थक अन्तर नहीं होता है ।

2. प्रशिक्षणरत छात्र/छात्रा-अध्यापकों के गृह-पर्यावरण का उनके शिक्षण कौशलों में सार्थक अन्तर नहीं रखता है ।

3. प्रशिक्षणरत छात्र/छात्रा-अध्यापकों के व्यक्तित्व पार्श्वदृश्य और शिक्षण कौशल में सार्थक अन्तर नहीं होता है ।

4. उच्च गृह-पर्यावरण, प्रशिक्षणरत छात्र/छात्रा-अध्यापकों के व्यक्तित्व लक्षणों में अन्तर नहीं रखता है ।

5. निम्न पर्यावरण, प्रशिक्षणरत छात्र/छात्रा-अध्यापकों के व्यक्तित्व लक्षणों में सार्थक अन्तर नहीं रखता है ।

6. उच्च पर्यावरण, प्रशिक्षणरत छात्र/छात्रा-अध्यापकों के शिक्षण कौशल को प्रभावित नहीं करते हैं ।

7. निम्न पर्यावरण, प्रशिक्षणरत छात्र/छात्रा-अध्यापकों के शिक्षण कौशल को प्रभावित नहीं करते हैं ।

8. बी0 एड0 प्रशिक्षणरत छात्र/छात्रा-अध्यापकों के गृह-पर्यावरण घटकों के प्रभावों में सार्थक अन्तर नहीं होता है ।

1.7 अध्ययन की परिसीमायें :-

चूँकि अध्ययन का विषय क्षेत्र विस्तृत है और पूरी पापुलेशन पर अध्ययन कर सकना एक शिक्षिका के लिये सम्भव नहीं है । अतः अध्ययन को छोटे से समूह जो पूरी पापुलेशन का प्रतिनिधित्व करता है, तक ही सीमित रखा गया है । उत्तर प्रदेश का झाँसी मण्डल अपने ऐतिहासिक गौरव के लिये प्रसिद्ध है जिसमें स्थापित बुंदेलखण्ड विश्वविद्यालय के शिक्षक - प्रशिक्षण करने वाले पाँच महाविद्यालयों के 500 (छात्र/छात्रा) को ही अध्ययन का क्षेत्र बनाया गया है । इसमें ग्रामीण व शहरी दोनों ही क्षेत्रों के छात्र/छात्रा प्रशिक्षण हेतु आते हैं । अतः अध्ययन के तौर पर दोनों वर्गों के छात्र-अध्यापकों के विभिन्न आयामों में से केवल गृह-पर्यावरण, व्यक्तित्व और शिक्षण-कौशल का ही अध्ययन किया जायेगा, जिनका वर्णन निम्न रूप से प्रस्तुत है :-

(अ) गृह-पर्यावरण :-

छात्र/छात्रा-अध्यापकों के गृह-पर्यावरण के अन्तर्गत निम्न दस घटकों (आयामों) का अध्ययन किया गया है :-

1. नियन्त्रण - बच्चों को अनुशासनमय जीवन जीने के लिये परिवार द्वारा प्रयोग किये गये बन्धन ।

2. संरक्षण - बच्चों के व्यवहारिक स्वतन्त्रता पर रोक तथा उनके शैक्षिक विकास पर बल ।

3. दण्ड - बच्चों के अनैच्छिक व्यवहारों के विकास को रोकने हेतु शारीरिक तथा प्रभावकारी दण्ड प्रयोग ।

4. निश्चयात्मकता - माता-पिता की अपेक्षानुसार बच्चों के व्यवहार में क्रियान्वयन ताकि बच्चे उनके आदेशों का पालन सकारात्मक रूप में कर सकें ।

5. सामाजिक बहिष्कार - से तात्पर्य अपने प्रिय सदस्यों से दूरी बनाये रखना ।

6. पुरस्कार - इच्छित व्यवहार व क्रियाओं के अनुपालन हेतु भौतिक व सांकेतिक पुरस्कार ।

7. सुविधाओं से वंचित करना - बच्चों के व्यवहार को नियंत्रित रखने के लिए उन्हें प्यार, आदर, व अच्छी देखभाल से वंचित रखना ।

8. पोषण - बच्चों के प्रति शारीरिक और भावनात्मक लगाव को बिना किसी शर्त के प्रगट करना ।

9. तिरस्कार - वैयक्तिक रूप से बच्चे को किसी भी प्रकार का अधिकार न देना ।

10. अनुमति सूचकता - बच्चों को बोलने तथा कार्यों की स्वतन्त्रता देना जबकि माता-पिता को बाधा न हो ।

डॉ0 कपूर द्वारा विकसित व हिन्दी रूपान्तरित

(ब) व्यक्तित्व लक्षण सूची -

व्यक्तित्व	निम्नस्तरीय सीमा	उच्चस्तरीय सीमा
ए	सिजायाइमिया : गम्भीर, शांत, चतुर, अलगाव	एफेक्टोथाइमियाँ : बहिर्मुखीय, अतिस्नेही, सरलता, प्रतिस्पर्धी.
बी	लोअर मैंटल कैपेसिटी : कमबुद्धि, वास्तविक चिंतन	हायर मैंटल कैपेसिटी : उच्चबुद्धि, भावात्मक चिन्तन, बौद्धिक तीव्रता,
सी	लोअर इगो स्ट्रेन्थ : भावनामय, संवेगरहित, स्थायी, नैराश्यता	हायर इगो स्ट्रेन्थ : संवेगस्थिरता, सत्यमालक, शांत, परिपक्व.
ई	सबमिसिवनेस : विनम्र, कोमल, आज्ञाकारी, निश्चयवान	डामीनेन्स : वार्तालाप, स्वतन्त्र, आक्रामक, प्रतिस्पर्धी, दृढ़ी.
एफ	डैसरजेन्सी : मर्यादाशील, मितव्ययी, गंभीर, अल्पभाषी	सरजैन्सी : आनंदित, स्वेच्छा, पसन्द, उत्साही.
जी	वीकर सुपर इगो स्ट्रेन्थ : उपयुक्त, नियम विरोधी, आभारी	स्ट्रांगर सुपर इगो स्ट्रेन्थ : पुण्यकार्य करने वाला, उद्यमी, गम्भीर, नियम पालक.
एच	थ्रेक्टिया : शर्मीला, सीमाबद्ध, कायर, लज्जाशील	पारमियाँ : साहसिक, सार्वजनिक, दृढ़ी, क्रियाशील, स्वेच्छाचारी.

आई	हारिया :	पेम्सिया :
	मस्तिष्क, दृढ़ता, स्वविवेकी, यथार्थवादी, अर्थहीन, वाचाल	कमजोर मस्तिष्क, निर्भर, अति-सुरक्षित, भावनात्मक.
एल	एलेक्शन :	प्रोटेन्सन :
	विश्वस्त, योग्य, ईर्ष्यालु, सामूहिकता	सन्देही, स्वराय निर्माणक, असामूहिकता.
एम	पेकजरनिया :	आइटिया :
	व्यवहारिक, सचेत, रूढ़िगत, उपयुक्त, यथार्थवादी	काल्पनिक, आँतरिक, आकांक्षी, विरोधी, कमयादग्रस्त, अव्यवहारिक.
एन	आर्टलिसने :	फ्रूल्डनेस :
	अग्रगामी, स्वाभाविक अकलात्मकता, भावनामय	चतुर, गणक, सांसारिक, कर्मज्ञ.
ओ	अनट्रबुल्ड एडीक्वेसी :	गिल्ट प्रोननेस :
	गम्भीर, प्रसन्नचित्त, विश्वासी, निर्मल, स्वविवेकी	विचारशील, चिन्तित, दम्भी, विघ्न वाला.
क्यू-1	कन्जरवेटिज्म :	रेरिकलिज्म :
	रूढ़िवादी, सम्माननीय विचार, प्रथाओं की समस्या समाधान	प्रायोगिक, विषम, सहृदय, विश्लेषक, स्वतन्त्र विचार.
क्यू-2	ग्रुप अदेरेन्स :	सेल्फ इफीसियेन्सी :
	समूह निर्भरता, एकता, विश्वासपात्र	स्वनिर्मित, स्वनिर्णय, क्षमता वाला.
क्यू-3	लो इन्टीगरेसन :	सेल्फ इमेज :
	अनियंत्रित, स्वविरोधी, सलाह न मानना, इन्द्रियग्राही	नियंत्रित, समाजप्रिय, स्वाभिमानी.
क्यू-4	अनफ्रेस्ट्रेटेड :	हाइइरजिकटेन्सन :
	जड़, आरामतलब, क्षोभरहित, आशावान	चिन्तित, निराशायुक्त, परिश्रमी, गतिशील.

(स) शिक्षण-कौशल :-

शोधकर्त्री द्वारा शिक्षण कौशल अनुसूची का विकास किया जायेगा ताकि छात्र/छात्रा-अध्यापकों का कक्षा व्यवहार स्पष्ट हो सके । इसके अन्तर्गत पाँच शिक्षण कौशलों -

1. अभिप्रेरणात्मक कौशल,
2. संचार कौशल,
3. प्रश्नोत्तर कौशल,
4. मूल्याँकन कौशल और
5. अनुशासन कौशल

का प्रयोग करके छात्र/छात्रा-अध्यापकों के कक्षा व्यवहार का मूल्याँकन किया जायेगा ।

(द) विश्लेषण प्रविधियाँ :-

1. केन्द्रीय प्रवृत्ति मापक,
2. मानक विचलन,
3. मानक त्रुटि
4. "टी" परीक्षण,
5. स्टैन्स निर्माण,
6. सह-सम्बन्ध ।

1.8 अध्ययन की योजना :-

शोधकर्त्री का यह परम कर्तव्य हो जाता है कि वह अध्ययन को किन-किन अध्यायों में विभक्त करेगी, उसका संक्षिप्त विवरण देना आवश्यक है । इससे अध्ययन की सम्पूर्ण रूपरेखा स्पष्ट हो जाती है । अतः प्रस्तुत शोध को पाँच निम्न अध्यायों में प्रस्तुत किया गया है -

अध्याय – प्रथम : शोध विषय की प्रस्तावना का है जिसमें शोध विषय का चुनाव, आवश्यकताओं, परिवर्तियों, उद्देश्यों व परिकल्पनाओं, परिसीमाओं आदि का वर्णन किया गया है ।

अध्याय – द्वितीय : में सम्बन्धित साहित्य का अवलोकन का वर्णन किया गया है । इसमें गृह-पर्यावरण, व्यक्तित्व और शिक्षण कौशल से सम्बन्धित अध्ययनों का वर्णन किया गया है ताकि शोधकर्त्री का मानसिक धरातल तैयार हो सके । इससे शोध की अपूर्वता प्रगट होती है ।

अध्याय – तृतीय : में शोध प्रवृधि का विशद् वर्णन है । इसमें न्यादर्श चुनाव, उपकरण प्रयोग, तथ्यों का संकलन विधि और तथ्यों का विश्लेषण के तरीके आदि का विस्तृत वर्णन किया गया है । इससे सम्पूर्ण कार्य का वैज्ञानिक तथा तकनीकी पक्ष स्पष्ट हो जाता है ।

अध्याय – चतुर्थ : में तथ्यों का विश्लेषण एवं व्याख्या प्रस्तुत की गई है । इसके अन्तर्गत गृह-पर्यावरण के घटकों का विश्लेषण व व्याख्या, व्यक्तित्व विशेषताओं का विश्लेषण व व्याख्या तथा शिक्षण कौशल का विश्लेषण व व्याख्या को सांख्यिकी विधियों के आधार पर प्रस्तुत किया गया है । इसके साथ ही गृह-पर्यावरण के प्रभाव को व्यक्तित्व गठन और शिक्षण कौशल पर मूल्यांकित भी किया गया है ।

अध्याय – पंचम : में शोध निष्कर्षों और सुझावों का विस्तार से वर्णन किया गया है । ये निष्कर्ष वर्तमान में शोध की उपादेयता को प्रगट करते हैं । साथ ही शैक्षिक, सामाजिक और प्रशासनिक क्षेत्र की आवश्यकता को भी पूरा करते हैं । सबसे अन्त में भविष्य के लिये उपार्जित शोधकर्ता उन पर अपने कार्य को कर सके ।

प्रथम परिशिष्ट : के अन्तर्गत सन्दर्भ ग्रन्थ (पुस्तकें, पीरियाडिकल्स, आर्टिकल्स, पेपर्स और अन्य सामग्री) का वर्णन है ।

द्वितीय परिशिष्ट : में गृह-पर्यावरण उपकरण, व्यक्तित्व उपकरण और शिक्षण कौशल अनुसूची आदि से सम्बन्धित प्रश्न पुस्तिका, उत्तर-पुस्तिका, स्कोर की आदि का वर्णन है ।

तृतीय परिशिष्ट : के अन्तर्गत एकत्रित किये गये प्रदत्तों को (रा कोर्स) को प्रस्तुत किया गया है ।

अध्याय - द्वितीय
=============

सम्बन्धित साहित्य का पुनरावलोकन

1. प्रस्तावना ।
2. सम्बन्धित साहित्य का महत्व ।
3. पर्यावरण सम्बन्धी अध्ययन ।
4. छात्र-अध्यापकों का व्यक्तित्व सम्बन्धी अध्ययन ।

सम्बन्धित साहित्य का पुनरावलोकन

अनुसंधान का क्षेत्र व प्रक्रिया वैज्ञानिक हो या मानविकी हो, साहित्य के पुनरावलोकन की आवश्यकता अत्यधिक होती है । "वस्तुत: साहित्य का पुनरावलोकन एक कठिन पारिश्रमिक कार्य है । इसका प्रयोग प्रत्येक प्रकार के शोधकार्य के लिए आवश्यक माना जाता है ।" (ढोंढियाल एंव फाटक, 1972, पृ0 49) ।

शोधकार्य को जानने व समझने के लिये समस्या की गहराई में जाना आवश्यक होता है । अत: समस्या के प्रत्येक क्षेत्र का अध्ययन करना, नवीन शोध की उपादेयता को प्रगट करती है । "शैक्षिक शोध से सम्बन्धित साहित्य का अध्ययन किसी शोधकर्ता के लिये किसी समस्या विशेष के मूल में पहुँचने का महत्वपूर्ण साधन है" (वाल्टर बेगि, 1963, पृ0 40) ।

2. सम्बन्धित साहित्य के अध्ययन का महत्व :-

शोध का पुनर्निरीक्षण शोधकर्ता को नई दृष्टि प्रदान करता है जिससे वह अपने कार्य को तुरन्त व मौलिकता के आधार पर पूर्ण करता है । इससे समस्या की प्रवृत्ति और मूल सम्प्रत्यय स्पष्ट होकर सामने आता है । इसीलिए "कार्टर वी0 गुड" ने लिखा है, "मुद्रित साहित्य का अपार भण्डार अर्थपूर्ण समस्या और विश्लेषणीय परिकल्पना के स्रोत के द्वार को खोल देती है, तथा समस्या के परिभाषीकरण, अध्ययन की विधि के चुनाव, तथा प्राप्त सामग्री के तुलनात्मक विश्लेषण में सहायता करती है ।" इसी प्रकार से "वुड बार एण्ड स्केटर्स" ने साहित्य के पुनरावलोकन का महत्व निम्न प्रकार से स्पष्ट किया है :-

1. समस्या से सम्बन्धित विचारों, सिद्धान्तों और परिकल्पनाओं के स्पष्टीकरण आदि में लाभकारी ।

2. क्षेत्र की नवीनता स्पष्ट होती है तथा समस्या चयन में कोई खतरा नहीं रहता है ।

3. शोध प्रणालियों की जानकारी से शोध का कार्य सरल हो जाता है ।
4. शोध की प्रगति हेतु सामान्य निर्देश प्राप्त होते हैं ।

अतः शोधकर्ता इस निष्कर्ष पर पहुँचता है कि साहित्य का पुनरावलोकन वैज्ञानिक, मानविक आदि सभी शोधों में उपयोगी होता है । इसके अध्ययन से शोधक अपनी अन्तर्दृष्टि को विकसित करके समस्या के मूल को स्पष्ट करने में समर्थ होता है, जो वस्तुतः उसके लिये, समाज के लिए तथा राष्ट्र के लिये मौलिक कृति होती है । जैसा कि "वेस्ट जे० डब्ल्यू०" ﴾1977﴿ में लिखा है, "वास्तव में समस्त मानवीय ज्ञान पुस्तकों एंव पुस्तकालयों में उपलब्ध हो सकता है । अन्य जीवधारियों से भिन्न जो प्रत्येक पीढ़ी के साथ पुनः-पुनः नये सिरे से कार्य प्रारम्भ करते हैं । मानव अतीत को संचित एंव लिखित ज्ञान के आधार पर नये ज्ञान का निर्माण करता है ।"

पर्यावरणीय प्रभाव :-

राव ﴾1965﴿ एंव गुप्ता ﴾1967﴿ महोदय ने वातावरणीय तत्वों का शैक्षिक निष्पादन के सन्दर्भ में अध्ययन किया और पाया कि शैक्षिक पर्यावरण, बुद्धि तथा सामाजिक-आर्थिक स्तर में सकारात्मक सम्बन्ध है ।

चतुर्वेदी ﴾1970﴿ महोदय ने छात्र-अध्यापकों के व्यक्तित्व विकास पर परिवार, पड़ोसी और विद्यालय को प्रमुख माना है । इनमें निर्मित पर्यावरण ही छात्रों के विकास की दिशा को सकारात्मक स्वरूप प्रदान करते हैं ।

शर्मा (1971) ने अपने अध्ययनों में पाया कि खुला व निरानन्द पर्यावरण बच्चों के उच्च शैक्षिक निष्पादन में सहायक होता है, जबकि बनावटी और नियंत्रित पर्यावरण शैक्षिक निष्पादन पर विपरीत प्रभाव डालते हैं ।

पिल्लई (1973) महोदय ने खुले वातावरण वाले विद्यालयों के शैक्षिक निष्पादन का अध्ययन किया और पाया कि ऐसे पर्यावरण के बच्चे अधिक ग्राह्यशीलता का विकास करते हैं ।

श्रीवास्तव (1974) महोदय ने अपराधी जनजातियों के बच्चों का अध्ययन किया और पाया कि इनमें औसत से कम बुद्धि, विश्वास, शर्मीलापन, अधार्मिकता, चिन्ता का अभाव, संवेग अनियन्त्रण आदि दुर्गुण खराब वातावरण के कारण विकसित हुये हैं ।

गौर (1980) ने ग्रामीण और शहरी पर्यावरण के प्रभाव का व्यक्तित्व विकास पर अध्ययन किया और पाया कि शहरी पर्यावरण का सकारात्मक प्रभाव शैक्षिक सफलता पर अधिक पड़ता है ।

पिल्लई, एन0 पी0 (1970) ने माध्यमिक स्कूलों के छात्र/छात्राओं की शैक्षिक उपलब्धि पर अशैक्षिक कारकों के प्रभाव का अध्ययन किया ।

उद्देश्य :-

1. छात्र/छात्राओं के गृह-पर्यावरण (स्थिति) और अन्य कारकों के शैक्षिक उपलब्धि पर प्रभाव का अध्ययन करना ।
2. सरकारी एंव प्राइवेट विद्यालय तथा ग्रामीण तथा शहरी विद्यालयों के छात्र/छात्राओं की शैक्षिक उपलब्धि का अध्ययन करना ।
3. यौन-भिन्नता का पर्यावरण तथा शैक्षिक उपलब्धि पर प्रभाव का अध्ययन करना ।

4. शिक्षण विधियों के सुधार का शैक्षिक उपलब्धि पर प्रभाव का अध्ययन करना ।

न्यादर्श :-

त्रिवेन्द्रम शहर के 24 विद्यालयों के छात्र/छात्राओं का चुनाव न्यादर्श हेतु किया गया । इसमें सरकारी तथा प्राइवेट और ग्रामीण तथा शहरी दोनों ही प्रकार के विद्यालय थे । इस चुनाव में अच्छे परीक्षाफल देने वाले तथा खराब परीक्षाफल देने वाले विद्यालयों का चयन प्रयोजन हेतु किया गया था ।

निष्कर्ष :-

§1§ छात्रों की शैक्षिक उपलब्धि पर अन्य कारकों के अलावा गृह-वातावरण का अधिक प्रभाव प्रतीत हुआ ।

§2§ प्रशासनिक निर्देशों का प्रभाव उन विद्यालयों की शैक्षिक-उपलब्धि पर पड़ा, जहाँ प्रभावशाली शिक्षण विधियों का प्रयोग शिक्षकों द्वारा होता था ।

§3§ शैक्षिक-उपलब्धि पर शिक्षक-योग्यता का सकारात्मक प्रभाव स्थापित हुआ ।

§4§ परिवार की स्थिति तथा माता-पिता की शिक्षा का बच्चों की शैक्षिक-उपलब्धि पर सकारात्मक प्रभाव पड़ा ।

§5§ सामाजिक-आर्थिक स्तर का छात्र/छात्राओं की उपलब्धि पर सार्थक-प्रभाव पड़ता है ।

§6§ सबसे अधिक गृह-पर्यावरण का प्रभाव §ग्रामीण/शहरी§ बच्चों की शैक्षिक-उपलब्धि पर पड़ा ।

एन0 सी0 ई0 आर0 टी0 §1978§ के द्वारा एक अध्ययन बालक के गृह-घटक तथा बालक की बुद्धि का शैक्षिक-उपलब्धि के सन्दर्भ में सम्पन्न किया गया ।

उद्देश्य :-

1. बालक के विकास पर परिवार के पर्यावरण में व्याप्त विभिन्न कारकों का अध्ययन करना ।

2. गृह-घटकों का शैक्षिक उपलब्धि के सन्दर्भ में अध्ययन करना ।

3. गृह-घटकों की बुद्धि के सन्दर्भ में अध्ययन करना ।

4. बालक के सामाजिक-आर्थिक स्तरों के प्रभाव का बुद्धिलब्धि पर अध्ययन करना ।

निष्कर्ष :-

§1§ गृह-घटक बच्चों की शैक्षिक उपलब्धि पर सार्थक प्रभाव डालते हैं ।

§2§ बच्चों की बुद्धि का शैक्षिक उपलब्धि के साथ सार्थक सम्बन्ध स्थापित होता है ।

§3§ परिवार के सामाजिक-आर्थिक स्तर शैक्षिक उपलब्धि को प्रभावित करते हैं ।

§4§ बच्चों की भाषा का विकास सबसे अधिक प्रभावशाली गृह-घटक है जिसने उच्च स्तर पर शैक्षिक-उपलब्धि को प्रभावित किया है ।

§5§ पारिवारिक सुविधाओं तथा शिक्षण सामग्रियों का अभाव बच्चों की शैक्षिक-उपलब्धि को प्रभावित करते हैं ।

§6§ परिवार का अन्य सदस्यों के शिक्षा के प्रति विचार बच्चों की उत्तम शैक्षिक उपलब्धि को प्रभावित करते हैं ।

सालुन्के, आर0 बी0 §1979§ ने गृह-पर्यावरण, सामाजिक-आर्थिक स्तर और आर्थिक प्रबन्ध का शैक्षिक उपलब्धि के सन्दर्भ में अध्ययन किया ।

उद्देश्य :-

1. एम0 एस0 विश्वविद्यालय के प्रथम वर्ष के छात्र/छात्रा के गृह-पर्यावरण, परिवार का शैक्षिक वातावरण, परिवार में संवेगात्मक वातावरण, सामाजिक-आर्थिक स्तर, आर्थिक प्रबन्ध, और शैक्षिक उपलब्धि का अध्ययन करना ।

2. गृह-पर्यावरण, सामाजिक-आर्थिक स्तर और आर्थिक प्रबन्धन का शैक्षिक उपलब्धि के साथ सम्बन्ध का अध्ययन करना ।

3. आयु भिन्नता, यौन भिन्नता तथा फैकल्टीज भिन्नता पर गृह-पर्यावरण, सामाजिक-आर्थिक स्तर, और आर्थिक प्रबन्धन के प्रभाव का अध्ययन करना।

न्यादर्श :-

अध्ययन के न्यादर्श हेतु 693 छात्र/छात्राओं (प्रथम वर्ष) का चयन किया गया । इनमें विज्ञान वर्ग, वाणिज्य वर्ग, कलावर्ग और गृहविज्ञान वर्ग आदि के छात्र/छात्रायें थीं ।

निष्कर्ष :-

(1) शैक्षिक उपलब्धि और गृह-पर्यावरण के बीच सम्बन्ध पाया गया ।

(2) शैक्षिक वातावरण और संवेगात्मक व्यवहार आदि शैक्षिक उपलब्धि के साथ सम्बन्ध रखते हैं ।

(3) शैक्षिक-सुविधायें और संवेगात्मक परिस्करण (परिवार की) शैक्षिक-उपलब्धियों के विकास में सहायक होती है ।

(4) सामाजिक-आर्थिक स्तर पर प्रभाव शैक्षिक-उपलब्धि पर नहीं पड़ता है जबकि आर्थिक प्रबन्धन का प्रभाव पड़ता है ।

§5§ विभिन्न वर्गों के छात्र/छात्राओं की शैक्षिक-उपलब्धि पर गृह-पर्यावरण, सामाजिक-आर्थिक स्तर, आर्थिक प्रबन्धन आदि का प्रभाव भिन्नता लिये हुए पाया गया ।

§6§ विज्ञान वर्ग तथा गृह-विज्ञान के छात्र/छात्रा गृह-पर्यावरण में उत्तम पाये गये ।

§7§ गृह-पर्यावरण, सामाजिक-आर्थिक स्तर तथा आर्थिक प्रबन्धन में पुरुष तथा स्त्री भिन्नता लिये हुये थे ।

§8§ आयु-भिन्नता में गृह-पर्यावरण तथा आर्थिक प्रबन्धन का कोई प्रभाव नहीं पाया गया, जबकि सामाजिक-आर्थिक स्तर का सम्बन्ध आयु भिन्नता पर पाया गया ।

सालू, विनिकेट §1979§ ने कोयम्बटूर के हाई स्कूल छात्रों पर स्कूल के बाहर के पर्यावरण का प्रभाव नामक विषय का अध्ययन किया ।

उद्देश्य :-

1. हाई-स्कूल स्तर के छात्र/छात्राओं की शैक्षिक उपलब्धि पर आर्थिक स्तर के प्रभाव का अध्ययन करना ।
2. परिवार में शिक्षा का स्तर वयस्कों के साथ सम्पर्क, जन्म का क्रम, संवेगात्मक सुरक्षा, माता-पिता की शिक्षा के प्रति दृष्टिकोण तथा सांस्कृतिक पर्यावरण के प्रभाव को शैक्षिक उपलब्धि पर ज्ञात करना ।

न्यादर्श :-

प्रस्तुत शोध कार्य हेतु छात्र/छात्राओं की कुल संख्या 300 रखी गयी । इनका चयन विषमांग समूह के आधार पर किया गया । छात्र/छात्राओं के छः हाई-

स्कूल स्तर के विद्यालय लिये गये और प्रत्येक विद्यालय से प्रत्येक स्कूल के 25 लड़के और 25 लड़कियों का चयन किया गया ।

निष्कर्ष :-

(1) छात्र/छात्राओं के पारिवारिक, सामाजिक पर्यावरण का शैक्षिक-उपलब्धि के साथ धनात्मक सह-सम्बन्ध पाया गया ।

(2) परिवार का आर्थिक स्तर बच्चों की शैक्षिक उपलब्धि को प्रभावित करता है ।

(3) छात्रों के शैक्षिक निष्पादन पर उनके बौद्धिक-स्तर, संवेगात्मक सुरक्षा आदि का प्रभाव पड़ता है ।

(4) बच्चों की शैक्षिक-उपलब्धि पर सबसे अधिक प्रभाव परिवार का पर्यावरण (घटक) का पड़ता है ।

(5) छात्र/छात्राओं की निष्पत्तियों में परिवार के पर्यावरण (व्यवहार) के कारण भिन्नता स्थापित होती है ।

मिश्रा, के० एस० (1982) ने गृह और विद्यालय पर्यावरण के प्रभाव का वैज्ञानिक सृजनशीलता के सन्दर्भ में अध्ययन किया ।

उद्देश्य :-

1. वैज्ञानिक सृजनशीलता के विकास पर परिवार तथा विद्यालय के प्रभाव का अध्ययन ।

2. सिर्फ परिवार पर्यावरण के प्रभाव का वैज्ञानिक सृजनशीलता के विकास पर अध्ययन ।

3. विद्यालय वातावरण कैसे वैज्ञानिक सृजनशीलता को प्रभावित करता है, का अध्ययन करना ।

4. गृह पर्यावरण घटक और विद्यालय पर्यावरण घटकों का वैज्ञानिकता के बारे में भविष्यवाणी करना ।

5. उच्च और निम्न वैज्ञानिक सृजनशीलता वाले बच्चों के गृह तथा विद्यालय प्रत्यक्षीकरण कैसे भिन्नता रखते हैं, जानना ।

न्यादर्श :-

न्यादर्श हेतु आगरा, मैनपुरी, फर्रुखाबाद और कानपुर जिलों से कक्षा 12 के 197 छात्र/छात्राओं को चुना गया है ।

निष्कर्ष :-

(1) छात्र और छात्राओं में वैज्ञानिक सृजनशीलता के बारे में सार्थक भिन्नता नहीं पाई गयी ।

(2) छात्रों के विद्यालय पर्यावरण के प्रत्यक्षीकरण में और स्वाभाविकता के मध्य सार्थक सम्बन्ध पाया गया । साथ ही छात्रा वर्ग में परिवार के पर्यावरण प्रत्यक्षीकरण और वैज्ञानिक सृजनात्मकता के बीच सार्थक सम्बन्ध पाया गया ।

(3) छात्र वर्ग में विद्यालय पर्यावरण के विभिन्न घटकों और वैज्ञानिक सृजनशीलता में सम्बन्ध पाया गया, जबकि छात्रा वर्ग का सम्बन्ध सार्थक रूप से नहीं पाया गया ।

(4) छात्रा वर्ग में वैज्ञानिक सृजनशीलता का विकास पालन-पोषण के तरीकों (प्रत्यक्षीकरण) के प्रभाव के रूप में विकसित पाया गया ।

(5) छात्र वर्ग में जिज्ञासा तथा सुरक्षा में नकारात्मक सम्बन्ध पाया गया ।

§6§ छात्रा वर्ग अपने परिवार के पर्यावरण से उच्च प्रत्यक्षीकरण पाती हैं और विद्यालय पर्यावरण से सामान्य । फिर भी छात्रा वर्ग ने उच्च पर्यावरण के प्रभाव में उच्चता प्राप्त की है ।

दयाल, सत० §1983§ ने उच्च तथा निम्न शैक्षिक उपलब्धि वाले छात्र/छात्राओं पर सामाजिक-आर्थिक स्तर का अध्ययन किया ।

निष्कर्ष :-

§1§ सामाजिक-आर्थिक स्तर शैक्षिक-उपलब्धि को प्रभावित करते हैं ।

§2§ उच्च-सामाजिक-आर्थिक स्तर वाले छात्र/छात्रा शैक्षिक उपलब्धि में भी उच्च से निम्न स्तर पर रहे ।

§3§ निम्न सामाजिक-आर्थिक स्तर वाले छात्र/छात्रा शैक्षिक उपलब्धि में भी उच्च से निम्न स्तर पर रहे ।

§4§ आर्थिक स्तर की श्रेष्ठता बच्चों के लिये उत्प्रेरक का कार्य करती हैं ।

§5§ समृद्ध आर्थिक स्तर बच्चों में सुविधायें, विश्वास और पुरस्कार आदि सकारात्मक भावों का स्वत: ही विकास कर देता है ।

शाह व शर्मा §1984§ ने विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि पर पारिवारिक वातावरण के प्रभाव का अध्ययन किया ।

निष्कर्ष :-

§1§ पारिवारिक वातावरण एवं शैक्षिक उपलब्धि के मध्य सार्थक एवं उच्च धनात्मक सम्बन्ध पाया गया ।

§2§ 9 प्रतिशत से लेकर 33 प्रतिशत तक शैक्षिक उपलब्धि में विचलन पारिवारिक वातावरण के कारण होता है ।

§3§ लड़कों की अपेक्षा लड़कियों में पारिवारिक वातावरण अधिक प्रभावशाली होता है ।

§4§ पारिवारिक वातावरण को अन्य घटक प्रभावशाली या निष्क्रिय बनाने में सहयोग देते हैं ।

अंजुम आरा §1985§ ने गृह पर्यावरण और शैक्षिक-उपलब्धि के मध्य सम्बन्ध जानने के लिये अध्ययन किया था ।आपने इलाहाबाद विश्वविद्यालय के शिक्षा विभाग में रहकर किशोरावस्था के छात्र/छात्राओं पर यह अध्ययन किया ।

निष्कर्ष :-

§1§ छात्र/छात्राओं का गृह-पर्यावरण तथा शैक्षिक-उपलब्धि के मध्य कोई सार्थक सम्बन्ध नहीं पाया गया ।

§2§ उच्च शैक्षिक उपलब्धि तथा निम्न-शैक्षिक-उपलब्धि वाले किशोर तथा किशोरियाँ अप्रभावित रहते हैं ।

§3§ गृह-पर्यावरण के कुछ घटक किशोर तथा किशोरियों की शैक्षिक उपलब्धि में भिन्नता स्थापित करते हैं ।

अग्रवाल, रेखा §1988§ ने बालक एंव बालिकाओं की शैक्षिक निष्पत्ति पर पारिवारिक दशा का प्रभाव नामक विषय पर शोध कार्य किया ।

उद्देश्य :-

1. परिवार के माता-पिता की उच्च एंव निम्न अभिवृत्तियों §स्वीकारोक्ति, एकाग्रता, अस्वीकारोक्ति§ का बालक की शैक्षिक-उपलब्धि पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन करना ।

2. माता-पिता की उच्च एंव निम्न अभिवृत्तियों का बालिकाओं की शैक्षिक उपलब्धि पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन करना ।

निष्कर्ष :-

§1§ माता-पिता की बालकों के प्रति उच्च एंव निम्न सकारात्मक अभिवृत्तियों का उनकी शैक्षिक उपलब्धि पर सार्थक अन्तर स्थापित होता है ।

§2§ माता-पिता की अभिवृत्तियों §स्वीकारोक्ति, एकाग्रता, अस्वीकारोक्ति§ का बालिकाओं की शैक्षिक उपलब्धि पर कोई सार्थक अन्तर स्थापित नहीं होता है ।

§3§ स्वीकारोक्ति, एकाग्रता और अस्वीकारोक्ति आदि माता-पिता की अभिवृत्तियों का छात्र-छात्राओं की शैक्षिक उपलब्धि पर सार्थक प्रभाव पड़ता है ।

अरोड़ा, सन्तोष §1991§ ने विद्यार्थियों के गृह पर्यावरण व शैक्षिक उपलब्धि में सम्बन्ध का अध्ययन किया ।

उद्देश्य :-

1. उच्च गृह वातावरण वाले बालकों की शैक्षिक उपलब्धि का अध्ययन करना ।
2. उच्च गृह वातावरण वाली बालिकाओं की शैक्षिक उपलब्धि का अध्ययन करना ।
3. निम्न गृह वातावरण वाली बालिकाओं की उपलब्धि का अध्ययन करना ।
4. निम्न गृह वातावरण वाले बालकों की उपलब्धि का अध्ययन करना ।
5. बालक/बालिकाओं की उपलब्धि स्तर एंव गृह वातावरण में सम्बन्धों का अध्ययन करना ।

न्यादर्श :-

(1) आगरा शहर के छः इण्टर कॉलेजों के 173 बालक तथा 175 बालिकाओं का प्रदत्त संकलन हेतु चयन किया गया ।

(2) गृह वातावरण में उच्च स्तरीय वर्ग छात्र-25 तथा छात्रा-25 को रखा गया । इसके साथ ही निम्न स्तरीय वर्ग छात्र-25 तथा छात्रा-25 को रखा गया । इस प्रकार से शैक्षिक उपलब्धि के साथ सम्बन्ध का मूल्यांकन करना उपयुक्त समझा गया ।

निष्कर्ष :-

(1) निम्न स्तरीय गृह पर्यावरण का शैक्षिक उपलब्धि के साथ सम्बन्ध होता है ।

(2) उच्च स्तरीय गृह-वातावरण वाले छात्रों/छात्राओं के वर्ग में "निश्चयात्मकता" पुरस्कार, पोषण, अनुमति सूचकता, आदि का सकारात्मक प्रभाव शैक्षिक उपलब्धि पर पड़ता है ।

(3) निम्न स्तरीय गृह-पर्यावरण वाले बालकों के सन्दर्भ में पोषण, पुरस्कार, अनुमति सूचकता, आदि घटक शैक्षिक उपलब्धि के साथ घनात्मक रूप से सम्बन्धित पाये गये ।

(4) वातावरण के व्यवहारिक घटक (नकारात्मक) दण्ड सुविधाओं से वंचित रहना आदि भी शैक्षिक उपलब्धि पर प्रभाव डालते हैं ।

(5) छात्रावर्ग के सन्दर्भ में पोषण, पुरस्कार, अनुमति सूचकता, निश्चयात्मकता आदि घटक शैक्षिक उपलब्धि से घनात्मक सम्बन्ध स्थापित पाये गये ।

4. छात्र-अध्यापकों का व्यक्तित्व :-

बफ एंव पेक्चरटन (1932) महोदया ने शिक्षण-प्रशिक्षण प्राप्त करने वाले छात्राअध्यापकों के व्यक्तित्व प्रतिभावों का अध्ययन किया । आपने एम0एन0पी0आई0 का प्रयोग करके उच्च, सामान्य और निम्न स्तरीय छात्राध्यापकों के प्रतिभावों का विश्लेषण किया, जिसमें सार्थक भिन्नता स्थापित हुई ।

हाडले (1953) महोदय ने अमेरिका के छात्राध्यापकों के व्यक्तित्व प्रतिभावों का अध्ययन किया । निष्कर्षों में आपने पाया कि छात्राध्यापकों की शिक्षण में सफलता का सम्बन्ध व्यक्तित्व के तत्व - जी, एम, एन, क्यू एंव सी आदि से था ।

तारपे (1963) महोदय ने इंग्लैंड के एक प्रशिक्षण कॉलेज के 128 छात्राध्यापकों को अपने अध्ययन हेतु चुना । उनके अध्ययन का उद्देश्य "छात्राध्यापकों के चयन में व्यक्तित्व तत्वों के प्रभावों का अध्ययन" था । आपने उनके व्यक्तित्व तत्वों में अपूर्व भिन्नता पाई । ये छात्राध्यापक व्यक्तित्व तत्व - सी0एफ0, आदि में उच्चता तत्व - ए, जी, ओ, में सामान्यता धारण किये हुये पाये गये, जबकि तत्व - एल, एन एंव क्यू-। में निम्न स्तर प्रगट करते हुये पाये गये ।

बारबरटन (1963) महोदय ने छात्राध्यापकों की शिक्षण में सफलता का अध्ययन किया । आपने बारह हफ्तों तक उनकी कक्षा क्रियाओं का विभिन्न परिवेक्षकों द्वारा निरीक्षित करवाया । शोधकर्ता ने व्यक्तित्व तत्व - जी, आई, क्यू-3 आदि के साथ सार्थकता लिये हुये घनात्मक सह-सम्बन्ध पाया जबकि कम सह-सम्बन्ध व्यक्तित्व तत्व - सी, और एम के साथ पाया ।

सोलोमन (1965) महोदय ने छात्राध्यापकों के व्यक्तित्व तत्व और मनोवृत्तियों का अध्यापक प्रशिक्षण सफलता के सन्दर्भ में अध्ययन किया । आपने यार्कशायर

के प्रशिक्षण कॉलेज के 155 छात्राध्यापकों को इस कार्य हेतु चयन किया । आपने व्यक्तित्व तत्व विश्लेषण में पाया कि महिला छात्राध्यापिकायें शिक्षण में अधिक सफल रहीं जबकि बच्चों की विभिन्न आवश्यकता पूर्ति के प्रति वे चिन्तित दिखाई दीं । उनके व्यक्तित्व में तत्व-स्नेही, समाजप्रियता, प्रसन्नता, आदि का प्रगटीकरण हुआ । उनका व्यक्तित्व बहिर्मुखी होने के नाते तत्व - स्वाभाविकता, सरलता, प्रगतिशीलता, एंव आलोच्य विचार, आदि उसी प्रकार से सार्थक पाये गये जैसे बुद्धि सार्थक होती है ।

सी॰ ए॰ एस॰ ई॰ (1968) के द्वारा किये गये शोध में व्यक्तित्व तत्व और मनोवृत्ति का शिक्षण पर प्रभाव का मूल्यांकन था । आपके शोध में विवाहित स्त्रियों और अविवाहित प्रौढ़ स्त्रियाँ (अध्यापिकाओं) को प्रयुक्त किया गया था। आपके तुलनात्मक निष्कर्षों में पाया गया कि विवाहित परिपक्व प्रौढ़ महिला अध्यापिकायें अपने शिक्षण को प्रभावशाली बनाने के प्रति दृढ़ निश्चयी एंव इच्छुक प्रतीत हुई जबकि नई अध्यापिकायें जो परिवीक्षाकाल पर थीं, वे इतनी उत्साही प्रतीत नहीं हुई ।दोनों ही समूह उच्च स्तरीय व्यवसायिक संतुष्टि और शिक्षण व्यवसाय के प्रति गहन रुचि प्रगट करने वाले पाये गये ।

आरनोल्ड (19   ) महोदय ने 78 छात्राध्यापिकाओं पर कैटिल महोदय के 16 पी0 एफ0 का प्रयोग किया । आपने उनके व्यक्तित्व प्रतिमानों का अध्ययन अच्छे अध्यापक की विशेषताओं को जानने के लिये किया । आपने पाया कि शिक्षण सफलता के लिये व्यक्तित्व तत्व - सी, एफ, ए, जी, ओ, आदि प्रमुखता लिये हुए थे ।

बर्क (1969) महोदय ने 85 महिला छात्राध्यापिकाओं एंव शिक्षण पर्यवेक्षकों के समूह को अपने अध्ययन का क्षेत्र बनाया । इन समूहों में अधिक सफल समूहों में तत्व - सुरक्षा भाव, आत्मतुष्टि, स्वतन्त्रता, आदि का निम्न स्तर रहा, अपेक्षाकृत शिक्षण पर्यवेक्षकों के । शिक्षण पर्यवेक्षकों के समान छात्राध्यापकों की व्यक्तित्व विशेषतायें -

प्रशासन, अहंभाव, चिन्ता, आदि रही । इनमें से कुछ महिला छात्राध्यापिकाओं में तत्व – आई, क्यू-2, आदि उच्च पाये गये, अपेक्षाकृत उनके पर्यवेक्षकों के ।

डेविस एंव सैटर्ले (1969) महोदय ने छात्राध्यापकों की व्यक्तित्व विशेषताओं का उच्च एंव निम्न स्तरों पर तुलनात्मक अध्ययन किया । आपने कैटिल महोदय के व्यक्तित्व परीक्षण को दो बार प्रयोग किया । आपने प्रथम प्रयोग उस समय किया छात्राध्यापकों ने प्रशिक्षण विभाग में प्रवेश लिया, और दूसरी बार तब प्रयोग किया, जब फाइनल शिक्षण कार्य चल रहा था । दोनों ही बार में व्यक्तित्व विशेषता तत्व – जी, आई, ओ, क्यू-4, आदि दोनों ही समूहों में सार्थकता लिये हुये पाये गये । कम निष्पादन व्यक्तित्व तत्व – आई +, ओ+, क्यू-4+, आदि में पाया गया ।

गैल्प (1769) महोदय ने बी0एड0 छात्रों पर 16 पी0एफ0 के द्वारा व्यक्तित्व विशेषताओं का मापन किया और पाया कि बी0एड0 छात्र सामान्य स्तर से तत्व – क्यू-1 में भिन्नता रखते हैं और छात्राओं के व्यक्तित्व तत्व – एम एंव जी में भिन्नता रखते हैं । आपने पाया कि पुरुष छात्राध्यापकों में अधिक मुलायमियत और स्वतन्त्र चिन्तन तत्व पाये जाते हैं, जबकि महिला छात्राध्यापिकाओं में इनका प्रभाव कम पाया गया । साथ ही महिलाओं में काल्पनिकता और रचनात्मकता तत्व अधिक पाये गये ।

त्रिवेदी (1994) महोदय ने छात्र-अध्यापकों के व्यक्तित्व पार्श्वदृश्य का अध्ययन किया और पाया कि पुरुष व स्त्री छात्र-अध्यापकों की व्यक्तित्व विशेषताओं में अन्तर पाया जाता है ।

अध्याय - तृतीय

3. उपकरण

4. प्रदत्त संकलन विधियाँ

5. प्रदत्त विश्लेषण विधियाँ ।

अध्ययन की रूपरेखा

प्रस्तुत शोध कार्य झाँसी मण्डल में स्थित शिक्षक प्रशिक्षण करने वाले महा-विद्यालयों में अध्यापक प्रशिक्षणरत छात्र/छात्राओं पर सम्पन्न किया जायेगा । इसमें सत्र 1993-94 के नियमित तथा विशेष योजना से सम्बन्धित सभी छात्र/छात्रा का चुनाव किया गया है । इन छात्र/छात्रा अध्यापकों का गृह-पर्यावरण, व्यक्तित्व लक्षण तथा शिक्षण कौशल, आदि परिवर्तियों के रूप में अध्ययन किया जायेगा । गृह-पर्यावरण के प्रभाव का अध्ययन डॉ० के० एस० मिश्रा (1989) द्वारा विकसित गृह-पर्यावरण अनुसूची के द्वारा किया जायेगा । इन छात्र/छात्रा प्रशिक्षणरत अध्यापकों के व्यक्तित्व का अध्ययन डॉ० कपूर (1970) द्वारा रूपान्तरित (हिन्दी) 16 पी० एफ० के द्वारा किया जायेगा । इसके पश्चात् इनके शिक्षण कौशल तथा कक्षा व्यवहार का मूल्यांकन शोध छात्रा द्वारा विकसित अनुसूची के द्वारा किया जायेगा। इस प्रकार से अध्ययन के द्वारा परिवार के प्रभावों के द्वारा विकसित अध्यापकीय व्यक्तित्व तथा कक्षा व्यवहार का मूल्यांकन सम्भव हो सकेगा । वर्तमान की अध्यापकीय समस्या जो समर्पित व्यक्तित्व के अभाव के कारण ज्वलंत बनी हुई है, का समाधान आसानी से प्राप्त किया जा सकेगा ।

न्यादर्श (सैम्पल)

व्यवहारिक रूप में जब अनुसंधानकर्ता को कुछ समस्याओं का समाधान करना होता है तो उसके सामने यह प्रश्न उठता है कि वह किस जनसंख्या का प्रयोग करे । जनसंख्या के निर्धारित हो जाने पर शोधकर्ता सभी सदस्यों पर अपने अभिकरणों का प्रयोग नहीं कर पाता है क्योंकि समय, धन, शक्ति का अभाव रहता है । अतः शोधकर्ता एक निश्चित न्यादर्श का चुनाव करता है । इसलिये न्यादर्श एक समष्टि

का अंश होता है जिसमें अपनी पापुलेशन की समस्त विशेषताओं का स्पष्ट प्रतिबिम्ब रहता है । न्यादर्श के चयन के लिये शोधकर्ता ने निम्न बातों का ध्यान रखा :-

1. सम्भाव्यता के नियमों का पालन,
2. समिष्ट के सभी स्तरों का समावेश,
3. पर्याप्त आकार,
4. समिष्ट का प्रतिनिधित्व
5. सामान्यीकरण,
6. अभिनीत विहीनता और
7. विश्वसनीयता ।

सामाजिक या व्यवहार सम्बन्धी विज्ञानों में जिन समिष्टियों का अध्ययन किया जाता है, वे प्राय: अपरिमित होती हैं । वे संभागी और एक सूत्र में बंधी न होकर बहुभांगी तथा कई उपसमूहों में बँटी होती हैं । उपसमूह - आयु, लिंग, जाति, अर्थ, धर्म, आदि आधारों पर बंटे होते हैं । इन्हीं आधारों को उपसमूहों का गुण धर्म भी माना जाता है । जब समिष्ट का स्वरूप सजातीय होता है, जब न्यादर्श चयन में कोई कठिनाई नहीं आती, परन्तु जब समिष्ट का स्वरूप विषम होता है तो न्यादर्श की इकाइयों के चयन के लिये सैम्पलिंग प्रक्रिया का प्रयोग करना पड़ता है । शोधकर्ता को सैम्पलिंग करते समय निम्न बातों पर ध्यान रखना चाहिए :- (1) प्रत्येक इकाई का प्रतिनिधित्व (2) मूल जनसंख्या के सभी गुण होने चाहिए, (3) न्यादर्श की इकाइयों की जनसंख्या उपयुक्त होनी चाहिए, (4) अभिनति से मुक्त होना चाहिए (मखीजा, 1986) । जब शोधकर्ता इन बातों पर ध्यान देकर अपने प्रति चयन का चुनाव करता है तो समय, धन और शक्ति की बचत होती है, अध्ययन में गहनता आती है, प्रशासन में सुविधा होती है, विश्वसनीयता, अध्ययन में उपयुक्तता एंव बोधगम्यता, आदि लाभ प्राप्त होते हैं ।

प्रतिचयन के चुनाव में समिष्ट के स्वरूप को ध्यान में रखा जाता है और उसी के अनुरूप विधि का प्रयोग किया जाता है । सिंह (1988, पृ0 225) ने न्यादर्श चयन के लिये दो विधियों को मान्यता दी है :-

§क§ सम्भाव्यता प्रतिदर्श विधि §प्रोबेबिलिटी सैम्पलिंग§

§ख§ असम्भाव्यता प्रतिदर्श विधि §नॉन-प्रोबेबिलिटी सैम्पलिंग§

सम्भाव्यता प्रतिदर्श वह प्रतिदर्श योजना है जिसमें शोधकर्ता यह सम्भावना करता है कि चुने हुये प्रतिदर्श में मूल जनसंख्या की सभी विशेषतायें विद्यमान हैं । इसमें जनसंख्या की प्रत्येक इकाई के चुने जाने की समान सम्भावना अथवा अथवा कोई न कोई सम्भावना अवश्य होती है । इस विधि द्वारा प्रतिदर्श चुनने हेतु तीन प्रविधियों का प्रयोग किया जाता है -

1. सरल अनियत प्रतिदर्श §सिम्पल रेन्डम सैम्पलिंग§
2. वर्गबद्ध अनियत प्रतिदर्श §स्ट्रेटीफाइड रेन्डम सैम्पलिंग§
3. समूह प्रतिदर्श §क्लस्टर सैम्पलिंग§

सरल अनियत प्रतिदर्श में इस बात की संकल्पना होती है कि प्रत्येक इकाई में सम्पूर्ण वर्ग की सभी विशेषतायें तथा गुण होते हैं तथा प्रतिचयन में प्रत्येक व्यक्ति के प्रतिदर्श में चुने जाने की सम्भावना समान होती है । इसमें चुनाव के लिये लाटरी विधि, टिपिट अंक विधि, निश्चित क्रम विधि, तथा ग्रिड विधि का प्रयोग किया जाता है । प्राय: इस विधि द्वारा चयन किये गये प्रतिदर्श को प्रतिनिधित्वकारी मान लिया जाता है, परन्तु ऐसी भी सम्भावना हो सकती है कि चुने हुये प्रतिदर्श में भिन्न-भिन्न विशेषकों वाले व्यक्तियों के अनुपात में एंव मूल जनसंख्या के भिन्न-भिन्न विशेषकों वाले व्यक्तियों के अनुपात में अन्तर हो ।

अत: इस अंतर को समाप्त करने के लिये वर्गबद्ध प्रतिदर्श §स्ट्रेटीफाइड सैम्पलिंग§ का प्रयोग किया जाता है । इसका अर्थ होता है, "समिष्ट के सभी सदस्यों में से किसी भी सदस्य को लिये जाने की प्राथमिकता का समान होना । अर्थात् समिष्ट से किसी दूसरे प्रतिदर्श के लिये जाने की प्राथमिकता वही है जो प्राथमिकता पहले प्रतिदर्श के लिये जाने की थी ।"

समूह प्रतिदर्श :-

जब कभी जनसंख्या अत्यधिक विस्तृत और व्यापक होती है एवं दूर-दूर तक फैली हुई होती है, तब सुविधापूर्वक अध्ययन करने के लिये जनसंख्या का समूह प्रतिदर्श विधि से अध्ययन करने के लिये क्षेत्रीय इकाइयों में विभाजित करके जनसंख्या में विद्यमान विशेषकों के अनुसार बड़े-बड़े समूह बना लेते हैं । ऐसा करने से अध्ययन के समय व धन की भी बचत होती है, वे बड़े समूह या गुच्छे साधारण अनियत विधि या वर्गबद्ध अनियत विधि द्वारा बनाये जाते हैं । इसके बाद बड़े समूहों में से छोटे प्रतिदर्श का चयन किया जाता है ।

असम्भाव्यता प्रतिदर्श के लिये कहा गया है कि समिष्ट के किसी या प्रत्येक तत्त्व के प्रतिचयन में सम्मिलित होने की कोई निश्चितता नहीं होती है । इसका प्रयोग तीन रूपों में किया जाता है -

1. आकस्मिक न्यादर्शन (एक्सीडेन्टल सैम्पलिंग)
2. अंश न्यादर्शन (कोटा सैम्पलिंग)
3. उद्देश्यीय न्यादर्शन (परपजिब सैम्पलिंग)

सम्भाव्यता प्रतिदर्श विधि काफी खर्चीली व समय व्यय करने वाली होती है । शोध छात्रा का स्वभाव शिक्षण कार्य में व्यस्त रहने के कारण असम्भाव्यता प्रतिदर्श विधि का प्रयोग शोध कार्य हेतु किया गया । डॉ0 अहलूवालिया ने शोध कार्य की उपादेयता के आधार पर इस विधि को अच्छा माना है । अतः शोध छात्रा ने वर्तमान कार्य की आवश्यकताओं को पूरा करने वाली इस विधि के अंतर्गत "उद्देश्यीय न्यादर्शन" (परपजिब सैम्पलिंग) का प्रयोग किया है । प्रस्तुत अध्ययन में शोध छात्रा ने बुन्देलखंड विश्वविद्यालय के अंतर्गत बी0एड0 के पांच महाविद्यालयों के छात्र/छात्रा-अध्यापकों के गृह-पर्यावरण व्यक्तित्व विशेषताओं और शिक्षण कौशल का आँकलन किया है, इस हेतु उद्देश्यीय न्यादर्श प्रविधि को उपयुक्त, सक्षम और संतोषजनक माना गया है ।

उद्देश्यीय न्यादर्श के द्वारा अध्ययन हेतु, आवश्यकतानुसार समष्टि में से विशिष्ट तत्वों का चयन किया जाता है । इस प्रकार के न्यादर्श का चुनाव उद्देश्य को सामने रखकर जानबूझकर किया जाता है, ताकि एक बड़े समूह की सभी विशेषतायें न्यादर्श में आ सकें । अतः शोध-छात्रा ने अपने अध्ययन हेतु उद्देश्यीय न्यादर्श को ही उपयुक्त माना, जो बी0एड0 के प्रशिक्षणरत अध्यापकों के व्यक्तित्व गठन पर पड़ने वाले गृह प्रभावों और व्यक्तित्व का अध्ययन यौन भिन्नता और कक्षा व्यवहार के सन्दर्भ में करने के लिये उपयुक्त प्रतीत होता है । अतः न्यादर्श हेतु सत्र 1993-94 के उन सभी बी0एड0 प्रशिक्षणार्थियों को शोधकार्य हेतु लिया गया है, जो बुन्देलखंड विश्वविद्यालय के अतर्रा कॉलेज, अतर्रा, बुन्देलखण्ड कॉलेज, झाँसी, दयानन्द वैदिक कॉलेज, उरई, गाँधी महाविद्यालय, उरई, तथा पं0 जवाहरलाल नेहरू कॉलेज, बाँदा, आदि में अध्यापक प्रशिक्षण प्राप्त कर रहे हैं ।

बुन्देलखण्ड में उपर्युक्त पाँच महाविद्यालयों में ही बी0एड0 का प्रशिक्षण कार्य सम्पन्न होता है । अतः शोध-छात्रा ने अपने न्यादर्श का क्षेत्र इन महाविद्यालयों के छात्र/छात्रा अध्यापकों (सत्र 1993-94) के बैच को ही माना है । न्यादर्श में प्रयुक्त प्रशिक्षणार्थियों की संख्या 250 + 250 = 500 रखी गई । इन पर गृह-पर्यावरण अनुसूची, 16 पी0एफ0 और शिक्षण कौशल अनुसूची, आदि उपकरणों का प्रयोग करके तथ्य संकलन किया गया । परीक्षण प्रशासन में उपयुक्त पाये गये छात्र/छात्रा अध्यापकों को ही शोध हेतु माना गया और अन्य को छोड़ दिया गया । अतः न्यादर्श का अंतिम रूप निम्न तालिका से प्रगट होता है :-

महाविद्यालय/परिवर्ती	गृह पर्यावरण		व्यक्तित्व		शिक्षण कौशल	
	पुरुष	स्त्री	पुरुष	स्त्री	पुरुष	स्त्री
1. अतर्रा कॉलेज, अतर्रा	50	50	50	50	10	10
2. बुन्देलखण्ड कॉलेज, झाँसी	50	50	50	50	10	10
3. डी0ए0बी0 कॉलेज, उरई	50	50	50	50	10	10
4. गाँधी महाविद्यालय, उरई	50	50	50	50	10	10
5. पं0जे.एल.एन. कॉलेज, बाँदा	50	50	50	50	10	10
योग :	250	250	250	250	50	50
पुरुष/स्त्री =	500		500		100	

शोध उपकरण चयन -

सामान्य तौर पर शोधकर्ता/शोधकर्त्री तथ्य एकत्रित करने के लिये सूचना-पत्रक, निरीक्षण-पत्रक, साक्षात्कार-पत्रक, प्रश्नावली-पत्रक तथा अन्य उपकरणों का प्रयोग करते हैं । अतः शोधकर्त्री द्वारा प्रयुक्त शोध उपकरणों का चयन प्रस्तुत है -

(1) गृह-पर्यावरण अनुसूची चयन -

शोधकर्त्री ने प्रस्तुत अध्ययन की आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए निम्नलिखित गृह-पर्यावरण परीक्षणों की जानकारी हासिल की -

1. गृह-पर्यावरण अनुसूची (प्रेरणा मोहित)
2. फैमिली क्लाइमेट स्केल (बीना शाह)
3. फैमिली रोल एक्सपेक्टेशन स्केल (बीना शाह एवं [illegible])
4. गृह-पर्यावरण अनुसूची (के. एस. मिश्र)
5. फैमिली रिलेशनशिप अनुसूची (सिन्हा एवं शैरी)

उपर्युक्त सभी उपकरण गृह-पर्यावरण के विभिन्न आयामों व घटकों का मूल्यांकन करते हैं । शोधकर्ती ने अपनी समस्या हेतु के. एस. मिश्र द्वारा विकसित उपकरण को ही चुना, क्योंकि व्यक्तित्व के निर्धारकों में सबसे अधिक महत्त्व परिवार का ही माना गया है (लिंटन, 1945, पृ. 279) । हिलगार्ड (1962, पृ. 482) महोदय ने व्यक्तित्त्व का विकास "कार्य निर्धारण" को महत्व दिया है । अतः बच्चे का व्यक्तित्व उसके कार्य-व्यवहार का संगत रूप है ।

प्रस्तुत कार्य हेतु गृह-पर्यावरण उपकरण का चुनाव निम्न बातों को ध्यान में रखकर किया गया -

1. प्रस्तुत परीक्षण शिक्षा प्राप्त लोगों के लिये बनाया गया है ।
2. यह परीक्षण स्त्री/पुरुष दोनों का मूल्यांकन करने में समर्थ है ।

3. यह पूर्ण रूप से वस्तुनिष्ठ है ।
4. इसका प्रशासन सरल एवं कम खर्चीला है ।
5. इसमें गृह-पर्यावरण के विशद् अध्ययन हेतु दस आयामों को रखा गया है ।
6. प्रश्न सरल व प्रत्येक आयु के लिए है ।
7. गृह-पर्यावरण के विभिन्न आयाम एक दूसरे से सहसम्बन्धित हैं ।
8. प्रशासन की समयावधि निश्चित नहीं है, अतः प्रयोज्य सोच-समझकर उत्तर दे सकता है ।
9. इसके उत्तर फाइव प्वाइंट स्केल पर निर्धारित हैं ।
10. इसकी विश्वसनीयता दस आयामों की 0.726 से 0.947 तक स्थापित हुई है ।

अतः डॉ० मिश्रा द्वारा विकसित "गृह-पर्यावरण अनुसूची" का वर्णन निम्न रूप से प्रस्तुत है -

गृह-पर्यावरण अनुसूची -

मानव का विकास सामाजिक वातावरण की देन है । वह व्यक्ति को तैयार ही नहीं करता है बल्कि उसके विकास की दिशा भी निर्धारित करता है । बालक के विकास में एक नहीं अनेक सहायता करते हैं । बच्चे के जीवन में परिवार व विद्यालय के वातावरण प्रमुख भूमिका अदा करते हैं । परिवार को सामाजिक-जैविकीय यूनिट के रूप में समाजशास्त्रियों ने माना है । इसका प्रभाव बालक के विकास पर प्रत्यक्ष और स्थायी रूप से पड़ता है । परिवार का मनोवैज्ञानिक पर्यावरण चार स्तरों पर बालक के विकास को प्रभावित करता है । "जान्सन तथा मैडिनस" (1969) ने स्वीकृति-स्वतंत्रता, स्वीकृति-नियंत्रण, तिरस्कार-स्वतंत्रता, तिरस्कार-नियन्त्रण, आदि, चार प्रकार के प्रभावों को माना है । इसी प्रकार से "ग्रेवो" (1973) ने पोषण-प्यार, उपलब्धि-आशा, माँग-स्तर, आदि को माता-पिता के प्रदत्त व्यवहार के रूप में विभिन्न शोधकर्ताओं ने माना है । अन्य शोध-कर्ताओं ने पारिवारीय वातावरण से बच्चों को मिलने वाले व्यवहार-अनुमति लेना,

बच्चों के साथ समय गुजारना, माता-पिता का निर्देश देना, उपलब्धि हेतु आशान्वित होना, बच्चों की बौद्धिकता के अवसर प्रदान करना, प्रभावशाली प्रोत्साहन, मित्रभाव, शारीरिक दण्ड, सैद्धान्तिक अनुशासन, तिरस्कार, सुविधा से वंचित रखना, संरक्षण, शक्ति, आवश्यकता, प्राप्ति, निश्चयात्मकता, संलग्नता, स्वतंत्रता, परतन्त्रता, संवेगात्मक तथा मौखिक प्रतिचार, बच्चे के साथ संलग्नता, भौतिक तथा भावात्मक वातावरण, बंधनमुक्ति और दण्ड, उपयुक्त खेल साधन, आदि को प्रधानता दी है । अतः बालक के विकास में परिवार की भूमिका का अत्यधिक विचलन देखने को मिलता है ।

प्रस्तुत गृह पर्यावरण अनुसूची एक ऐसा उपकरण है जिसके द्वारा परिवार में होने वाले प्रत्येक मनो-सामाजिक व्यवहार का प्रत्यक्षीकरण तथा मात्रीकरण करने के द्वारा होता है । इसके द्वारा परिवार के गुणात्मक, परिणात्मक, ज्ञानात्मक, भावात्मक, और सामाजिक सहयोग का मूल्यांकन किया जा सकता है । इस उपकरण में 100 कथन हैं जिनको 10 आयामों में विभक्त किया गया है । इन 10 आयामों की व्याख्या निम्न रूप से प्रस्तुत है :-

1. <u>नियंत्रण</u> :-

यह आयाम परिवार के निरंकुश वातावरण को प्रगट करता है जिसमें माता-पिता द्वारा बच्चों पर विभिन्न प्रकार की बंदिशें लगा दी जाती हैं ताकि वे अनुशासन का पालन करें ।

2. <u>संरक्षण</u> :-

यह आयाम परिवार में बच्चों को स्वच्छंद व्यवहार को रोकने तथा अभिभावकीय सुरक्षा के दावों को प्रगट करता है ।

3. दण्ड :-

परिवार में अकथनीय और अनैच्छिक क्रियाओं को रोकने हेतु शारीरिक तथा भावात्मक प्रभावित दण्ड के प्रभाव से सम्बन्धित होता है ।

4. निश्चयात्मकता :-

यह आयाम बच्चों के उस प्रतिचार को सूचित करता है जो माता-पिता के द्वारा दिये गये आदेश, सुझाव और निर्देश के प्रति उत्तर के रूप में किये जाते हैं । यानि माता-पिता की इच्छानुसार बच्चे स्व-व्यवहार व क्रियाओं को सम्पादित करें ।

5. सामाजिक बहिष्कार :-

यह आयाम बच्चों को परिवार के अलावा व्यक्तियों के नकारात्मक व्यवहारों व क्रियाओं से स्वयं को अलग रखने की हिदायत देता है ।

6. पुरस्कार :-

समाज के द्वारा निर्धारित इच्छित व्यवहार को सीखने व करने के लिये बच्चों को भौतिक तथा सांकेतिक प्रोत्साहन देना ताकि वे अपने में शक्ति को एकाग्र करके कार्य कर सकें ।

7. सुविधाओं से वंचित रखना :-

प्रस्तुत आयाम से यह प्रगट होता है कि यदि बच्चों को सुविधापूर्ण जीवन में नियंत्रित रखा जाय तो वे अपने माता-पिता से प्यार, सम्मान और बच्चों की परवरिश अधिक अच्छी पाते हैं ।

8. पोषण :-

यह आयाम माता-पिता का अत्यधिक लगाव बच्चों के साथ प्रगट करता है, चाहे वह शारीरिक या भावात्मक हो । वे अपने बच्चों में रुचि लेते हैं और उन्हें प्यार भी करते हैं ।

9. तिरष्कार :-

यह आयाम माता-पिता के सशर्त प्यार के व्यवहार को बच्चों के प्रति प्रगट करता है ताकि वे स्वतंत्र व्यक्ति के रूप में अपनी भावनाओं के प्रगटीकरण में, स्वाभाविकता के विकास में, और स्वतंत्र व्यक्तित्व निर्माण में कोई अधिकार भाव की अपेक्षा न रखें ।

10. अनुमति सूचकता :-

इस आयाम से बच्चों की स्वतंत्रता व स्वाभाविकता के भाव का प्रगटीकरण होता है, जिससे वे अपने माता-पिता को आज्ञा लिये बिना ही अपनी इच्छा भावना और क्रियाओं को समाहित कर सकते हैं ।

अनुसूची का प्रशासन :-

गृह-पर्यावरण अनुसूची का प्रशासन एक व्यक्ति पर तथा एक समूह पर आसानी से किया जा सकता है । प्रारम्भ करने से पहले सभी छात्रों को इसके उद्देश्य और प्रकृति से परिचित करवाना चाहिए । फिर अनुसूची पर कथनों के आगे बने खानों में से किसी एक पर (×) गुणित का निशान लगाने को बतायें । छात्रों को उनके उत्तरों के प्रति गुप्त रखने को कहें । जब समूह में अनुसूची को भरवायें तो बैठने की स्थिति को इतना दूर-दूर रखें ताकि एक दूसरे के उत्तरों का अनुमान भी एक-दूसरे न लगा सकें । कठिन या असम्भवों कथनों को अनुत्तरित रहने दें ।

अनुसूची का फलांकन :-

अनुसूची पत्रिका पर प्रत्येक कथन के सामने बहुधा, प्रायः, कभी-कभी, बहुत कम, और कभी नहीं, आदि पाँच रूपों में उत्तर दिये हुये हैं । प्रत्येक कथन को पढ़ने के बाद प्रयोज्य को किसी एक उत्तर पर ×) गुणित का निशान लगाना है । पाँच उत्तरों के अंक निम्न प्रकार से आवंटित हैं :-

(1) बहुधा-4, (2) प्रायः-3, (3) कभी-कभी-2,
(4) बहुत कम-1 (5) कभी नहीं-0

अनुसूची के उत्तर प्राप्त होने पर ए, बी, सी, डी, ई, एफ, जी, एच, आई, जे, आदि आयामों के फलांकन प्रति पृष्ठ जोड़ लिये जायें और फिर सभी पृष्ठों के फलांकन का कुल योग अनुसूची के अंतिम पृष्ठ पर दिये गये स्कोरिंग सीट पर अंकित कर लिया जाय । यही 100 कथनों का कुल योग व्यक्ति के गृह पर्यावरण प्रभाव को प्रदर्शित करता है ।

अनुसूची की विश्वसनीयता :-

10 आयामों की विश्वसनीयता अर्द्ध-विच्छेद विधि से ज्ञात की गई है जिसका वर्णन निम्न तालिका से प्रगट होता है :-

		आयाम	विश्वसनीयता
1.	ए	नियन्त्रण	0.874
2.	बी	संरक्षण	0.748
3.	सी	दण्ड	0.947
4.	डी	निश्चयात्मकता	0.866
5.	ई	सामाजिक बहिष्कार	0.870
6.	एफ	पुरस्कार	0.875
7.	जी	सुविधाओं से वंचित रहना	0.855
8.	एच	पोषण	0.901
9.	आई	तिरस्कार	0.841
10.	जे	अनुमति सूचकता	0.726

2. व्यक्तित्व परीक्षण चयन :-

प्रस्तुत अध्ययन की आवश्यकता को ध्यान में रखकर शोधकर्त्री ने निम्नांकित व्यक्तित्व परीक्षणों की जानकारी प्राप्त की -

1. माडरले व्यक्तित्व परीक्षण, 1953-आइजेनिक ।
2. मिनी सोटा बहुआशीय सूची, 1951-हाथवे एंव मेकन्ले ।
3. कैलिफोर्नियो व्यक्तित्व सूची (गफ, 1957) ।
4. एडवर्ड्स परसनल प्रीफरेन्स अनुसूची (एडवर्ड्स, 1954)
5. 16 पी0 एफ0 सूची (कैटिल एंव एबर, 1957) ।

बी0एड0 के छात्र एंव छात्रा अध्यापकों के व्यक्तित्व पार्श्वदृश्य का निर्माण करने के लिये शोधकर्ता ने 16 पी0एफ0 का चुनाव निम्नलिखित उपयोगिता को ध्यान में रखकर किया :-

(1) व्यक्तित्व का सबसे उत्तम मापक 16 पी0एफ0 को माना गया है, क्योंकि इसका विकास फैक्टर एनालिसिस के आधार पर किया गया है ।

(2) इस परीक्षण के द्वारा व्यक्तित्व के 16 शील गुणों का पता एक ही परीक्षा-काल में लगाया जाता है ।

(3) प्रस्तुत परीक्षण की व्यापकता का पता इस बात से लगता है कि वह व्यक्तित्व के प्रथम एंव द्वितीय श्रेणी के लक्षणों का मूल्यांकन गहराई से करता है । यही लक्षण व्यक्तित्व की सफलता के आधार बनते हैं । यह 16 शील गुण आपस में स्वतंत्र हैं और व्यक्ति की नई विशेषता का पता लगाते हैं । इस प्रकार की व्यापकता किसी अन्य बहुउद्देशीय व्यक्तित्व परीक्षण में नहीं पाई जाती है ।

(4) प्रस्तुत परीक्षण के निर्माणकर्ता ने इसका प्रयोग विभिन्न प्रकार के न्यादर्शों पर किया और भिन्न-भिन्न मानक भी बनाये थे ।

5. प्रस्तुत परीक्षण क्षेत्र में इस परीक्षण का प्रयोग अनेकों शोधकर्ताओं द्वारा किया जा चुका है ।

6. वर्तमान स्थिति में इसका प्रयोग अत्यधिक लाभदायक होगा क्योंकि यह क्रास कल्चरल तुलना प्रस्तुत करता है ।

7. परीक्षण का प्रशासन सरल है । इसके द्वारा एक ही बार में एक व्यक्ति या समूह का तथ्य संकलन, आयु वर्ग 15 से ऊपर तक का आसानी से किया जा सकता है ।

8. प्रस्तुत परीक्षण में प्रयुक्त शब्दावली दैनिक समाचार में प्रयुक्त सामान्य स्तर की है । निर्देश एंव अभ्यास प्रश्न मुख्य पृष्ठ पर अंकित हैं जो प्रयोग में सरलीकरण बताते हैं ।

9. परीक्षण का कोई समय निश्चित नहीं है, फिर भी अनुसंधानकर्ताओं और प्रश्नकर्ताओं ने फार्म "ए" का समय 50-60 मिनट के लगभग बताया है । इसमें 187 प्रश्न हैं जिनके उत्तर उनके सामने दिये गये तीन उत्तरों में से किसी एक उत्तर को गुणित (×) चिन्ह से अंकित करके देना होता है ।

10. इस परीक्षण की विश्वसनीयता 0.71 से लेकर 0.93 तक है ।

11. इस परीक्षण की वैधता विद्वानों द्वारा निश्चित की गयी है जो 0.84 से लेकर 0.96 तक है ।

12. 16 पी0एफ0 का भारतीकरण हिन्दी भाषा में डॉ0 कपूर द्वारा (1970) में किया गया । इस प्रकार से राष्ट्रीय भाषा द्वारा इस परीक्षण का प्रयोग अत्यधिक होने लगा है ।

13. हिन्दी रूपान्तरण परीक्षण की वैधता को भी निश्चित किया गया है, जो 0.70 से लेकर 0.91 तक पाई गयी है ।

14. हिन्दी रूपान्तरित परीक्षण की विश्वसनीयता 0.49 से लेकर 0.83 तक है ।

परीक्षण का विवरण :-

प्रस्तुत अध्ययन का उद्देश्य व्यक्तित्व लक्षणों को मापने वाले ऐसे उपकरण का चुनाव करना है जिसके द्वारा प्रशिक्षणरत छात्र/छात्रा (अध्यापकों) के व्यक्तित्व का पूर्ण वर्णन हो सके । व्यक्तित्व मापने हेतु शोधकर्ता ने 16 पी.एफ. परीक्षण का चुनाव किया जो संसार भर में प्रसिद्ध है । इस परीक्षण का भारत देश में प्रयोग श्रीवास्तव (1953), जलोटा (1957), त्यागी (1960), कपूर (1963, 1964), उत्पल (1971), मैथ्यू (1971), कक्कड़ (1972), गोयल (1973), पाल (1976), छिद्दा (1977), गुप्ता (1978), पाण्डेय (1983), झा (1990), आदि विद्वानों ने किया और अपने-अपने निष्कर्षों में सफलता प्राप्त की ।

सोलह व्यक्तित्व तत्व प्रश्नावली को उसके संक्षिप्त नाम 16 पी.एफ. के नाम से जाना जाता है, जिसके द्वारा बहुआयामी व्यक्तित्व विशेषताओं का मापन किया जाता है । इस परीक्षण का निर्माण आसान परिस्थितियों में किया गया, जिससे व्यक्तियों की सूचनाओं को आसानी से एकत्रित किया जा सके । यह परीक्षण 16 प्राथमिक आयामों के अलावा आठ शब्दोत्पत्ति रूप से भी वर्णन करता है ।

16 पी0 एफ0 परीक्षण के छः समानान्तर प्रकार हैं (पाँच प्रकाशित एंव एक प्रायोगिक है) प्रत्येक परीक्षण 16 प्रकार के व्यक्तित्व लक्षणों का मापन करने में समर्थ हैं, जो निम्नतालिका से स्पष्ट है :-

फार्म	प्रश्न सं0	प्रयोग वर्ग	अधिकतम समय
अ	187	सामान्य वर्ग जो अखबार पढ़ सकता है	50 मिनट
ब	187	सामान्य प्रौढ़ जो अखबार पढ़ सकता है	50 मिनट
स	105	अ एंव ब की आयु से कम शब्दावली जानने वाले	30-40 मिनट
द	105	अ एंव ब की आयु से कम शब्दावली जानने वाले	30-40 मिनट
य	128	कम साक्षर, जो सरल शब्दावली जानते हों	30-40 मिनट
र	128	कम साक्षर, जो कम शब्दावली जानते हों	30-40 मिनट

प्रस्तुत परीक्षण तालिका से स्पष्ट होता है कि इसमें तीन जोड़े परीक्षण हेतु बनते हैं । इसमें प्रथम एंव द्वितीय परीक्षण का जोड़ा व्यक्तित्व मापन हेतु सबसे अधिक प्रसिद्ध है ।

मनोवैज्ञानिकों ने भी 16 पी.एफ. के प्रयोग को उत्तम माना है, क्योंकि इसके द्वारा प्राप्त निष्कर्ष पूर्ण व्यक्तित्व का मूल्यांकन करने में सहायक होते हैं । मनोवैज्ञानिकों ने इसकी प्रथम विशेषता व्यापकता मानी है । यह परीक्षण असाधारण रूप से व्यापक है, जो व्यक्तित्व के सभी आयामों को प्रभावित करता है । इस परीक्षण का द्वितीय गुण व्यवहारिकता है । यह मापनी का नवीनीकरण अपने स्वाभाविक रूप से करता है । यानि इसका प्रयोग वैयक्तिकता के प्रभाव, पक्षपात से दूर रहता है तथा व्यक्तित्व के स्वाभाविक विकास का मूल्यांकन प्रस्तुत करता है । इसका तृतीय गुण व्यक्तित्व के प्रारंभिक प्रत्यय से सम्बन्ध रखता है जिसका व्यापक प्रयोग हमें नैदानिक क्षेत्र, शिक्षा, आद्योगिक क्षेत्र, और प्राथमिक शोध क्षेत्र, आदि में देखने को मिलता है ।

<u>स्थिरता एंव विश्वसनीयता :-</u>

कैटेल (1970) ने अपनी 16 पी.एफ., हैण्डबुक (1961-62), और (1967-68), में परीक्षण की स्थिरता एंव विश्वसनीयता का वर्णन किया है । आपने 146 अमेरिकन व्यक्तियों पर एक सप्ताह के अंतराल पर टेस्ट-रिटेस्ट विधि से निष्कर्ष ज्ञात किये । उसमें 16 पी.एफ. फार्म "अ" का आश्रित सह-सम्बन्ध (0.58 से 0.83) तथा फार्म "ब" का आश्रित सहसम्बन्ध (0.54 से 0.89) तक रहा ।

इसके विपरीत लाफोज (1962) ने 44 व्यक्तियों का अध्ययन किया और फार्म "अ" का सहसम्बन्ध 0.36 से लेकर 0.85 तक पाया । इसके दो माह बाद टेस्ट-रिटेस्ट विधि द्वारा सहसम्बन्ध ज्ञात किया तो पाया कि तत्व-बी, एन, क्यू-3 का न्यूनतम और ए, एच, आई, तत्वों का उच्च सहसम्बन्ध है ।

16 पी•एफ• का §1967-68§ में 8476 व्यक्तियों पर अध्ययन किया गया, जिसमें फार्म "अ" और "ब" में सहसम्बन्ध समान पाया गया । इसका सह-सम्बन्ध विस्तार 0•21 से लेकर 0•71 तक रहा । एच, एफ, और क्यू-4 तत्वों का सहसम्बन्ध §0•61 से लेकर 0.71§ तक उच्च स्तर पर था और एल, एन, क्यू-1 तत्वों का सहसम्बन्ध §0•21 से 0•37§ निम्न स्तर पर था ।

वैधता :-

कैटिल महोदय ने 16 पी•एफ• के फार्म "अ" और फार्म "ब" परीक्षणों की विस्तृत जानकारी §1970§ में प्रस्तुत की । आपने परीक्षण वैधता का आधार §1967-68§ में प्रशासित परीक्षण के निष्कर्षों को बनाया । फार्म "अ" और "ब" की मिली-जुली वैधता 0•53 से लेकर 0•94 ज्ञात की गई । इस हेतु न्यादर्श 958 व्यक्तियों को माना गया था । एक अन्य अध्ययन में फार्म "अ" और "ब" की वैधता ज्ञात की गई, जिसका विस्तार 0•35 से लेकर 0•92 तक रहा । फार्म "अ" में "ए", एफ, एच, एंव ओ तत्वों का उच्च सहसम्बन्ध वैधता विस्तार 0•71 से लेकर 0•92 थी, और बी, एम, एन, आदि तत्वों का निम्न सहसम्बन्ध वैधता विस्तार 0•35 से लेकर 0•44 तक थी । इसी तरह से फार्म "ब" में ए, एफ, एच, ओ तत्वों में उच्च सहसम्बन्ध वैधता विस्तार 0•78 से लेकर 0•87 तक थी, और बी, एन, क्यू-1 एंव क्यू-4 तत्वों का निम्न सहसम्बन्ध वैधता विस्तार 0•44 से लेकर 0•60 तक थी । अतः 16 पी•एफ• की वैधता पर्याप्त उच्च स्तरीय मानी गयी है ।

16 पी•एफ• द्वारा मापे जाने वाले तत्व -

1• कारक "ए" §सिजोथायमियां/अफेक्टोथायमियां§

कारक "ए" के अन्तर्गत सिजोथायमियां ऋणात्मक स्तर और अफेक्टोथायमियां धनात्मक स्तर, दो लक्षण आते हैं । सिजोथायमियां के अन्तर्गत गंभीरता, पृथकता, चतुरता और शांतप्रियता, आदि व्यक्तित्व विशेषतायें पाई जाती हैं । इन विशेषताओं

से युक्त व्यक्ति एकांतप्रिय और कठोर स्वभाव वाला होता है । इसके विपरीत बहिर्मुखी, अतिस्नेही, सरल, प्रतिस्पर्धी, आदि विशेषतायें [illegible] प्रकार के व्यक्तित्व में पाई जाती है । ऐसा व्यक्ति मिलजुलकर कार्य करना, समाजप्रिय, आलोचना पसंद एंव प्यार से लोगों को पसंद करता है ।

2. कारक "बी" (लोहर स्कोलास्टिक मैण्टल कैपेसिटी/हायर स्कोलाटिक मेंटल कैपेसिटी)

कारक "बी" के अन्तर्गत भी दो लक्षण स्कोलास्टिक मेंटल कैपेसिटी लोअर और हायर के रूप में आते हैं । इसमें लोअर के अन्तर्गत कम बुद्धिमान, तत्वचिन्तर, आदि व्यक्तित्व की विशेषतायें आती हैं । ऐसे लोग पढ़ने और समझने में सुस्त होते हैं । इनके व्यवहार से कम बुद्धिमानी प्रदर्शित होती रहती है । इसके विपरीत हायर के अंतर्गत तीव्रता, भावात्मक-चिन्तन और प्रखर बुद्धि का प्रदर्शन होता है । ऐसे लोग पढ़ने और समझने में काफी बुद्धिमानी दिखलाते हैं । इनमें अधिक क्रिया-शीलता, सतर्कता और संस्कृति के प्रति लगाव रहता है ।

3. कारक "स" (लोअर ईगोस्ट्रेन्थ/हायर ईगो स्ट्रेन्थ)

कारक "सी के अन्तर्गत भी लोअर और हायर ईगो स्ट्रेन्थ दो प्रकार के लक्षण पाये जाते हैं । प्रथम के अन्तर्गत भावना प्रधान, संवेग रहित, स्थाई, नैराश्य, आदि विशेषतायें होती हैं । इस प्रकार के व्यक्ति में परिवर्तन और परिवर्तनीय दशाओं के प्रति निराशा, थकान महसूस करना, संवेगात्मक रूप से असंतोष, और भयभीत होना, नींद न आना एंव मानसिक तनाव, आदि लक्षण पाये जाते हैं । इसके विपरीत हायर ईगो स्ट्रेन्थ में संवेगों में स्थायित्व, सत्य का पालन, शांत स्थिति, परिपक्वता, आदि विशेषतायें पाई जाती हैं । इस प्रकार के व्यक्तित्व में शारीरिक और मानसिक रूप में परिपक्वता पाई जाती है । वह अपने कार्यों का का सम्पादन, समायोजन, नैतिकता और शक्ति के आधार पर करता है ।

4. कारक "ई" {सबमिसिवनेस/डामिनेन्स}

कारक "ई" को सबमिसिवनेस और डामिनेंस दो भागों में विभक्त किया गया है। सबमिसिवनेस के अन्तर्गत विनम्र, कोमल, उपकारी और निष्ठावान, आदि विशेषतायें आती हैं। डामिनेंस के अन्तर्गत निश्चयवान, स्वतन्त्र आक्रामक, हठी और प्रतिस्पर्धा, आदि विशेषतायें होती हैं। सबमिसिवनेस व्यक्ति में अन्य व्यक्तियों के प्रति सहृदयता होती है। वह किसी भी व्यक्ति के लिये अपना कार्य त्याग देता है, गल्तियों में सुधार लाता है, और कभी-कभी अन्य लोगों पर निर्भर भी होता रहता है। इसके विपरीत डामिनेंस में व्यक्ति अपनी रूचि के अनुसार कार्य करता है, वह स्वयं ही कानून होता है और वह अपने प्रबन्धकों का अनादर या उपकार भी करता है।

5. कारक "एफ" {डेसरजेंसी/सरजेंसी}

कारक "एफ" की डेसरजेंसी और सरजेंसी दो भागों में बाँटकर अध्ययन किया गया है। डेसरजेंसी में मर्यादायुक्त, मितव्ययी, गंभीर और अल्प भाषी विशेषतायें होती हैं। इस प्रकार के व्यक्ति अंतदर्शन में माहिर होते हैं। वे दब्बू प्रकार के और ईश्वराधीन और कम बोलने में विश्वास रखने वाले होते हैं। इसके विपरीत सरजेंसी में आनन्दित रहना, स्वेच्छा पसंद, उत्साही, आदि विशेषतायें होती है। ऐसे व्यक्ति सदैव प्रसन्न रहते हैं, वार्तालाप में रूचि दिखाते हैं, सतर्कता से कार्य करते हैं, और उन्हें चिन्तारहित जीवन पसंद होता है। इनको अगर नेता बना दिया जाय, क्रियाशील कार्यों में लगा दिया जाय तो अधिक प्रसन्न रहते हैं।

6. कारक "जी" {वीकर सुपरईगो स्ट्रेन्थ/स्ट्रांगर सुपर ईगो स्ट्रेन्थ}

कारक "जी" को वीकर और स्ट्रांगर सुपर ईगो स्ट्रेन्थ दो रूपों में प्रस्तुत किया गया है। उपयुक्तता, नियमों से भागना और आभारी, आदि विशेषतायें वीकर सुपरईगो स्ट्रेन्थ में आती हैं। ऐसा व्यक्ति अपने कार्य में सतर्क नहीं रहता

है । वह सामूहिक या सांस्कृतिक स्वरूप की अवहेलना करता है । ये लोग कभी-कभी समाज विरोधी क्रियायें भी करते हैं, लेकिन सक्रियता में विश्वास रखते हैं । इसके विपरीत स्ट्रांगर सुपर ईगो स्ट्रेन्थ में पुण्यात्मा, उद्यमी, गंभीर, नियम पालक, आदि विशेषतायें होती हैं । इस प्रकार के व्यक्ति में चरित्रवान, कर्तव्यपालन, उत्तरदायित्व, साफगोई, नैतिकता, मेहनती, आदि गुण विद्यमान होते हैं जिससे उनके अहं को सामाजिक सम्मान प्राप्त होता है ।

7. कारक - "एच" (थ्रेक्टिया/पारमिया)

कारक "एच" भी दो भागों में विभक्त किया गया है । थ्रेक्टिया के अन्तर्गत शर्मीलापन, सीमाबंधन, लज्जाशील, कायरता, आदि विशेषतायें आती हैं । जिस व्यक्ति में ये कारक कम स्तर पर होता है, उसमें निम्नता के भाव, व्यवसाय के चुनाव में अरुचि, बातचीत में असफल सामाजिकता के स्थान पर एक या दो मित्रों में विश्वास आदि विशेषतायें होती हैं । इसके विपरीत "पारमिया" में साहस, सामाजिक वृद्धी, क्रियाशीलता, स्वेच्छाचारी, आदि विशेषतायें होती हैं । इस कारक के अंतर्गत जो व्यक्ति उच्च स्तर पर होता है, उसमें सामाजिकता, हठी, नवीन वस्तुओं को करना, स्वेच्छाचारी, संवेगात्मक प्रतिचारों में हाजिरजवाबी, आदि विशेषतायें होती हैं । इसका मजबूत शरीर स्वावलम्बीपन की विशेषता रखता है । ये व्यक्ति वार्तालाप में समय लगाते हैं, व्यापकता का विरोध एंव खतरों को भूल जाते हैं और विरोधी लिंग में रुचि दिखाते हैं ।

8. कारक - "आई" (हारिया/प्रेम्सिवा)

इस कारक को "हारिया और प्रेम्सिवा" दो भागों में विभक्त किया गया है । "हारिया" के अन्तर्गत मस्तिष्कीय क्षमता, स्वविवेकी, यथार्थवादी और अर्थहीनता, आदि विशेषतायें आती हैं । फैक्टर "आई" में लो स्कोर पाने वाले व्यक्ति में व्यवहारिकता, वास्तविकता, स्वतंत्रता, पौरुषता, उत्तरदायित्व, आदि

विशेषतायें होती हैं । वे कभी-कभी कठोर, अपरिवर्तित, सनकी भी महसूस होते हैं। इसके विपरीत "प्रेम्सिया" में कमजोर मानसिक क्षमता, निर्भरता, असुरक्षा, और भावात्मकता, आदि विशेषतायें होती हैं । इस कारक में जो व्यक्ति उच्च स्कोर प्राप्त करते हैं, उनमें कमजोर मानशिक क्षमता, दिवास्वप्न, कलात्मकता, फैशनपरस्त, आदि स्त्रित्व गुण पाये जाते हैं । कभी-कभी ये लोग सहायता माँगते, अशांत रहते, निर्भरता और अव्यवहारिक भी होते हैं । ये कठोर व्यक्तियों और उनके व्यवसाय को पसंद नहीं करते हैं ।

9. कारक "एल" (अलेक्सिया/प्रोटेन्सिया)

प्रस्तुत कारक को भी अलेक्सिया और प्रोटेन्सिया दो रूपों में प्रयुक्त किया गया है । "अलेक्सिया" मेंविश्वासी, योग्य, ईर्ष्यामुक्ति और टीम सहयोग, आदि विशेषतायें आती हैं । इसमें जो व्यक्ति आते हैं, उनमें ईर्ष्या का अभाव होता है । प्रसन्नतापूर्वक जीवनयापन करते हैं । किसी के साथ प्रतिस्पर्धा नहीं रखते और अपनी टीम के सहयोगी बनते हैं । "प्राटेन्सिया" में संदेह करना, स्वास्थ्य निर्माण और टीम विलगता, आदि विशेषतायें आती हैं । ऐसे व्यक्ति संदेहास्पद होते हैं । वे हमेशा मानसिक और आंतरिक जीवन में विश्वास रखते हैं, वे स्वयं में मस्त रहते हैं, अन्य की चिन्ता नहीं करते हैं । अतः इनको समूह, समुदाय से कोई सरोकार नहीं रहता है ।

10. कारक "एम" (प्रेक्जरनिया/औटिया)

इस कारक को भी दो भागों में बाँटा गया है । प्रथम भाग "प्रेक्जरनिया" में व्यावहारिकता, चेतनता, रूढ़िगत, अनुभवता, यथार्थवादिता, आदि गुण आते है । इसमें व्यक्ति सही कार्य करता है, व्यवहारिकता पर बल देता है और वह क्या संभव है पर प्रकाश डालता है । वह विस्तृत में विश्वास करता है और अकाल्पनिक होता है । इसके विपरीत "ओटिया" में काल्पनिक, आन्तरिक आकांक्षाओं

को टेंकना, व्यवहारिकता की अवहेलना और मस्तिष्कीय अस्तव्यस्था, आदि विशेषतायें हैं । कारक "एम" में जो व्यक्ति उच्च स्कोर पाते हैं वे ही इसके अंतर्गत आते हैं । ऐसे व्यक्ति रीति-रिवाज विरोधी, रोजाना के कार्यों से बेखबर, स्वप्रेरित, काल्पनिक और आवश्यक वस्तुओं से ही सम्बन्ध रखने वाले होते हैं । कभी-कभी आंतरिक रुचियाँ इनकी अवास्तविक परिस्थितियों की ओर निर्देशित करती हैं, जिससे सामूहिक क्रियाओं की अवहेलना होती है ।

11. कारक "एन" {आर्टलिसनेस/श्रुल्डनेस}

कारक "एन" को निम्न स्तरीय स्कोर और उच्च स्तरीय स्कोर के आधार पर दो भागों में विभक्त किया गया है । जब कोई व्यक्ति अग्रगामी, स्वाभाविक, साधारण, भावनापूर्ण, आदि विशेषताओं को संग्रहीत करके निम्न स्कोर लाता है तो वह "आर्टलिसनेस" के अन्तर्गत आता है । ऐसा व्यक्ति बनावट से दूर, और भावनापूर्ण होता है । कभी-कभी वह जालिम और बुरा लगने वाला भी, लेकिन थोड़ी देर में ही प्रसन्न होकर सही बात पर आता है और स्वाभाविक व स्वतंत्र प्रकृति वाला बन जाता है । इसके विपरीत "श्रुल्डनेस" के अन्तर्गत चतुर, गणनायोग्य, सांसारिक, मर्मज्ञ आदि विशेषतायें होती हैं । इस प्रकार के व्यक्ति में साफ-सुथरा व्यवहार, अनुभवी, संससारिक, चतुर, आदि गुण पाये जाते हैं । वह कभी-कभी विश्लेषणकर्ता और कठिन क्षमता वाला हो जाता है । वह बौद्धिक, भावनारहित, होकर परिस्थिति का सामना करता है ।

12. कारक "ओ" {अनट्रबुल्ड एडीक्वैसी/गिल्ट प्रोननेस}

कारक "ओ" को दो भागों में बाँटा गया है । "अनट्रबुल्ड एडीक्वैसी" के अन्तर्गत गंभीर, स्वविश्वासी, संतोषी और निर्मलता आदि विशेषतायें आती हैं। इस प्रकार का व्यक्ति, गंभीर और स्वयं में परिपक्वता रखकर क्षमतापूर्वक वस्तुओं के साथ क्रिया एंव प्रतिक्रिया करता है । वह स्थिर रहता है, बल्कि जब सामूहिकता

का अभाव हो जाता है तो वह उत्तेजित होकर अविश्वास भी प्रकट करता है । विरोध रूप में गिल्ट्रोननेस आता है जिसमें विचारशीलता, चिन्तित रहना, दंभी, विघ्न बाधाओं में व्यस्त रहने वाला, आदि विशेषतायें आती हैं । यह उच्च स्कोरीय व्यक्ति होता है जो स्वगुणों के कारण घमंडी बन जाताहै । कठिनाइयों में यह बच्चों जैसी क्रियायें करता है । यह स्वयं को समूह के साथ रहने को स्वतंत्र महसूस नहीं करता है । अत: ऐसे व्यक्ति सैदानिक समूहों में अधिक पाये जाते हैं ।

13. कारक "क्यू-1" (कन्जरवेटिज्म/रेडिकलिज्म)

कारक क्यू-1 को भी दो भागों में विभक्त किया गया है । "कन्जरवेटिज्म" के अन्तर्गत वे व्यक्ति आते हैं जो निम्न स्कोर अर्जित करते हैं । उनमें रूढ़िवादिता, स्थिर आदर्श-विचार, प्रथाओं की समस्याओं को सहना, आदि विशेषतायें होती हैं। ऐसा व्यक्ति जो सोचता है वही करता है । वह नवीन आदर्शों या विचारों के साथ समझौता करता है । यदि वह समझौता सही नहीं मालूम देता तो उसका विरोध करके अपनी प्रथा के साथ ही चलता है । वह अपने धर्म और राजनीति में रूढ़िवादी होता है । इसीलिए बौद्धिकता में अरुचि प्रदर्शित करता रहता है जबकि "रेडिकलिज्म" में प्रायोगिकता विषमता, सहृदयता, विश्लेषणता, स्वतंत्र विचार जैसे गुण पाये जाते हैं । इसमें व्यक्ति बौद्धिक कार्यों में रुचि लेता है और सिद्धान्तों में परिवर्तन चाहता है । वह हमेशा नवीन और पुराने विचारों के साथ जानकारी हासिल करता रहता है ताकि जीवन से सम्बन्धित प्रयोग परिवर्तनशील हों ।

14. कारक "क्यू-2" (ग्रुप अडेरन्स/सेल्फ सफीशियेन्सी)

कारक "क्यू-2" का मापन निम्न और उच्च स्कोर के रूप में किया जाता है । जब व्यक्ति को निम्न स्कोर प्राप्त होता है तो उसमें समूह निर्भरता, एकता और विश्वासपात्रता, आदि विशेषतायें पाई जाती हैं । वह स्वयं निर्णय नहीं लेता है बल्कि अन्य व्यक्तियों के ऊपर निर्भर करता है ताकि उसकी समाज में प्रतिष्ठा

और सम्मान प्राप्त हो सके । वह स्वयं के स्थान पर समूह के साथ रहना चाहता है । वास्तव में उसकी पसन्द सामूहिक नहीं होती है, फिर भी वह समूह की सहायता को आवश्यक समझता है । इसी प्रकार से "सेल्फ सफीसियेन्सी" के अन्तर्गत स्वपर्याप्त, स्वनिर्णयी, ताकतवर, आदि विशेषतायें पाई जाती हैं । इस कारक में जो व्यक्ति उच्च स्कोर प्राप्त करता है वह स्वतंत्र, स्वनिर्गत पथानुगामी, कार्य और निर्णयों में आत्मनिर्भर होता है । सह सदैव दूसरों के निर्णयों को ग्रहण नहीं करता है बल्कि अपने निर्णयों को अन्य लोगों पर थोपता भी नहीं है । वह अन्य व्यक्तियों को पसंद नहीं करता है और न उनकी सहायता एंव सहयोग को चाहता है ।

15• कारक "क्यू-3" ﴾लो इन्टीगरेसन/हाई सेल्फ कान्सेप्ट कन्ट्रोल﴿

कारक "क्यू-3" में अनियंत्रित, स्वविरोधी, मसविरा में लापरवाही, इन्द्रियग्राही, आदि विशेषतायें "लो इन्टीगरेसन" के अन्तर्गत आती हैं । ऐसा व्यक्ति समाज के नियंत्रण, सम्मान और आवश्यकताओं के प्रति चिन्तित नहीं रहता है । वह कभी भी सतर्क या कष्टों को वहन करने वाला नहीं होता है । वह कभी-कभी गुसमायोजित महसूस करने लगता है, लेकिन पैरानोइड नहीं होता है । इसके विपरीत "हाई सेल्फ कान्सेप्ट कन्ट्रोल﴿ के अन्तर्गत नियंत्रित, समाजप्रिय, स्वाभिमानी, आदि विशेषतायें आती हैं । इस कारक में उच्च स्कोर वाला व्यक्ति संवेगों पर नियंत्रण रखता है, व्यवहारिक होता है, और सामाजिक चिंताओं में लिप्त रहने वाला होता है ।

16• कारक "क्यू-4" ﴾लो इरजिकटेन्सन/हाई इरजिकटेन्सन﴿

"कारक-क्यू-4" को दो भागों में विभक्त किया गया है । "लो इरजिक-टेन्सन" भाग में आरामतलब, क्षोभरहित, जड़ता, उत्साही, आदि विशेषतायें होती हैं । ऐसा व्यक्ति समाज में संतुष्ट रहता है उसे कोई चिन्ता नहीं रहती है । कभी-कभी इतनी संतुष्टि व्यक्ति को निकम्मा बना देती है, जिससे क्रियाशीलता में गिराव

आने लगती है । उच्च संवेगात्मकता, या उत्तेजना उसके विद्यालय-कार्य और क्रिया-शीलता में अवनति उत्पन्न करती है । इसके विपरीत में "हाई इरजिकटेन्सन" के अन्तर्गत निराशा, परिश्रमी, और संगठन, आदि व्यक्तित्व विशेषतायें आती हैं । उच्च स्तरीय सीमा के अंतर्गत व्यक्ति में तनाव, थकावट और अशांति दिखलाई पड़ती है । वह थकान से भरा रहने पर भी उद्यम को नहीं छोड़ता है । वह समूह की एकता, अनुशासन, और नेतृत्व को अच्छा नहीं समझता है । उसकी नैराश्यता उच्च उत्तेजना को प्रगट करती है, फिर भी वह कभी भी इसमें सफल नहीं होता है ।

§3§ शिक्षण कौशल अवलोकन अनुसूची

प्रस्तुत अध्ययन में शोधकर्त्री ने बी0एड0 प्रशिक्षणरत छात्र/छात्रा-अध्यापकों के गृह-पर्यावरण प्रभाव तथा व्यक्तित्व विशेषताओं, आदि के उपकरण का चुनाव करने के उपरान्त उनके शिक्षण-कौशल को जानने के लिये शिक्षण कौशल अवलोकन अनु-सूची का विकास स्थानीय आवश्यकताओं के आधार पर किया । इस शोध हेतु शोध-कर्त्री ने जागीराव मन्टो §1981§, डॉ0 वर्मा §1982§ तथा डॉ0 पाण्डेय §1983§, आदि द्वारा निर्मित व विकसित, अनुसूचियों के आधार पर किया । इस अनुसूची को पाँच शिक्षण कौशलों में विभक्त किया गया है -

1. प्रेरणात्मक व उत्साहवर्द्धक कौशल :-

अध्यापक के द्वारा छात्र/छात्राओं को ज्ञान के प्रति उत्साहित करना ही प्रेरणात्मक व उत्साहवर्द्धक कौशल माना जाता है । इसको मनोविज्ञान में लक्ष्य भेद व्यवहार या क्रिया माना जाता है । इस कौशल के द्वारा कक्षा को उत्साह, विश्वास, तत्परता, प्रतियोगिता, सहकारिता, आदि लक्षणों से युक्त बनाया जाता है ।

2. योजना एंव संचार कौशल :-

शिक्षण में पाठयोजना तैयार करना महत्वपूर्ण अध्यापक कौशल माना जाता है । अत: बी0एड0 की प्रायोगिकी में इसको विशेष महत्त्व दिया जाता है । इसमें पाठ का क्षेत्र, समय, स्पष्टता, और उपयुक्तता, आदि घटकों पर विशेष ध्यान दिया जाता है । संचार कौशल में विषय को प्रस्तुत करने का ढंग, भाषा, विचार स्पष्टता, आदि पर विशेष बल दिया जाता है । इसमें अध्यापक के मौखिक और भाषागत दोनों ही पक्ष सम्मिलित होते हैं ।

3. शिक्षण विधि कौशल -

शिक्षा के प्रति छात्रों में चिंतन जाग्रत करना, ताकि वे अपनी स्वाभाविकता का पूर्ण प्रयोग ज्ञान के प्रति कर सकें । इस कौशल के द्वारा छात्र/शिक्षक की समान भागीदारी ज्ञान के सीखने में होती है । इसके साथ ही सहायक सामग्री के प्रयोग को शिक्षण में मान्यता मिली है ।

4. परीक्षा कौशल :-

इस कौशल के अन्तर्गत छात्रों के ज्ञान की गहनता, स्थायित्वता और पहचान, आदि की जानकारी ली जाती है । साथ ही साथ छात्रों की ज्ञान प्राप्ति में कठिनाइयों का पता चलता है । इस प्रकार से छात्र स्वंय को जान व पहचान लेता है ।

5. कक्षा प्रबन्ध कौशल :-

बी0एड0 के छात्र-अध्यापकों को कक्षा प्रबन्धा में कुशल बनाना महत्वपूर्ण होता है । इसमें छात्र अनुशासन, कक्षा व्यवस्था, छात्र बैठने की स्थिति, बोर्ड स्थापना, अध्यापक स्थान, आदि बातों का मूल्यांकन किया जाता है ।

इसके पश्चात् शोधकर्त्री ने शिक्षण कौशल अवलोकन अनुसूची के आइटम्स को निर्धा किया । कुछ अनुसूचियों ने बहुविधीय उत्तरों का प्रयोग किया है, और कुछ ने एक अथवा दो उत्तरों को प्रस्तुत किया है । प्रस्तुत अनुसूची में शोधकर्त्री ने सिर्फ प्रश्न के रूप में आइटम्स का प्रयोग किया है, और उसके उत्तर हेतु सिर्फ दो विकल्पों में से किसी एक का ही प्रयोग करना उचित माना है ।

प्रस्तुत अनुसूची का निर्माण इस प्रकार से किया गया है ताकि बी0एड0 छात्र/छात्रा स्वयं का मूल्यांकन आसानी से कर सकता है । इस अनुसूची में पांच कौशलों को स्थापित किया गया है । इनको विभिन्न प्रश्नों के द्वारा विभाजित किया गया है ताकि छात्र-अध्यापकों से सम्बन्धित सभी क्रियायें व व्यवहारों का मूल्यांकन आसानी से हो सके । प्रत्येक कौशल के क्षेत्र को अधिक से अधिक विस्तार दिया गया है ।

शिक्षण कौशल अवलोकन सूची का रफ निर्माण सबसे पहले तैयार करके विभिन्न विश्वविद्यालयों के जानकार प्राध्यापकों के पास उनमें सुधार करने हेतु भेजा गया । उन्होंने अनुसूची के आइटम्स, उनके विकल्प और भाषा तथा क्षेत्र, आदि को उचित रूप से मूल्यांकित किया और सुधारों की ओर इंगित भी किया । इसी को आधार मानकर शोधकर्त्री ने अपनी अनुसूची के ड्राफ्ट को पुनर्मूल्यांकित करके सही रूप प्रदान किया । इस प्रकार से शोधकर्त्री ने वर्तमान परिस्थितियों, सरकारी संसाधनों, और भारतीय समाज की मनोदशा को ध्यान में रखकर शिक्षण-कौशल अवलोकन सूची को तैयार किया ।

स्कोरिंग ऑफ शिक्षण कौशल अवलोकन अनुसूची :-

शोधकर्त्री ने प्रत्येक प्रशिक्षण महाविद्यालय में जाकर प्रस्तुत शिक्षण कौशल अवलोकन अनुसूची का प्रयोग करके छात्र-अध्यापकों से तथ्यों को एकत्रित किया । प्रत्येक प्रश्न का उत्तर सकारात्मक या नकारात्मक में से किसी एक में ही प्राप्त किया गया है । सकारात्मक उत्तर को (हाँ =1), नकारात्मक उत्तर को (नहीं =0) मान प्रदान

है । इस प्रकार से प्रत्येक कौशल को अंक प्रदान अलग-अलग से किया गया । इसके पश्चात् मध्यमान, प्रमापविचलन, मध्यमान त्रुटि आदि सांख्यिकी का प्रयोग करके तथ्य विश्लेषण किया गया । इसके पश्चात् "टी" टेस्ट का प्रयोग किया ताकि छात्र/छात्रा-अध्यापकों द्वारा भरी गई अनुसूची का सही मूल्यांकन हो सके । इस प्रकार से शोधकर्त्री ने शिक्षण कौशल का अवलोकन अनुसूची का मापक तीन बिन्दु स्केल को माना है जो निम्न प्रकार से अंक प्रदान करने में सहायक होता है :-

<u>शिक्षण कौशल</u>

निम्न स्तर	सामान्य स्तर	उच्च स्तर
(0 - 2)	(3 - 4)	(5 - 6)

विश्वसनीयता और वैधता :-

शोधकर्त्री एक अध्यापिका है, अतः समय एंव धन के अभाव में शिक्षण कौशल अवलोकन अनुसूची की विश्वसनीयता तथा वैधता का ऑकलन न कर सकी । अतः फेस वैलेडिटी और रिलायबिलिटी को ही मानकर कार्य को सम्पन्न किया गया है । प्रस्तुत अवलोकन अनुसूची को सभी ने उपयुक्त माना और इसीलिए प्रस्तुत उद्देश्य पूर्ति हेतु इसका प्रयोग शोधार्थी द्वारा अपने शोधकार्य में किया गया है ।

प्रदत्त संकलन की विधि

शोधकर्त्री का प्रमुख कार्य किसी परीक्षण का प्रयोग करके प्रदत्त संकलन करना होता है । इसके लिये इसे प्रदत्त संकलन की विभिन्न विधियों में से किसी एक को आधार बनाना होता है । प्रयोगकर्ता जब किसी विधि का चुनाव करता है तो प्रमापीकृत एंव कम से कम त्रुटि वाली विधि का चुनाव करता है । अतः प्रस्तुत शोधकार्य हेतु शोधकर्त्री ने मानक सर्वेक्षण विधि को प्रदत्त संकलन हेतु चुना ।

1. मानक सर्वेक्षण विधि :-

प्राकृतिक परिवर्तन मानव व्यवहार एंव क्रियाओं में परिवर्तन लाते हैं । मानव संस्कृति परिवर्तन की आधारशिला होती है, जिसके द्वारा किसी अपूर्व उद्देश्य को पूरा किया माना जाता है । जब मनुष्य अपने उद्देश्यों की पूर्ति के लिये व्यवहार के तरीकों में परिवर्तन लाता है, तो वह वर्तमान के साथ सुख प्राप्त करता है । इससे भूतकाल का मूल्यांकन एंव भविष्य के बारे में व्यवहार का अनुमान लगाया जा सकता है । अतः भविष्य का अनुमान और वर्तमान की क्रियायें-मानव प्रगति का आधार बनती हैं, जिससे आने वाली पीढ़ी के स्तर में उन्नति होती रहती है । लेकिन नवीन योजना या कार्यक्रम ग्रहण करने से पहले "समूह, सामाजिक संस्थाओं" के वर्तमान स्तर के प्रति विश्लेषण, व्याख्या और निष्कर्ष के रूप में संगठित और सुनियोजित प्रयास होना चाहिए (एफ0 विटनी, 1956, पृ0 167) । समस्या के समाधान में "प्रथमपद या क्रिया के रूप में सुनियोजित विश्लेषण होना चाहिए ताकि वर्तमान दशा या अवस्था स्पष्ट हो जाय (बेस्ट, 1963, पृ0 105) । इस समस्या के समाधान हेतु शिक्षा शास्त्रियों, समाजशास्त्रियों और अन्य विज्ञानवेत्ताओं ने "नारमेटिव सर्वे मेथड" का विकास किया । इसका उद्देश्य वर्तमान स्थिति के आधार पर समूहों का वर्गीकरण करना, सामान्यीकरण करना, और प्रदत्तों की व्याख्या सामाजिक तथा भविष्य की उपयोगिता को ध्यान में रखकर करना होता है । (एफ0 विटनी, 1956 पृ0 161) । "नारमेटिव" शब्द का अर्थ सामान्य या विशिष्ट परिस्थिति सेलगाया जाता है, और "सर्वे" का अर्थ वस्तु के प्रति "वर्तमान राय" या "मत" को एकत्रित करने से माना जाता है ।

मानक सर्वेक्षण विधि का, आज प्रयोग सामाजिक विज्ञानों से विभिन्न अध्ययनों में किया जा रहा है । "शिक्षा-शास्त्र" के क्षेत्र में "वर्णनात्मक शोध" का महत्व इसी प्रविधि के विकास ने प्रायः समाप्त सा कर दिया है । जब हम वृहद् समूह (पापुलेशन) का अध्ययन करना चाहते हैं, तो इसी प्रविधि का सहारा लेते हैं:

यह विधि किसी भी निदर्शन पर उपयुक्त रहती है । इसके द्वारा एकत्रित प्रदत्तों पर किसी भी प्रकार का अविश्वास नहीं होता है । इसकी विश्वसनीयता एंव वैधता पर किसी ने भी शंका नहीं की है । इसमें प्रयुक्त तकनीक, प्रश्न पूँछने, प्रश्नावली तैयार करना, साक्षात्कार करना, विषय सूची विश्लेषण, और प्रदत्त प्रसार, आदि के बारें में उपयुक्त एंव सही राय प्रस्तुत करती है । इससे क्षेत्र विशेष किये गये तथ्य संकलन के द्वारा विस्तृत और सही ज्ञान प्राप्त होता है । (एफ0डी0 विटनी, 1960, पृ0 1450) । इस प्रविधि को प्रयोग करते समय निम्न पदों पर क्रमानुसार चलना होता है :-

(अ) प्रथमत: शोधकर्ता अपनी समस्या को प्रस्तुत करता है, उसके उद्देश्यों एंव लक्ष्यों को निर्धारित करता है और अपने शोध कार्य की उपयुक्त योजना तैयार करता है । इस योजना से वर्तमान समय की आवश्यकता का गत्यात्मक पक्ष स्पष्ट होता है । "मानवीय अभिरुचियों के सन्दर्भ में, शोधकर्ता उद्देश्य और मूल्यों को निश्चित करती है, ताकि शोध तथ्य उभर कर सामने आयें और समस्या सन्दर्भ में मानसिक दशा, चिन्तन, आदि को व्यवहारिक रूप प्रदान करें (गुड एंव स्कैट्स, 1954, पृ0 551) ।

(ब) शोधकर्ता वर्तमान समय की स्थिति के आधार पर प्रदत्त, संकलन करते हैं । "जबसे समग्र के एक हिस्से को "निदर्शन" मानकर समस्या का अध्ययन किया जाने लगा है, मानक सर्वेक्षण का महत्व बढ़ गया है (गुड एंव स्कैट्स, 1954, पृ0 598) । सामान्य तौर पर निदर्शन का चुनाव काल्पनिक आधार पर किया जाता है । इसका अर्थ यह है कि प्रत्येक व्यक्ति को "समग्र" के आधार पर निदर्शन में आने का समान और पर्याप्त अवसर मिलता है । (गुड एंव स्कैट्स, 1954, पृ0 601) ।

(स) व्यक्तिगत विशेषताओं पर यह विधि कोई निष्कर्ष नहीं निकालती है । इसके द्वारा निदर्शन के माध्यम से सम्पूर्ण समूह का अध्ययन करके "समग्र" के बारे में सांख्यिकीय निष्कर्ष प्राप्त किये जाते हैं । आज सांख्यिकीय निष्कर्ष ही वैध

और विश्वसनीय माने जाते हैं । इस प्रविधि का प्रयोग किसी वैज्ञानिक नियम या सिद्धान्त के प्रयोग हेतु नहीं किया जाता है बल्कि "सर्वेक्षण विधि के द्वारा उपयोगी एंव लाभकारी सूचनायें एकत्रित करके स्थानीय समस्याओं का हल खोजा जाता है॥ट्रेवर्स, 1964, पृ० 284॥ "प्रदत्त संकलन में विस्तार वस्तुनिष्ठता का वर्तमान में स्थित स्थायी सम्बन्धों और व्यवहार को स्पष्टता प्रदान करने के लिये किया जाता है । इसमें समूह की मनोवृत्तियों, अभिरूचियों और कार्य करने के तरीके, आदि का विकास भी निहित रहता है । "सर्वेक्षण के द्वारा किये गये अध्ययनों का सम्बन्ध क्या उपलब्ध है ?, से होता है, न कि उसके अन्य रूपों से ॥ट्रेवर्स, 1964, पृ० 283॥" ।

॥द॥ हम शोध की उपकल्पनाओं को परीक्षित करने के लिये विभिन्न उपकरणों एंव यन्त्रों के द्वारा प्रदत्त संकलन करते हैं । "इनमें सूची, प्रश्नावली, मत या राय, निरीक्षण, चेकलिस्ट, क्रम निर्धारण मापनी, स्कोर बोर्ड, हस्त पाण्डुलिपियाँ, साक्षात्कार, मनोवैज्ञानिक परीक्षण और रिक्त स्थान पूर्ति, आदि उपकरण विशेष रूप से प्रयोग में लाये जाते हैं ॥बेस्ट, 1963, पृ० 184॥ ।" "उपकरण के विभिन्न श्रोतों में से शोधकर्ता समस्या की आवश्यकता को ध्यान में रखकर प्रदत्त संकलन के लिये किसी एक का चुनाव करता है । यही उपकरण समस्या का समाधान उपयुक्त एंव प्रभावशाली सूचनाओं को एकत्र करके करता है । ॥बेस्ट, 1963, पृ० 184॥ । "शोधकर्ता अपने प्रदत्तों का संकलन-वर्गीकरण, तुलना, मूल्यांकन, व्याख्या और सामान्यीकरण, स्वनिरीक्षित व्यवहार एंव क्रियाओं के आधार पर करते हैं । "शोध प्रक्रिया का प्रभाव क्या है ?" के वर्णन करने या व्याख्या करने से नहीं होता है ॥बेस्ट, 1963, पृ० 103॥ । जबकि शोध प्रक्रिया शोधकर्ता को निर्देशित करती है कि वह अपनी उपकल्पनाओं के प्रति सचेत रहकर निश्चित उद्देश्य की प्राप्ति के लिये क्रियाशील रहे ।

॥र॥ सर्वेक्षण विधि के द्वारा हम समस्या का समाधान करने वाले निश्चित निष्कर्षों पर पहुँचते हैं और भविष्य की योजनाओं के क्रियान्वयन एंव सुधार लाने के लिए निष्कर्ष प्राप्त करते हैं ।

(ल) प्रस्तुत प्रविधि के द्वारा शोधार्थी के नये आयाम, नये व्यवहार शोध-कार्य हेतु प्राप्त होते हैं । अतः सही मार्गदर्शन शोध हेतु आवश्यक होता है ।

तथ्य संकलन प्रविधि

प्रस्तुत शोध समस्या हेतु शोधकर्ती द्वारा तीन परीक्षणों का प्रयोग किया गया है । अतः इन उपकरणों द्वारा तथ्य संकलन को निम्न प्रकार से प्रस्तुत किया जा रहा है :-

1. गृह पर्यावरण :-

गृह-पर्यावरण अनुसूची का प्रयोग विभिन्न महाविद्यालयों में जाकर शोध-कर्त्री ने किया । तथ्य संकलन मैनुअल के आधार पर किया गया । सर्व प्रथम शोध-कर्त्री एक महाविद्यालय गई । वहाँ के प्राचार्य व अध्यक्ष को अपना उद्देश्य बताया । सभी बी०एड० छात्र/छात्राओं को एक हाल में एकत्रित किया । परीक्षण के उद्देश्य के विषय में बताया । उत्तर फाइव प्वांइन्ट स्केल में से किसी पर भी (×) का चिन्ह लगाकर दिया जायेगा । आपके उत्तरों को गुप्त रखा जायेगा । सभी निर्देशों को पढ़ने के लिये कहा गया और उनकी शंकाओं को दूर किया । इसके पश्चात् वास्तविक परीक्षण को प्रारम्भ किया गया । परीक्षण पूर्ण हो जाने पर उत्तर प्रपत्रों को एकत्रित कर लिया गया और अन्त में शोधकर्त्री ने सभी छात्र/छात्रा-अध्यापकों को धन्यवाद दिया ।

इसी प्रकार से सभी प्रशिक्षण महाविद्यालयों में जाकर निर्धारित तरीके व विधि का प्रयोग करके गृह-पर्यावरण अनुसूची के प्रयोग द्वारा तथ्य संकलन सम्पन्न कराया गया । इसके पश्चात् छात्र/छात्रा अध्यापकों द्वारा अंकित (×) के चिन्ह का मिलान फलांकन तालिका से किया गया तथा उसी (मैनुअल) के आधार पर अंक प्रदान किये गये । अन्त में कुल अंकों को जोड़कर प्रत्येक छात्र-अध्यापक का छात्रा-अध्यापिका के व्यक्तिगत अंक प्राप्त किये गये ।

2. 16 पी. एफ. :-

शोधकर्ती ने बी0एड0 प्राध्यापकों की व्यक्तित्व विशेषताओं को जानने के लिए हिन्दी रूपान्तरित (डॉ0 कपूर) 16 पी. एफ. का प्रयोग तथ्य संकलन हेतु किया । मैनुअल में वर्णित तथ्य संकलन विधि का प्रयोग किया गया, जिस समय गृह-पर्यावरण के तथ्यों के संकलन हेतु शोधकर्त्री एक-एक महाविद्यालय गई थी, उसी समय एक परीक्षण के पश्चात् 16 पी. एफ. का प्रशासन भी किया गया । निर्देशों के पश्चात् उत्तर के ए, बी, सी में से किसी एक पर बने कॉलम में (×) का निशान लगाना है । इसके पश्चात् परीक्षण प्रारम्भ किया गया और समाप्त होने पर उत्तर पत्रिकायें एकत्रित की गयीं । फिर सभी छात्र/छात्रा-अध्यापिकाओं को धन्यवाद दिया । इसी प्रकार से सभी महाविद्यालयों में जाकर 16 पी. एफ. तथ्यों का संकलन किया गया ।

इसके पश्चात् मैनुअल के आधार पर सभी पूर्ण उत्तर पत्रिकाओं का फलांकन (स्कोरिंग) किया गया ताकि प्रत्येक छात्र/छात्रा का व्यक्तित्व मूल्यांकन हो सके । इसी को (रॉ स्कोर) कहा जाता है ।

3. शिक्षण कौशल अनुसूची :-

शोधकर्त्री ने शिक्षण कौशल को जानने के लिये प्रत्येक प्रशिक्षण महाविद्यालय से 10 पुरुष तथा 10 स्त्री-अध्यापिकाओं का चयन गृह पर्यावरण की उच्चता अंकों के आधार पर किया । इस प्रकार से पाँचों प्रशिक्षण महाविद्यालयों से 50 छात्र-अध्यापक तथा 50 छात्रा-अध्यापिकाओं का अलग-अलग से चयन किया गया । इस प्रकार से कुल 100 पर शिक्षण कौशल/अनुसूची का प्रयोग किया गया । सभी को एक स्थान पर बिठाकर निर्देश दिये, बाद में उनकी शंकाओं का समाधान किया और अनुसूची को प्रारम्भ करने को कहा । सभी प्रत्येक प्रश्न को पढ़ते थे और उसके सामने लिखे

हाँ या नहीं पर सही का निशान लगा देते थे । इस प्रकार से सभी 100 छात्र/छात्रा-अध्यापकों पर शिक्षण कौशल अनुसूची का प्रशासन करके तथ्य संकलन किया गया और अन्त में सभी को धन्यवाद दिया ।

इसके पश्चात् प्रत्येक छात्र/छात्रा-अध्यापिका के उत्तरित अनुसूची का फलांकन किया । फलांकन हेतु शोधकर्त्री ने सकारात्मक उत्तर का एक अंक तथा नकारात्मक उत्तर का जीरो माना है । इस प्रकार से प्रत्येक कौशल का फलांकन अंक प्रदान करके किया गया । फिर तीन बिन्दु स्केल (0-2 निम्न स्तर, 3-4 सामान्य स्तर, 5-6 उच्च स्तर) पर शिक्षण कौशल के स्तर का निर्धारण किया गया ।

प्रदत्त विश्लेषण की प्रविधियाँ

वैज्ञानिक शोध की सार्थकता सांख्यिकी ज्ञान व प्रयोग पर निर्भर करती है । इसके ज्ञान के द्वारा वह अपने तथ्यों एंव निष्कर्षों को प्रमाणीकृत बनाता है । सांख्यिकी विधियों के प्रयोग से शोध कार्य में वस्तुनिष्ठता, सत्यता, वृहद्ता, और स्पष्टता, आदि का विकास होता है । इस प्रकार ये विधियाँ प्रदत्तों के विश्लेषण एंव निष्कर्षों में सरलता प्रदान करती हैं । अतः शोधकर्ती ने गृह पर्यावरण तथ्यों का विश्लेषण मध्यमान, प्रमाण विचलन, और सहसम्बन्ध गुणांक के द्वारा किया । 16 पी॰एफ॰ का विश्लेषण स्टैन्स के आधार पर किया । शोधकर्त्री ने प्रदत्तों को स्टैन्स में परिवर्तित करके किया । स्टैन्स के अन्तर्गत किसी प्रदत्त को दस समभागों में वर्गीकृत करना होता है, जैसे 1-10 समभागों में बाँट कर उसके मध्यमान को स्टैन 5.5 मानते हैं । इस मध्यमान को स्टैन 5 से लेकर 6 तक माना जाता है । इस प्रकार से शोधकर्ती ने 16 पी॰एफ॰ मैनुअल को आधार मानकर स्टैन्स का प्रयोग निम्न प्रकार से किया है :-

1. स्टैन्स 5, 6 को औसत रूप माना गया है ।
2. स्टैन्स 4 या 7 को निम्न और उच्च स्तर हेतु विचलन ।

3. स्टैन्स 2, 3, 8, 9 को अत्यधिक निम्न और उच्च विचलन हेतु ।

4. स्टैन्स 1 या 10 को निम्न स्तर एंव उच्चतर विचलन हेतु ।

इसी स्टैन्स को आधार मानकर बी०एड० छात्र/छात्रा के व्यक्तित्व का मूल्यांकन का विश्लेषण किया जायेगा । शोधकर्त्री ने व्यक्तित्व तथ्यों को स्टैन्स में परिवर्तित किया और फिर पार्श्वदृश्य भी बनाये ।

गृह पर्यावरण तथा व्यक्तित्व के प्रदत्तों का विश्लेषण करने के पश्चात् शिक्षण कौशल अनुसूची के तथ्यों का विश्लेषण किया गया । गृह पर्यावरण के साथ शिक्षण कौशल का सम्बन्ध "सहसम्बन्ध" विश्लेषित किया गया । निष्कर्षों के रूप में सांख्यिकी विश्लेषण में मध्यमान, प्रमाणिक विचलन, सहसम्बन्ध और "टी" परीक्षण आदि का प्रयोग शोधकर्त्री द्वारा किया गया ।

अध्याय - चतुर्थ

प्रदत्तों का विश्लेषण एंव व्याख्या

तथ्य संकलन

प्रस्तुत शोधकार्य का अध्ययन क्षेत्र बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय, झाँसी को बनाया गया है । बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय का जन्म उत्तर-प्रदेश शासन शिक्षा अनुभाग-10, संख्या-4981/15-60/33/74, लखनऊ, दिनांक 26 अगस्त, 1975 के हुआ है । इसके क्षेत्र के अन्तर्गत आने वाले महाविद्यालयों में से सिर्फ पाँच महाविद्यालय -शिक्षक-प्रशिक्षण का कार्य करते हैं । इनमें अतर्रा कॉलेज, अतर्रा, बुन्देलखण्ड कॉलेज, झाँसी, दयानन्द वैदिक कालेज, उरई, गाँधी कालेज, उरई, और पं0 नेहरू कॉलेज, बाँदा है । इस समस्या हेतु बी0एड0 प्रशिक्षणरत छात्र/छात्रा-अध्यापकों का चयन किया गया है ताकि शिक्षक व्यक्तित्व का सही आँकलन हो सके । व्यावसायिक शिक्षा किसी धर्म, भाषा, जाति, सम्प्रदाय, ग्रामीण व शहरी और ऊँच व नीच आदि संकुचित विचारों से जकड़ी हुई नहीं रहती है, बल्कि वह तो अपने शिक्षण कौशल के बल पर अपना और राष्ट्र का गौरव बढ़ाती है । शिक्षक-प्रशिक्षण ही ऐसा रोजगार है जो पशुतुल्य बच्चों को श्रेष्ठ मानव, नागरिक तथा अच्छा माता-पिता बनाती है ।

प्रस्तुत शोध का तथ्य संकलन सामूहिक रूप से किया गया है । शोधकर्ती प्रत्येक प्रशिक्षण महाविद्यालय गई, वहाँ के प्राचार्य से मिलकर आज्ञा ली और अध्यक्ष के सहयोग से छात्र/छात्रा-अध्यापकों को एक बड़े कमरे में आराम से बिठाया । तत्पश्चात् प्रत्येक परीक्षण (गृह-पर्यावरण अनुसूची, 16 पी0 एफ0, तथा शिक्षण कौशल अनुसूची) के बारे में बताया, निर्देश दिये तथा शंका समाधान की । इसके पश्चात् परीक्षण पुस्तिका तथा उत्तर-पुस्तिका का वितरण कर दिया और निर्देशों को स्वयं पढ़ने को कहा । इसके पश्चात् कार्य प्रारम्भ करने को कहा तथा प्रत्येक मैनुअल के आधार पर कार्य को सम्पन्न कराया गया । फिर अंत में सभी परीक्षण पुस्तिकाओं और उत्तर

पत्रकों को एकत्रित कर लेते थे । प्रत्येक परीक्षण के प्रशासन के पश्चात् अन्तराल देते थे ताकि बच्चे तरोताजा हो सके । इसी प्रकार बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय के पाँचों कॉलिजों से तथ्य संकलन विधिपूर्वक किया गया ।

इसके पश्चात् घर जाकर शोधकर्ता ने सही भरे गये तथा उचित प्रशासित परीक्षण पुस्तिका तथा उत्तर पत्रकों को छाँट लिया और बाकी को नष्ट कर दिया। इसके पश्चात् शोधकर्त्री ने सही 250 छात्र-अध्यापक तथा 250 छात्रा-अध्यापक के उत्तर प्रपत्रों को फलांकन हेतु लिया । सबसे पहले गृह पर्यावरण अनुसूची का फलांकन मैनुअल के आधार पर "लिकर्ट" की पंचबिन्दु मापनी के अनुसार अंक 4-0 तक प्रदान किये । इस प्रकार से सभी छात्र-अध्यापक (250) तथा छात्रा-अध्यापक (250) का फलांकन किया गया । इसके पश्चात् 16 पी0एफ0 का फलांकन मैनुअल के आधार पर किया । फिर अन्त में शिक्षण कौशल अनुसूची (स्वनिर्मित) का फलांकन तीन बिन्दु मापनी के आधार पर किया । इसमें खराब (02), सामान्य (3-4), तथा अच्छा (5-6) अंक भार प्रदान किये गये । इस प्रकार से उच्च एवं निम्न गृह पर्यावरण वाले 50 + 50 छात्र-अध्यापक तथा 50 + 50 छात्रा-अध्यापक के शिक्षण कौशल का विश्लेषण किया गया । इस प्रकार से शोधकर्त्री ने गृह-पर्यावरण अनुसूची, 16 पी0एफ0 तथा शिक्षण कौशल अनुसूची आदि उपकरणों के प्रयोग से तथ्य संकलन किया और फलांकन मैनुअल के आधार पर किया ।

तथ्यों का वर्गीकरण :-

जब शोधकर्ता तथ्यों का संकलन और स्कोरिंग कर लेता है, तो अगला कदम तथ्यों का वर्गीकरण करना होता है । शोधकार्य में अंकों का प्रारम्भिक रूप उनके एकत्रित तथा संग्रहीत करने पर समाप्त हो जाता है । कच्चे प्राप्तांक इतने अधिक होते हैं कि उनको समझना, प्रयोग में लाना, एवं उनसे कोई निष्कर्ष निकालना बहुत ही जटिल व असम्भव होता है । इस एकत्रित हुये विशाल समूह या तथ्य समूह को ऐसे तरीके से छाँटा जाता है, या रूप या वर्गों में रखा जाता है कि उनका स्पष्ट

आशय या भाव प्रकट हो जाये । अतः शोधार्थी एकत्रित तथ्यों को अधिक सरल एंव बोधगम्य बनाने के लिये "सांख्यिकी वर्गीकरण" का प्रयोग करते हैं ।

सांख्यिकीय वेत्ताओं ने वर्गीकरण को वस्तुओं की उनकी समानताओं और सम्बन्धों के अनुसार समूहों और वर्गों में व्यवस्थित करने की प्रक्रिया के रूप में माना है । ये इकाइयों को भिन्नता के बीच पाई जाने वाली एकता को प्रगट करता है ।

इस प्रकार से यह स्पष्ट होता है कि तथ्य वर्गीकरण एक प्रक्रिया है जिसके द्वारा अव्यवस्थित सामग्री को उद्देश्यानुसार व्यवस्थित किया जाता है । इस व्यवस्था के आधार पर सम्पूर्ण सामग्री को कुछ विशेष वर्गों में विभाजित कर लिया जाता है । इसमें प्रत्येक वर्ग का विस्तार समान होता है । अतः समान वर्ग विस्तार के आधार पर विस्तृत सामग्री को संक्षिप्त रूप दे देना ही वर्गीकरण होता है । इसके द्वारा दो उद्दीपकों के मध्य तुलनात्मक अध्ययन को सरल बनाया जा सकता है । शोधकर्ता इसका प्रयोग सांख्यिकीय विवेचना के लिये सुव्यवस्थित, सरल तथा निश्चित रूप से स्पष्ट करने के लिये करते हैं । इस तरह से तथ्यों का सही एंव उपयुक्त प्रयोग उद्देश्य पूर्ति हेतु किया जाता है ।

प्रस्तुत शोध कार्य का क्षेत्र झाँसी परिक्षेत्र में स्थित एंव शिक्षा देने में संलग्न पाँच शिक्षक-प्रशिक्षण महाविद्यालयों के कक्षा बी0एड0 के छात्र/छात्रा-अध्यापकों को माना गया है । इन प्रशिक्षण महाविद्यालयों में विश्वविद्यालय स्तर पर आयोजित वस्तुनिष्ठ परीक्षा प्रणाली के द्वारा चयन किया जाता है । इनमें ग्रामीण/शहरी, स्त्री/पुरूष तथा सभी वर्गों के छात्र/छात्रा प्रवेश लेते हैं । अतः शोधकर्ती ने इनके गृह-पर्यावरण, व्यक्तित्व तथा शिक्षण-कौशल आदि परिवर्तियों को जानने की कोशिश इस शोध में की है । अतः शोधकर्त्री ने तथ्यों के वर्गीकरण के बाद सांख्यिकीय विश्लेषण प्रारम्भ किया ।

तथ्य विश्लेषण एंव व्याख्या :-

एक अध्यापक की सफलता उसके द्वारा सोचे गये तर्क एंव रूचि द्वारा किये गये शिक्षण पर निर्भर करती है । इसके लिये सांख्यिकीय ज्ञान और इसका शिक्षा में प्रयोग जानना अति आवश्यक माना गया है । आज के वैज्ञानिक युग में कोई भी शोध कार्य सांख्यिकीय ज्ञान के बिना सम्भव नहीं हो पाता है, क्योंकि इन विधियों के द्वारा कार्य में शुद्धता, निर्भेक्षता और सहीपन आसानी से लाया जा सकता है । "वोल्फ" महोदय के विचार में "प्राकृतिक घटनाओं में उसकी जटिलता तथा आरी स्पष्टता के बावजूद, किसी नियम की खोज, विवेचना तथा समन्वय के द्वारा ही सम्भव है ।"

अत: सांख्यिकी विधियाँ व्याख्या करने में और आसानी से निष्कर्ष निकालने में सहायता प्रदान करती हैं । शोधकर्त्री को यह स्पष्ट करने में कोई शंका प्रतीत नहीं होती है कि सांख्यिकी विधियों का प्रयोग किये बिना कोई भी प्रयोग कार्य एंव शोध कार्य नितान्त असम्भव होते हैं । और यदि सम्भव भी हुये तो उनमें वैज्ञानिक विशेषताओं का पूर्ण अभाव रहेगा ।

सामान्यत: शोधकर्ता प्रस्तुत अध्याय को चार उप-विभागों में बाँट कर अध्ययन करते हैं :- प्रथम - उपविभाग के अन्तर्गत तथ्यों का संकलन तथा स्कोरिंग उपयुक्त परीक्षणों द्वारा किया जाता है, का वर्णन करते हैं । द्वितीय - उप-विभाग के अन्तर्गत वर्णनात्मक सांख्यिकी के प्रयोग द्वारा तथ्यों का विश्लेषण एंव व्याख्या करते हैं । तृतीय - उप-विभाग के अन्तर्गत शोध में प्रयुक्त परिवर्तियों के बीच भिन्नता को जानने के लिये युनिवैरिएट एनालिसिस ऑफ वैरियन्स का प्रयोग करके परिवर्तियों का विश्लेषण एंव व्याख्या की जाती है । चतुर्थ - उप-विभाग के अन्तर्गत शोध प्रयुक्त परिवर्तियों के बीच सम्बन्ध जानने के लिये स्त्री/पुरुष विशेषताओं का विश्लेषण एंव व्याख्या की जाती है ।

मध्यमान :-

शोधकर्ता द्वारा तथ्यों का संग्रह करके, उनका समान वर्गों में वर्गीकरण करके तथा सांख्यिकी में प्रस्तुत करके तथ्यों को सरल बना लिया जाता है । इसके पश्चात् इन अंकों के आधार पर एक ऐसा अंक मालूम कर लिया जाता है जो समस्त अंकमाला का प्रतिनिधि अंक कहलाता है । सामान्यत: यह अंकमाला के बीच में स्थित होता है और इस अंक के आस-पास ही माला के अधिक अंक रहते हैं । यह अंक समस्त पदों का सार होता है और इसीलिए इसे माला का प्रतिनिधि माना जाता है । इसी को मध्यमान कहा जाता है ।

प्रामाणिक विचलन :-

वर्णनात्मक सांख्यिकी की एक माप प्रामाणिक विचलन भी है । इसको प्राय: प्रमाप विचलन, मानक विचलन, प्रामाणिक विचलन और एस0 डी0, आदि विभिन्न नामों से पुकारा जाता है । इसको विद्वान लोग सर्वश्रेष्ठ विचलन माप मानकर प्रयोग करते हैं । सांख्यिकी गणनाओं में इसकाप्रयोग वर्ग की समजातीयता और विषमजातीयता को जानने के लिये किया जाता है । शोध कार्यों में और अन्य उच्च गणनाओं में इसका प्रयोग करके माला के केन्द्रीय अंक का पता लगाते हैं और फिर वह प्रामाणिक विचलन ज्ञात करके मध्यमान से माला के अंकों या तथ्यों के बिखराव या विस्तार अथवा फैलाव का पता लगाते हैं । इस प्रकार से प्रामाणिक विचलन किसी श्रेणी में विभिन्न पदों के समानान्तर मध्यमान से विचलन के वर्गों के योग का वर्गमूल होता है । इसका प्रतीकात्मक स्वरूप {6} सिगमा भी प्रयोग में लाया जाता है ।

मानक त्रुटि :-

सांख्यिकी प्रविधियों की मापों में कुछ न कुछ त्रुटि पाई जाती है । इस त्रुटि का आधार प्रतिचयन का आकार होता है । प्रतिचयन का आकार यह निश्चित

करता है कि त्रुटि कम होगी या अधिक । यानि यदि प्रतिचयन का आकार छोटा होता है तो त्रुटि अधिक होगी और प्रतिचयन का आकार बड़ा होता है तो त्रुटि कम होगी । इस प्रकार से "त्रुटि से हमारा तात्पर्य यह है कि माप उस मूल्य से कुछ भिन्न होती है जो हम प्रतिचयन, समग्र की यथार्थ मॉप से प्राप्त करते हैं ।" प्रत्येक प्रतिचयन कागठन एक समान पापुलेशन से लिया गया होता है, अतः हम आशा कर सकते हैं कि समस्त मध्यमान एक समान होंगे । मापों में त्रुटि का कुछ अंश सदैव प्रवेश कर जाता है । जिस कारण, क्रमिक प्रतिचयनों के मध्यमान एक समान नहीं होते हैं । प्रतिचयन वितरण में इस प्रकार की त्रुटि को "सैम्पलिंग त्रुटि" कहा जाता है । सांख्यिकी विद्वानों ने निदर्शन त्रुटि को ज्ञात करने के लिये कुछ सूत्रों का निर्माण किया है । इनमें से एक सूत्र मानक त्रुटि का है । यह एक ऐसा प्रतिदर्शक है जो न्यादर्श से प्राप्त मध्यमान की विश्वसनीयता का प्राक्कलन करता है । इससे यह ज्ञात होता है कि सम्भाविता कितनी मात्रा में न्यादर्श, समग्र के मध्यमान के प्रतिनिधिक है । अर्थात् यदि हम न्यादर्श के मध्यमान को समग्र के मध्यमान के समान मानें तो त्रुटि की कहॉं तक सम्भावना रहती है ।

सहसम्बन्ध :-

शोधकर्ता दो परिवर्तियों के बीच सम्बन्ध जानने के लिये सहसम्बन्ध गुणांक का प्रयोग करता है । विद्वानों ने इसके लिये अनेक सूत्रों व विधियों का प्रयोग करना बतलाया है, लेकिन प्रस्तुत कार्य में शोधकर्त्री ने "प्राडक्ट मोमेन्ट सह-सम्बन्ध" विधि का प्रयोग किया है । पारवर्तियों के स्वरूप एंव विस्तार के आधार पर सहसम्बन्ध विधि का प्रयोग किया जाता है । परिवर्ती का स्वरूप सांख्यिकीयविद् सामान्य वक्र के आधार पर निश्चित करते हैं । सहसम्बन्ध गुणॉंक - 1.00 से + 1.00 तक हो सकता है ।

स्टैन्स का निर्माण :-

शोधकर्त्री ने डॉ0 कपूर द्वारा हिन्दी रूपान्तरित 16 पी0एफ0 के द्वारा

छात्र/छात्रा-अध्यापकों (500) पर तथ्य एकत्रित किये, फिर स्टैन्स तालिका का प्रयोग करके प्रत्येक फलांकन को स्टैन्स में परिवर्तित कर लिया । फिर प्रत्येक व्यक्तित्व विशेषता के परिवर्तित स्टैन्स का मध्यमान ज्ञात कर लिया और इस प्रकार से छात्र/छात्रा-अध्यापक पार्श्वदृश्य शोधकर्त्री ने तैयार किये ।

गृह-पर्यावरण का विश्लेषण :-

डॉ0 मिश्रा के द्वारा विकसित गृह पर्यावरण अनुसूची के प्रयोग द्वारा 500 छात्र/छात्रा-अध्यापकों पर तथ्य संकलन किया गया । इन प्रदत्त संकलनों का वर्गीकरण किया और फिर क्यू-1 तथा क्यू-3 में विभाजित करके दो वर्ग (उच्च तथा निम्न वातावरण) बना लिये गये । तथ्य वितरण निम्न तालिका में प्रस्तुत हैं :-

तालिका नं0 4.1

गृह-पर्यावरण अंक वितरण तालिका

छात्र-अध्यापक वर्ग			छात्रा-अध्यापक वर्ग	
प्रतिशत	संख्या	प्राप्तांक/वर्गीकरण	संख्या	प्रतिशत
4	10	300-319	5	2
7	17	280-299	7	3
7	18	260-279	12	5
20	49	240-259	40	16
18	45	220-239	60	24
21	52	200-219	50	20
8	22	180-199	30	12
8	20	160-179	21	8
4	09	140-159	15	6
3	08	120-139	10	4
100	250	योग	250	100

तालिका नं0 4.1 को देखने से स्पष्ट होता है कि छात्र-अध्यापकों में गृह-पर्यावरण प्राप्तांकों का प्रसार 120 से 319 तक है । इसमें सर्वाधिक आवृत्ति 200 से 219 वर्गान्तर के बीच आई है । वितरण की दोनों सीमायें ऊपर की ओर तथा नीचे की ओर छात्रा-अध्याकों की संख्या घटती चली गई हैं । यहाँ पर वितरण सामान्य नहीं प्रतीत होता है क्योंकि क्यू-1 और क्यू-3 मध्यमान से समान दूरी पर नहीं है । अत: प्राप्त आवृत्ति वितरण विकृत वितरण है ।

इसी प्रकार से छात्रा-अध्यापकों के सन्दर्भ में उच्च अंक 220 से 239 के मध्य रहे हैं । इसमें सामान्य वितरण नहीं रहा है क्योंकि मध्याँक के ऊपर की ओर तथा नीचे की ओर आवृत्ति संख्या कम होती गई है । अत: इनका वितरण भी सामान्य नहीं है ।

इसी प्रकार से तालिका में वितरण के उच्च छोर 300 से 319 पर आवृत्ति (छात्र-अध्यापकों) की 10 है और छात्र-अध्यापक की 5 ही है । इससे स्पष्ट होता है कि छात्र-अध्यापक उच्च पर्यावरण वाले शिक्षण की ओर आकर्षित हो रहे हैं । साथ ही उनको पर्यावरण की श्रेष्ठता में विश्वास हो रहा है । इसके विपरीत वितरण में निम्न छोर की ओर छात्र-अध्यापकों की संख्या 8 है और छात्रा-अध्यापकों की 10 है । इससे स्पष्ट होता है कि उपयुक्त या निम्न पर्यावरण की छात्रायें भी शिक्षण की ओर आकर्षित हो रही हैं । साथ ही आरक्षण भी उनको प्रोत्साहित कर रहा है । अत: छात्र-अध्यापक तथा छात्रा-अध्यापकों में पर्यावरण सम्बन्धी विषमता स्पष्ट होती है । अत: शोधकर्त्री ने तथ्यों को अधिक स्पष्ट करने के लिये तालिका नं0 1 का मध्यमान, प्रामाणिक विचलन तथा प्रथम चतुर्थांश और तृतीय चतुर्थांश आदि सांख्यिकी की गणना की है जिसका विवरण तालिका नं0 4.2 में प्रस्तुत किया गया है :-

तालिका नं0 4.2

छात्र/छात्रा-अध्यापकों के गृह-पर्यावरण प्राप्तांकों के मध्यमान, प्रामाणिक विचलन तथा प्रथम व तृतीय चतुर्थांश विवरण:-

वर्ग	संख्या	मध्यमान	प्रामाणिक विचलन	प्रथम-चतुर्थांश	तृतीय-चतुर्थांश
छात्र-अध्यापक	250	225.02	41.7	200.8	252.3
छात्रा-अध्यापक	250	212.38	39.1	190.5	240.25

तालिका नं0 4.2 से स्पष्ट होता है कि गृह-पर्यावरण के प्राप्तांकों में छात्र-अध्यापक वर्ग का मध्यमान, छात्रा-अध्यापक वर्ग से अधिक रहा है । जहाँ पुरुष वर्ग का मध्यमान (225.02) रहा है वहीं स्त्री वर्ग का मध्यमान (212.38) ही रहा है । अत: निष्कर्षात्मक तौर पर कहा जा सकता है कि पुरुष वर्ग अच्छे पर्यावरण से आया है अपेक्षाकृत स्त्री वर्ग के । इसी के साथ यदि हम दोनों वर्गों के प्रामाणिक विचलन को देखें तो पाते हैं कि छात्र-अध्यापक (41.7) तथा छात्रा-अध्यापक (39.1) प्रामाणिक विचलन रहा है । इसमें पर्यावरण के सन्दर्भ में विषमता पुरुष वर्ग में अधिक पाई गई है अपेक्षाकृत स्त्री वर्ग के । गृह पर्यावरण की उच्चता और निम्नता को जानने के लिये शोधकर्त्री द्वारा छात्र/छात्रा-अध्यापकों के प्राप्तांकों का क्यू-1 तथा क्यू-3 की गणना की गई । प्राप्त मानों की तालिका नं0 4.2 से स्पष्ट होता है कि पुरुष वर्ग का क्यू-1 (200.85) रहा है जबकि स्त्री वर्ग का (190.5) रहा है । अत: स्पष्ट होता है कि मध्यमान से नीचे की 25 प्रतिशत आवृत्तियों का स्तर पुरुष वर्ग का अधिक रहा है अपेक्षाकृत स्त्रीवर्ग के । यानि पुरुष वर्ग का गृह पर्यावरण उतना निम्नस्तरीय नहीं है जितना कि स्त्री वर्ग का है, प्रतीत हुआ है । अत: दोनों वर्गों की तुलना में छात्र वर्ग का पर्यावरण अच्छा है ।

इस प्रकार से स्पष्ट होता है कि बी0एड0 प्रशिक्षणरत छात्रायें स्वस्थ पर्यावरण से नहीं आयी हैं जितने छात्र आये हैं ।

इसके विपरीत गृह पर्यावरण की उच्चता की ओर ध्यान दें तो छात्रों ने ही श्रेष्ठता हासिल की है । बी0एड0 छात्रों का गृह पर्यावरण उच्चता बिन्दु (252.3) रहा है जबकि बी0एड0 छात्राओं का उच्चता बिन्दु (240.25) रहा है । इस उच्चतम सीमा में 25 प्रतिशत बी0एड0 विद्यार्थी आते हैं । इससे स्पष्ट होता है कि शिक्षण के प्रति उत्साही दृष्टिकोण छात्रवर्ग में भी विकसित हो रहा है । परिवार का परिवेश व्यवसाय के चुनाव में मुख्य भूमिका अदा करता है । पहले शिक्षण कार्य को उच्च गृह पर्यावरण वाले अभिभावक आर्थिक रूप से उत्तम नहीं मानते थे, लेकिन वेतन की विषमता को दूर करके सरकार ने उच्च वर्गीय व्यक्तियों को भी आकर्षित किया है । भारतीय समाज स्त्री वर्ग को अधिक सुरक्षा व सम्मान देता रहा है, लेकिन परिवार के बाहर व्यवसायिक दृष्टिकोण में अब भी स्त्रीवर्ग के बारे में पिछड़ापन है । महिला वर्ष, समानता का अधिकार तथा महिला योजनायें आदि भी उनको पूर्ण सुरक्षा देने में असफल हो रही हैं । शोधकर्त्री का विचार है कि भारतीय सभ्यता तथा संस्कृति और महिला बनावट व स्वभाव पुरुष वर्ग की समानता करने में स्वयं को असफल जाता है । इस प्रकार का गृह पर्यावरण अभी भारतीय समाज में ग्रहणीय नहीं हो पाया है कि महिला वर्ग को स्वयं के विकास की पूरी स्वतंत्रता दे दी जाये । परिणामस्वरूप उच्च पर्यावरण में छात्र-अध्यापक अधिक संख्या में श्रेष्ठ पाये गये हैं, अपेक्षाकृत छात्रा-अध्यापकों के ।

चतुर्थांश प्रथम तथा चतुर्थांश तृतीय के आधार पर प्रशिक्षणरत छात्र/छात्रा को दो वर्गों में विभाजित किया गया । शोधकर्ता ने प्रत्येक प्रशिक्षण महाविद्यालय से प्राप्त प्रदत्तों में से लाटरी विधि के प्रयोग द्वारा 50 + 50 = 100 (निम्न गृह पर्यावरण) हेतु चुनाव किया । इस प्रकार से उच्च गृह पर्यावरण के पुरुष वर्ग (50) तथा स्त्री वर्ग (50) आदि तथा निम्न पर्यावरण हेतु पुरुषवर्ग (50) तथा स्त्री वर्ग (50) आदि को शोध न्यादर्श हेतु माना गया । इसका सांख्यिकी विवरण निम्न प्राकर से प्रस्तुत है :-

तालिका सं0 4.3

प्रथम चतुर्थांश तथा तृतीय चतुर्थांश अंक वितरण (गृह पर्यावरण) के मध्यमान, प्रामाणिक विचलन, विचरण गुणक का विवरण :-

निम्न स्तर :

वर्ग	संख्या	मध्यमान	प्रामाणिक विचलन	विचरण गुणक
छात्र-अध्यापक	50	164.9	20.09	12.0
छात्रा-अध्यापक	50	161.7	19.80	12.2

उच्च स्तर :-

वर्ग	संख्या	मध्यमान	प्रामाणिक विचलन	विचरण गुणक
छात्र-अध्यापक	50	266.5	17.0	7.0
छात्रा-अध्यापक	50	267.7	17.40	6.0

निम्नस्तरीय वर्ग :-

तालिका नं0 4.3 गृह पर्यावरण के निम्न स्तर को प्रगट करती है । इसमें लाटरी विधि से 50 छात्र-अध्यापक तथा 50 छात्रा-अध्यापकों का चुनाव करके तथ्य

संकलन किया गया है । इसका सांख्यिकी विश्लेषण पुरुष (164.9) मध्यमान तथा स्त्री (161.7) मध्यमान रहा है । इससे स्पष्ट होता है कि पुरुष वर्ग स्त्री -अध्यापकों की अपेक्षा अच्छे औसत पर्यावरण में रहते आये हैं । परन्तु विषमता भी छात्र-अध्यापकों में ही अधिक प्रतीत हो रही है, क्योंकि इनका प्रामाणिक विचलन (20.9) रहा है जबकि छात्रा-अध्यापिकाओं का (19.80) रहा है । यानि गृह-पर्यावरण के विचलन में छात्र-अध्यापक वर्ग अधिक है, अपेक्षाकृत स्त्री-अध्यापिका वर्ग के । इसके साथ ही यदि हम दोनों वर्गों के विचरण गुणक को देखें तो छात्र-अध्यापक वर्ग (12.0) रहा है जबकि छात्रा-अध्यापक वर्ग का (12.2) रहा है । दोनों में 0.2 का अन्तर है जो नगण्य माना जाता है । अतः निष्कर्ष के तौर पर कहा जा सकता है कि गृह पर्यावरण में विषमता का स्तर दोनों की वर्गों में एक सा है । क्योंकि बी0एड0 प्रशिक्षणार्थियों के चयन पर ग्रामीण/शहरी, आरक्षित/अनारक्षित, समृद्धशाली/असमृद्धशाली आदि कारकों का भी प्रभाव पड़ता है । परिणामस्वरूप विषमता दोनों ही वर्गों में लगभग समान स्तर पर रही है ।

उच्च स्तरीय वर्ग :-

तृतीय चतुर्थांश के आधार पर उच्च स्तरीय वर्ग का चयन शोधकर्त्री ने किया। इसको उच्च स्तर तालिका में वर्णन किया गया है । जिसके कालम एक में वर्ग, कालम दो में संख्या, कालम तीन में मध्यमान, कालम चार में प्रामाणिक विचलन तथा कालम पाँच में विचरण गुणक के मानों को ज्ञात करके लिखा गया है । इसके न्यादर्श का चयन भी लाटरी विधि से 50 स्त्री-अध्यापक और 50 पुरुष अध्यापक के रूप में अध्ययन हेतु रखा गया है । इनका सांख्यिकी विश्लेषण मध्यमान (266.5) छात्र-अध्यापक तथा (267.7) छात्रा-अध्यापकों का रहा है । यानि उच्च गृह पर्यावरण में छात्रों की अपेक्षा छात्रायें श्रेष्ठ पर्यावरण से आई हैं । इस आधार पर कहा जा सकता है कि ऐसे घर जिनका छात्राओं की दृष्टि में मनो-सामाजिक परिस्थिति तथा

ज्ञानात्मक, भावात्मक दृष्टि से मात्रात्मक एंव गुणात्मक रूप में सुरक्षा एंव सहायता मिलती है, छात्रों की तुलना में अधिक संख्या में हैं । यानि परिवार का व्यवहार छात्राओं के साथ मृदु, स्नेहिल, सुरक्षात्मक, एंव सहिष्णु युक्त होता है तथा उनको समानता, स्वतन्त्रता और स्व अधिकार तथा नैतिकता की उचित शिक्षा दी जाती है ताकि वे स्वयं में भारतीय परम्परा का अनुशासन मानकर विकास कर सकें । भारत सरकार ने एक्शन प्लान (1992) में व्यवसाय में स्त्री-पुरूष समानता पर विशेष बल दिया है । भूतपूर्व राष्ट्रपति डॉ0 राजेन्द्र प्रसाद (1952) का मत था कि राष्ट्र का विकास स्त्री शिक्षा के द्वारा शीघ्र एंव अनुशासनमय ढंग से आसानी से हो सकता है । क्योंकि परिवार में बच्चों का विकास सिर्फ माँ के निर्देशन तथा सेवा का परिणाम मात्र होता है । इस प्रकार से बी0एड0 प्रशिक्षित छात्राऐं अपने गृह-पर्यावरण में श्रेष्ठता प्रकट करती हैं, अपेक्षाकृत छात्र वर्ग के ।

गृह-पर्यावरण के उच्च स्तरीय वर्ग का प्रामाणिक विचलन छात्र-अध्यापक वर्ग (17.0) की अपेक्षा छात्रा-अध्यापक वर्ग का अधिक (17.40) रहा है । इससे स्पष्ट होता है कि छात्रा-अध्यापक वर्ग का पर्यावरण तो श्रेष्ठ है लेकिन उसमें विषमता अधिक है । इसका कारण मूल्यों व आदर्शों का प्रभाव, आरक्षण नीति, और चयन प्रक्रिया के प्रभाव मात्र हो सकते हैं । साथ-ही-साथ व्यवसाय में आत्मविश्वास को जागृत करना और सामयिक परिस्थिति के साथ समायोजन स्थापना की कठिनाई भी हो सकती है । इसके साथ ही शोधकर्त्री ने विचरण गुणक ज्ञात किया जो स्पष्ट करता है कि छात्र-अध्यापक अपनी विषमता के बिखराव को अधिक प्रगट करते हैं जबकि छात्रा-वर्ग में विषमता बिखराव कम है । निष्कर्ष के तौर पर स्पष्ट किया जा सकता है कि गृह-पर्यावरण के प्रभाव जीवन के विकास को प्रभावित करते हैं और उनके व्यक्तित्व गठन को सजाने तथा संवारने में अपना सहयोग प्रदान करते हैं । साथ ही इसका प्रभाव कक्षा शिक्षण पर भी पड़ता है । अतः शोधकर्त्री गृह-पर्यावरण के प्रभाव का अध्ययन व्यक्तित्व विकास व शिक्षण कौशल के रूप में प्रस्तुत करेगी ।

उच्च स्तर तथा निम्न स्तर वर्गों के मध्यमान, प्रामाणिक विचलन और विचरण गुणक आदि का आँकलन करने, विश्लेषण करने से यह निष्कर्ष प्राप्त होता है कि उच्च स्तर पर बी०एड० के छात्र/छात्रा ने अपने माता-पिता के व्यवहार को अनुकरणीय माना जिससे विषमता कम देखने को मिली है जबकि निम्न स्तरीय वर्ग में दोनों की विषमता अधिक देखने को मिली है । इसका कारण माता-पिता के व्यवहार का उनके प्रति अधिक संवेदनशील न पाया जाना रहा । परिणामस्वरूप उन्होंने विकास का स्वयं पर्यावरण तैयार किया और अपनाया भी है, जो सभी के लिये एक समान स्तर नहीं रख सकता है ।

तालिका नं0 4.4

गृह-पर्यावरण के सन्दर्भ में छात्र/छात्रा-अध्यापक वर्ग की "टी" मूल्य का विवरण :-

गृह-पर्यावरण

	उच्च स्तर		निम्न स्तर	
	छात्र	छात्रा	छात्र	छात्रा
न्या0 सं0	50	50	50	50
मध्यमान	266.5	267.7	164.9	161.7
प्र0 वि0	17.0	17.40	20.09	19.80
मा0 त्रुटि	2.43	2.5	2.87	2.83
"टी" मूल्य	4.4		8.0	

बी0एड0 प्रशिक्षणार्थी (छात्र/छात्रा) वर्गों के मध्यमानों की माप द्वारा जो अन्तर आया है, क्या वह संयोग का परिणाम है अथवा वास्तविक है ? इस

प्रश्न का उत्तर जानने के लिये शोधकर्ती ने "टी" अनुपात का ऑकलन किया । दोनों वर्गों के प्राप्त मध्यमान अन्तर को उनकी मानक त्रुटि से भाग दे देते हैं । प्राप्त परिणाम से यह ज्ञात हो जाता है कि प्राप्त अन्तर प्रत्याशित अन्तर से कितना गुना अधिक है ।

प्रस्तुत "टी" अनुपात तालिका नं0 4.4 से स्पष्ट होता है कि गृह-पर्यावरण के उच्च स्तर वर्ग के स्त्री/पुरुष में .01 स्तर पर सार्थक भिन्नता है । बी0एड0 प्रशिक्षणरत छात्रों का मध्यमान (266.5) तथा छात्राओं का मध्यमान (267.7) रहा है तथा प्रामाणिक विचलन (17.0) तथा (17.40) क्रमशः रहा है । दोनों मध्यमानों का अन्तर (1.2) रहा है और "टी" अनुपात (4.4) रहा है । यह "टी" अनुपात .01 विश्वास स्तर पर सार्थक पाया गया है । इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि पुरुष प्रशिक्षणार्थी तथा स्त्री प्रशिक्षणार्थी के गृह पर्यावरण प्रभावों में अन्तर है । यानि दोनों वर्गों के मध्यमान में प्राप्त अन्तर वास्तविक अन्तर है जिससे यह स्पष्ट होता है कि छात्रवर्ग के लिये परिवार का वातावरण अलग होता है और छात्रा वर्ग के लिये अलग ।

इसी प्रकार से बी0एड0 प्रशिक्षणार्थियों के गृह पर्यावरण के निम्न स्तर वर्ग (स्त्री/पुरुष) के मध्यमानों के अन्तर की सार्थकता को जानने के लिये "टी" अनुपात को ज्ञात किया गया । निम्न स्तरीय वर्ग में "टी" का मान 8.0 प्राप्त हुआ है । यह भी उच्च स्तर वर्ग की तरह .01 विश्वास स्तर पर सार्थक पाया गया है । इस प्रकार से स्पष्ट होता है कि बी0एड0 छात्र/छात्राओं के निम्नस्तरीय वर्गों के मध्य-मानों में अन्तर वास्तविक रूप से है । इस प्रकार से स्पष्ट होता है कि बी0एड0 के निम्न स्तर वर्ग के छात्र/छात्रा भी अपने माता-पिता के व्यवहार को स्वीकारात्-त्मक मानते हैं ।

व्यक्तित्व विशेषताओं का विश्लेषण :-

शोधकर्त्री ने बी0एड0 प्रशिक्षणरत अध्यापकों के व्यक्तित्व पार्श्वदृष्य (विशेषताओं) को जानने के लिये डॉ0 कपूर द्वारा (हिन्दी रूपान्तर) 16 पी0एफ0

Table 4.5

High Home Environment Male/Female Students in terms of stens and their categories.

Factors & PF	Description	MALE (50) Student-Teachers Stens	Categories	FEMALE (50) Student-Teachers Stens	Categories
A	Reserved u/s Outgoing.	5.6	Average	5.5	Average
B	Less intelligent u/s more intelligent	3.05	Stg. Devt. (-)	3.96	Slt. Devt. (-)
C	Emotionally less stable u/s emotionally stable	4.81	Average	4.20	Slt. Devt. (-)
E	Humble u/s. assertive.	6.06	Average	5.19	Average
F	Sober u/s happy go lucky.	3.85	Slt. Devt. (-)	3.95	Slt. Devt. (-)
G	Expedient u/s conscientious	4.53	Slt. Devt. (-)	5.61	Average
H	Shy u/s venturesome	6.40	Slt. Devt. (+)	6.48	Slt. Devt. (+)
I	Tough minded u/s Tender minded	4.78	Average	6.82	Slt. Devt. (+)
L	Trusting u/s Suspicious	6.67	Slt. Devt. (+)	5.61	Average
M	Practical u/s Imaginative.	5.58	Average	6.14	Average
N	Forthright u/s shrewd.	5.5	Average	6.5	Slt. Devt. (+)
O	Placid u/s Apprehensive.	5.43	Average	4.85	Average
Q-1	Conservative u/s experimenting.	5.56	Average	5.74	Average
Q-2	Group dependent u/s self sufficient.	6.7	Slt. Devt. (+)	5.43	Average
Q-3	Un-disciplined u/s controlled.	6.63	Slt. devt. (+)	7.96	Stg. Devt. (+)
Q-4	Relaxed us/ tense.	4.34	Slt. Devt. (-)	3.91	Slt. Devt. (-)

Av. = Average.
Slt. Devt. = Slightly devident
Stg. Devt. = Strongly devident

(+) = Indicates above average
(-) = Indicates below average

का प्रयोग करके चयनित समूहों {उच्च स्तर तथा निम्न स्तर} पर तथ्य एकत्रित किये । इन तथ्यों {रा स्कोर्स} को स्टैन्स तालिका के द्वारा स्टैन्स में परिवर्तित किया । फिर 16 व्यक्तित्व विशेषता तत्वों की स्थिति को विश्लेषित करने के लिए 16 तत्वों के स्टैन्स का मध्यमान ज्ञात किया । यह स्टैन्स 1 से लेकर 10 तक समान अन्तराल में फैले हुए हैं । इनमें स्टैन्स 5 व 6 को औसत माना जाता है, 4 से 7 तक कम विचलन तथा 2, 3, 8 और 9 को उच्च विचलन तथा 1 या 10 को उच्चतम विचलन के रूप में माना जाता है ।

प्रस्तुत कार्य में व्यक्तित्व पार्श्वदृश्य जानने के लिये शोधकर्ता द्वारा बी0 एड0 प्रशिक्षणरत अध्यापकों/अध्यापिकाओं की विशेषताओं का तथ्य विश्लेषण उच्च स्तर वर्ग तथा निम्न स्तर वर्ग का अलग-अलग किया है । उच्च स्तर वर्ग में छात्र अध्यापक तथा छात्रा-अध्यापकों का अलग से विश्लेषण किया गया है तथा निम्न स्तर वर्ग में भी छात्र-अध्यापक तथा छात्रा-अध्यापकों के व्यक्तित्व का अलग से विश्लेषण किया गया है । यह दोनों व्यक्तित्व विशेषता विश्लेषण निम्न रूप से प्रस्तुत हैं :-

स्टैन्स तालिका 4.5 को देखने से स्पष्ट होता है कि बी0एड0 पुरूष प्रशिक्षणरत अध्यापकों के व्यक्तित्व विशेषता तत्व {"ए", सी0 ई0, आई0, एम0, एन0, ओ, क्यू-1 आदि सामान्य स्तर पर रहे हैं । तत्व "बी0एफ0जी0 और क्यू-4 आदि में ऋणात्मक विचलन रहा है । यानि व्यक्तित्व में ये तत्व सामान्य से नीचे के स्तर पर रहे हैं । इसके साथ ही तत्व "एच0, एल0, क्यू-2, और क्यू-3 में धनात्मक विचलन पाया गया है । यानि ये तत्व सामान्य स्तर से उच्च स्तर पर पाये गये हैं । इन तत्वों के विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि पुरूष बी0एड0 अध्यापकों में व्यक्तित्व विशेषतायें गम्भीरता बनाम बहिर्मुखी, भावनामाय बनाम संवेदनशील, विनम्र बनाम निश्चित, स्थिर विचार बनाम अस्थिर विचार, व्यवहारिक बनाम काल्पनिक, गम्भीर बनाम विचारशील आदि का स्तर सामान्य रहा है । जबकि

सामान्य से कम स्तर पर "बौद्धिकता, स्वभाव सम्बन्धी, चैतन्यता और संतुलन आदि विशेषतायें रही हैं । सामान्य से उच्च स्तर पर व्यक्तित्व विशेषतायें - शर्मीलापन बनाम साहसिक, विश्वासी बनाम सन्देहशील, समूहनिर्भरता बनाम आत्मनिर्भर तथा अनियन्त्रित बनाम नियन्त्रित आदि के रूप में पाई गई हैं । इन सभी विशेषताओं में तत्व "बी" जो बौद्धिक सम्पदा से सम्बन्धित हैं - अत्यधिक ऋणात्मक विचलन में पाया गया है । ऐसा प्रतीत होता है कि पुरुष वर्ग में शिक्षण व्यवसाय के प्रति वह विश्वास, सम्मान, और सहजता विकसित नहीं हो पायी है, जिसकी वे आशा करते हैं । साथ ही विद्या का गुण छात्र/छात्राओं में विनयशीलता का विकास करना माना गया है ताकि भविष्य में नागरिक स्वनिर्माण न करके समाज व राष्ट्र का निर्माण करें । अत: इनकी बुद्धि का सोच भौतिकवाद, व्यवसाय की असुरक्षा, मूल्यों का संरक्षण तथा समाज व राष्ट्र के लिये योगदान आदि में उलझा रहता है, क्योंकि अध्यापक के दो ही कार्य {शोधकर्त्री के अनुसार} - होते हैं - प्रथम- परिवार के लिये "अर्थ" अर्जन करना, द्वितीय - समाज का निर्माण करना ।

बी०एड० प्रशिक्षणरत पुरुष अध्यापकों {उच्च स्तर} का रेखाचित्र देखने से स्पष्ट होता है कि सामान्य से उच्च स्तर का विचलन अधिक रहा है । इसका मुख्य कारण पुरुष स्वभाव तथा प्रभुत्त्व के भाव की अधिकता हो सकती है । भारतीय समाज पुरुष प्रधान है जबकि स्त्री को बराबर की समानता, सरकार द्वारा प्रदान की गयी है । अत: वह स्वयं की आत्मतुष्टि हेतु पुरुषत्व को स्थापित करता है । परिणामस्वरूप सबसे अधिक विचलन {धनात्मक} क्यू-2 विशेषता में पाया गया है । इसका स्टैन्स {6.7} रहा है जो सामान्य से 0.7 मान अधिक स्थापित करता है । इस तत्व के अन्तर्गत अध्यापकों में आत्मनिर्भरता का गुण देखने को मिलता है । इस प्रकार के गुण से युक्त व्यक्ति स्वनिर्माणी, स्वतन्त्र विचार युक्त, आत्मनिर्भर, व्यवहारिक एंव क्रियाशील आदि विशेषताओं से युक्त पाये जाते हैं ।

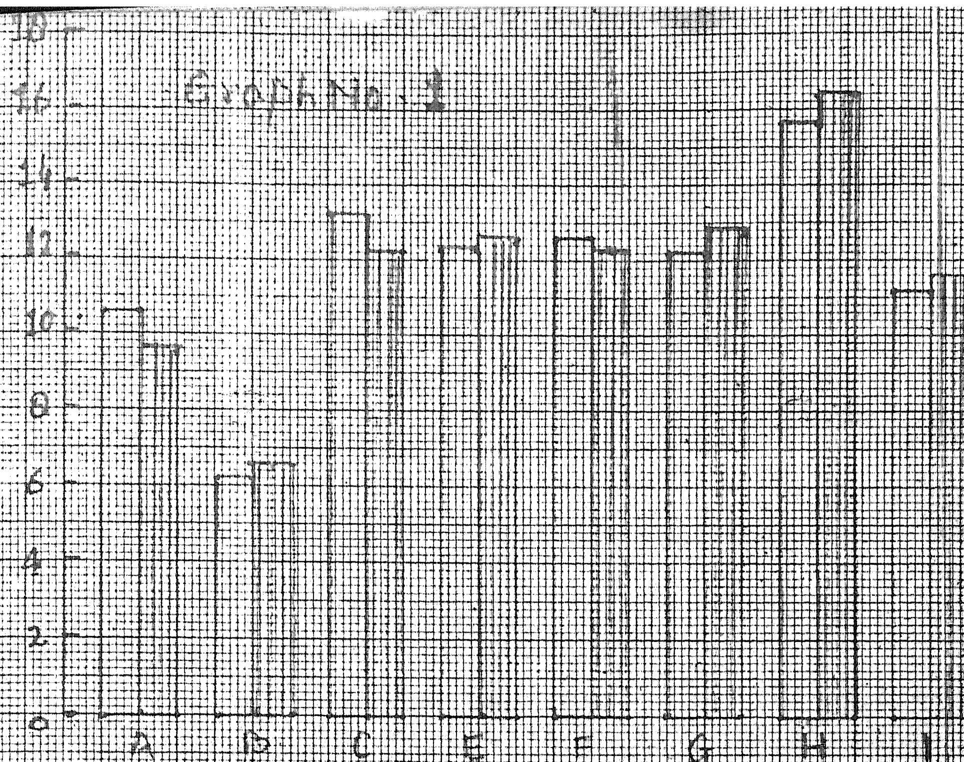
स्टैन्स तालिका 4.5 में ही स्त्री-छात्रा-अध्यापकों के गृह पर्यावरण की उच्च स्थिति वर्ग का प्रदर्शन किया गया है । इसमें सामान्य स्तर पर तत्व "ए, ई,

जी, एल, एम, ओ, क्यू-1 और क्यू-2" आदि रहे हैं । सामान्य से निम्न स्तर यानि ऋणात्मक स्तर पर तत्व - "बी, सी, एफ, और क्यू-4" आदि रहे हैं । सामान्य से उच्च स्तर पर तत्व - एच, आई, एन, और क्यू-3 आदि रहे हैं । सबसे अधिक विचलन तत्व "क्यू-3" में पाया गया है । यानि तत्व "क्यू-3" में स्त्री-अध्यापिकायें सबसे अधिक ध्यान देती हैं इसीलिये इसका विचलन धनात्मक है । इस तत्व की प्रधानता से तात्पर्य स्त्री-अध्यापिकाओं में कक्षानुशासन, आत्म-अनुशासन, समाजप्रियता, अध्यापिका स्तर को बनाये रखना, संवेग तथा भावों पर नियन्त्रण और व्यवहार कुशलता आदि व्यक्तित्व गुण विकसित होते हैं । इसका प्रमुख कारण है स्वयं को पुरुषों के बराबर सिद्ध करना, अपनी अहमियत स्थापित करना तथा व्यवसायिक सम्मान को प्रगट करना तथा एक शिक्षिका आदर्श स्थापित करना जो अनुकरणीय हो ।

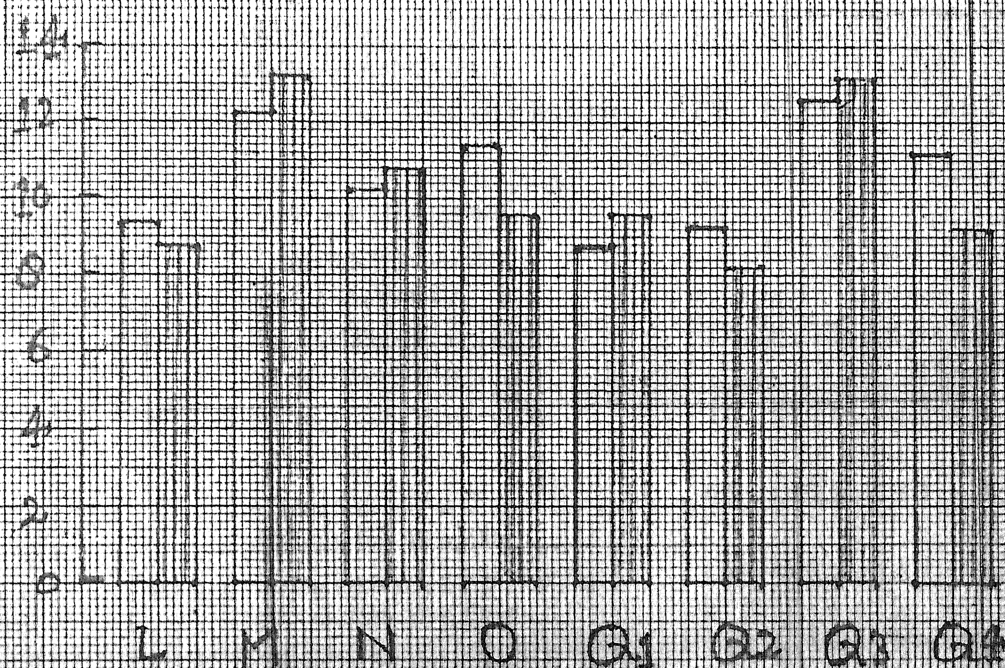
महिला छात्र-अध्यापकों के {उच्च-स्तर वर्ग} रेखाचित्र को देखने से स्पष्ट होता है कि कुल 16 व्यक्तित्व विशेषताओं में से सिर्फ 4 में ऋणात्मक विचलन रहा है और 5 में धनात्मक विचलन रहा है तथा शेष 7 सामान्य स्तर पर रही हैं । रेखाचित्र से एक दम वर्तमान स्थिति प्रगट हो जाती है । चित्र को देखकर ही कोई भी व्यक्ति यह बता सकता है कि महिला अध्यापिकाओं की गुणात्मक स्थिति कैसी है ।

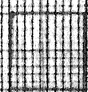
उच्च स्तरीय वर्ग पुरुष - छात्र अध्यापक तथा स्त्री-छात्रा-अध्यापिकाओं के वर्गों की व्यक्तित्व विशेषताओं का अलग-अलग सांख्यिकी विश्लेषण करने के पश्चात् शोधकर्त्री दोनों की तुलनात्मक समीक्षा करना उपयुक्त समझती है ताकि दोनों {स्त्री-पुरुष} की गुणात्मक स्थिति स्पष्ट हो सके ।

दोनों वर्ग {स्त्री-पुरुष} की व्यक्तित्व विशेषताओं के पार्श्व-दृश्यों की तुलना करने से स्पष्ट होता है कि तत्व - "ए, ई, एम, ओ, क्यू-1, क्यू-2" आदि सामान्य स्तर पर रहे हैं । व्यक्तित्व तत्व "बी, एफ, क्यू-4" ऋणात्मक विचलन लिये हुये हैं तथा तत्व "एच, और क्यू-3 धनात्मक विचलन में स्थित हैं । यानि 16



PERSONALITY FACTORS



 MEAN SCORES OF MALE [H.H.E.]

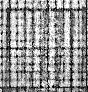
 MEAN SCORES OF FEMALE [H.H.E.]

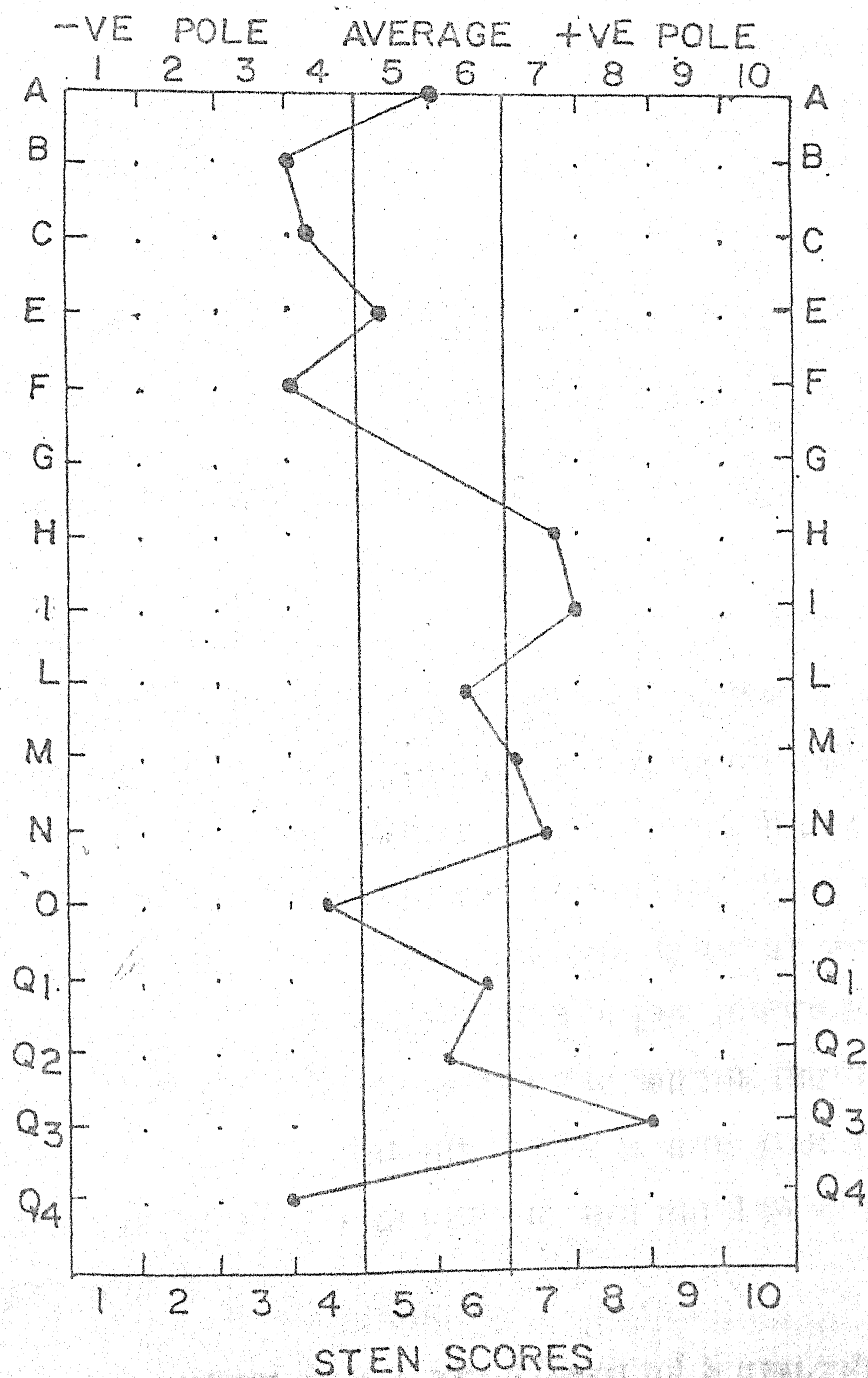
Table : 4.6

Mean score Differences of High Home Environment Male and Female Student Teachers on 16 P.F.

Factors and Description		Mean Scores Male	Female	C.R.	Interpretation
A	Reserved u/s outgoing.	10.36(2.51)	9.61(3.22)	1.57	n.s.
B	Less intelligent u/s more intelligent.	6.11(2.10)	6.77(1.67)	2.24	0.05
C	Emotionally less stable u/s emotionally	13.26(3.75)	12.26(3.90)	1.61	n.s.
E	Humble u/s assertive	12.11(3.47)	12.77(3.71)	1.13	n.s.
F	Sober u/s happy go lucky.	12.28(2.80)	12.52(3.64)	0.43	n.s.
G	Expedient u/s conscientious	12.02(2.73)	12.73(3.34)	1.46	n.s.
H	Shy u/s venturesome	15.74(4.41)	16.42(5.47)	0.79	n.s.
I	Tough minded u/s Tender minded.	11.20(2.84)	11.61(2.77)	0.89	n.s.
L	Trusting u/s Suspicious.	9.43(2.25)	8.74(3.15)	1.55	n.s.
M	Practical u/s imaginative.	12.24(3.24)	13.43(3.99)	2.01	0.05
N	Forth-right u/s shrewd.	10.31(2.39)	10.95(3.14)	1.39	n.s.
O	Placid u/s Apprehensive.	11.51(3.99)	9.52(4.67)	2.80	0.01
Q-1	Conservative u/s experimenting.	8.97(2.58)	9.72(2.50)	1.87	n.s.
Q-2	Group dependent u/s self sufficient.	9.31(2.62)	8.26(2.56)	2.53	0.01
Q-3	Undisciplined u/s controlled.	12.74(3.28)	13.14(3.12)	0.85	n.s.
Q-4	Relaxed u/s tense.	11.10(3.75)	9.25(4.40)	2.76	0.01

Note: ( ) = S.D. Scores.

n. s. = Not significant.



PERSONALITY PROFILES OF HIGH

HOME ENVIRONMENT

MALE- CANDIDATES

तत्वों में से ।। तत्व सामान्य स्तर पार दोनों वर्गों में समान स्तर पर पाये गये हैं । इससे स्पष्ट होता है कि शिक्षक के लिये प्रशिक्षण की अत्यन्त आवश्यकता होती है जो सिर्फ पढ़ाने का ढंग ही नहीं सिखाता है बल्कि "शिक्षक व्यक्तित्व को गरिमा-युक्त भी बनाता है । महिला वर्ग में तत्व "सी" में ऋणात्मक विचलन पाया गया है जबकि पुरूष वर्ग में सामान्य स्तर पर । इसका प्रमुख कारण महिलाओं का अधिक संवेदनशील होना हो सकता है । ये लोग निराशा, अस्थिरता, असुरक्षा आदि के भाव से शीघ्र ग्रसित हो जाती हैं । पुरूष वर्ग का तत्व "जी" ऋणात्मक स्तर पर रहा है जबकि महिला वर्ग में सामान्य स्तर पर रहा है । इसका प्रमुख कारण है व्यवसाय से सन्तुष्टि न मिलना । आज विद्यालयों में राजनीति प्रवेश कर चुकी है । नियमों में अस्थिरता, दिखावटीपन, और साम-दाम-दण्ड-भेद से कार्य चलाना रह गया है । आदर्शवादी मूल्यहनन, और असामाजिकता ही विद्यालयों के वातावरण की परम्परा होती चली जा रही है । पुरूष शिक्षक अपने आत्मसम्मान को गिरता हुआ नहीं देखना चाहता है जबकि महिला शिक्षिका स्वयं को पर्यावरण में ढाल रही है और समायोजन की ओर बढ़ रही है । परिणामस्वरूप धनात्मक उच्च विचलन महिला वर्ग में ﴾क्यू-3﴿ में पाया गया है, जो महिलाओं में अनुशासन प्रियता को स्पष्ट करता है । यानि महिला अध्यापिका का अनुशासन दृष्टिकोण पुरूष अध्यापक से अच्छा होता है । इसी प्रकार से तत्व "बी" में पुरूष अध्यापक उच्च ऋणात्मक विचलन में रहा है । इससे स्पष्ट होता है कि मानसिक सोच में पुरूष अध्यापक अधिक चिन्तित रहते हैं अपेक्षाकृत स्त्री अध्यापिकाओं के । इस प्रकार का भाव समायोजन भाव की अस्थिरता को भी प्रगट करता है ।

तालिका नं0 4.6 उच्च पर्यावरण वर्ग के पुरूष/स्त्री-छात्र-अध्यापकों के मध्यमानों के अन्तर की सार्थकता को प्रगट करते हैं । इस तालिका में शोधकर्त्री ने दोनों वर्गों के मध्यमान, प्रामाणिक विचलन, क्रान्तिक अनुपात और सार्थकता स्तर आदि का वर्णन किया है । व्यक्तित्व विशेषता तत्व "बी", एम, ओ, क्यू-2 और क्यू-4 में स्त्री तथा पुरूष-अध्यापक वर्ग के पर्यावरण में सार्थक भिन्नता स्थापित हुई है।

पुरूष वर्ग व्यक्तित्व विशेषता तत्व {ओ-क्रान्तिक अनुपात 2.8} में आत्मनिर्भर, स्वनिर्णयी तथा विचारशील प्रगट होते हैं । अपेक्षाकृत महिला अध्यापिकाओं के । इनका सार्थकता स्तर .01 स्तर रहा है । तत्व क्यू-2, क्रान्तिक अनुपात {2.5} सार्थकता स्तर 0.01 स्तर पर तथा तत्व क्यू-4, क्रान्तिक अनुपात {2.7} सार्थकता स्तर 0.1 स्तर पर भिन्नता स्थापित करते हैं । यानि तत्व "ओ, क्यू-2 और क्यू-4 में पुरूष अध्यापक श्रेष्ठ रहे हैं अपेक्षाकृत स्त्री-अध्यापिकाओं के । निष्कर्ष के तौर पर कहा जासकता है कि व्यक्तित्व विशेषता तत्व "ओ, क्यू-2, और क्यू-4 के विकास में गृह-पर्यावरण पुरूष छात्र-अध्यापकों को श्रेष्ठ मिला है तुलना में स्त्री-छात्र-अध्यापकों के । इसी प्रकार से तत्व "बी"- क्रान्तिक अनुपात {2.24} सार्थकता स्तर 0.05 से स्पष्ट होता है कि दोनों वर्ग मानसिक चिन्तन में लगभग समानता स्थापित करते हैं, भिन्नता सिर्फ स्वभाव वश हो सकती है । तत्व "एम" - क्रान्तिक अनुपात {2.01} सार्थकता स्तर 0.05 से स्पष्ट होता है कि महिला वर्ग अपनी व्यवहार कुशलता, चिन्ताशीलता, रूढ़ियुक्तता, और कल्पना शक्ति की तीव्रता में पुरूष वर्ग से श्रेष्ठ रहा है ।

मध्यमान प्राप्तांक भिन्नता को शोधकर्ती ने रेखाचित्र के द्वारा भी स्पष्टता प्रदान की है । इससे स्पष्ट होता है कि पुरूष छात्र-अध्यापक आत्मनिर्भर, स्वनिर्णयी, तनावरहित कार्य में विश्वास करते हैं, जबकि महिलावर्ग स्वभावश संकोची, नियमाबन्द, सम्मान रक्षक तथा समाज प्रिय विशेषताओं से पूर्ण होती है । इस प्रकार से स्पष्ट होता है कि उच्च पर्यावरण प्राप्त छात्र-अध्यापकों {स्त्री/पुरूष} के व्यक्तित्व गठन में भी भिन्नता स्थापित होती है ।

शोधकर्ती ने निम्न स्तरीय गृह-पर्यावरण छात्र/छात्रा-अध्यापकों की मध्यमान अन्तर की सार्थकता को तालिका नं0 4.7 में स्थापित किया है । तालिका में कॉलम नं0 एक में 16 तत्व, दो में पुरूष स्टैन्स प्राप्तांक, तीन में विवरण, चार में स्त्री स्टैन्स, पाँच में विवरण प्रस्तुत किया गया है । इस प्रकार से 16 तत्वों का स्त्री तथा पुरूष छात्र-अध्यापकों में स्तर का गुणात्मक तथा मात्रात्मक विवरण प्राप्त हो सकेगा ।

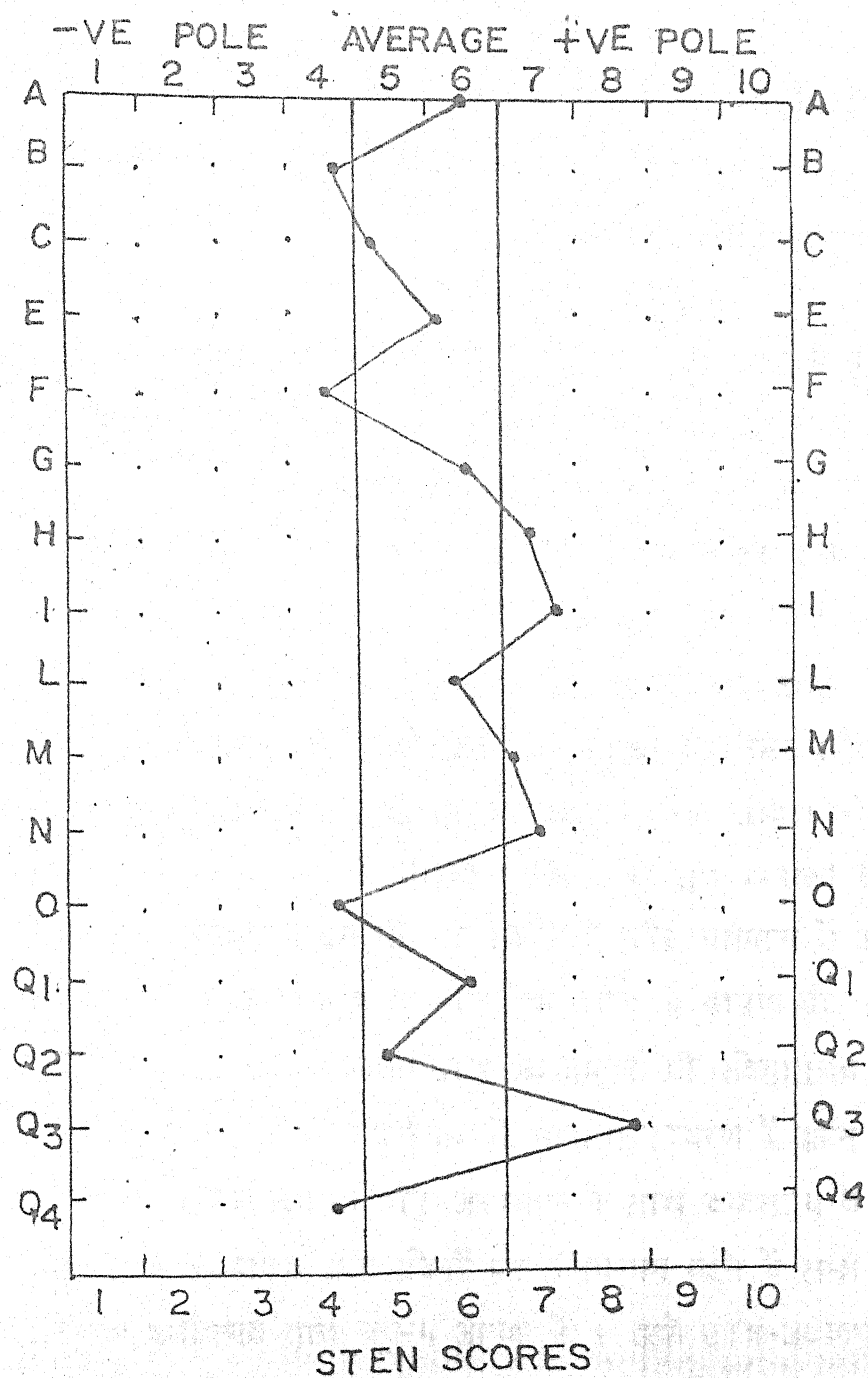
Table : 4.7

Low Home Environment Male/Female Student-Teachers in Terms of stens and their categories.

	Factors and their description	Male (N=50)		Female (N=50)	
		Stens	Categories	Stens	Categories
A	Reserved Vs. Outgoing.	5.5	Average	5.2	Average
B	Less intelligent Vs. More intelligent.	4.4	Slt. Devt. (-)	4.01	Slt. Devt. (-)
C	Emotionally less stable Vs. Emotionally stable	3.9	Slt. Devt. (-)	4.1	Slt. Devt. (-)
E	Humble Vs. Assertive	7.5	Slt. Devt. (+)	5.6	Average
F	Sober Vs. Happy go Lucky.	3.9	Slt. Devt. (-)	4.3	Slt. Devt. (-)
G	Expedient Vs. Conscientious.	5.4	Average	5.2	Average
H	Shy Vs. Venturesome.	6.6	Slt. Devt. (+)	6.7	Slt. Devt. (+)
I	Tough minded Vs. Tender minded.	6.9	Slt. Devt. (+)	6.8	Slt. Devt. (+)
L	Trusting Vs. Suspicious.	5.6	Average	5.2	Average
M	Practical Vs. Imaginative.	6.1	Average	6.2	Average
N	Forthright Vs. Shrewd.	5.9	Average	6.8	Slt. Devt. (+)
O	Placid Vs. Apprehensive.	5.3	Average	4.7	Average
Q-1	Conservative Vs. Experimenting.	5.6	Average	5.7	Average
Q-2	Group dependent Vs. Self sufficient.	5.4	Average	5.5	Average
Q-3	Undisciplined Vs. Controlled.	6.2	Slt. Devt. (+)	7.2	Slt. Devt. (+)
Q-4	Relaxed Vs. Tense.	4.3	Slt. Devt. (-)	3.2	Slt. Devt. (-)

The sign plus (+) indicates above average and minus (-) indicates below average.

Slt. Devt. = Slightly Deviant.
Stg. Devt. = Strongly Deviant.



PERSONALITY PROFILES OF HIGH

HOME ENVIRONMENT

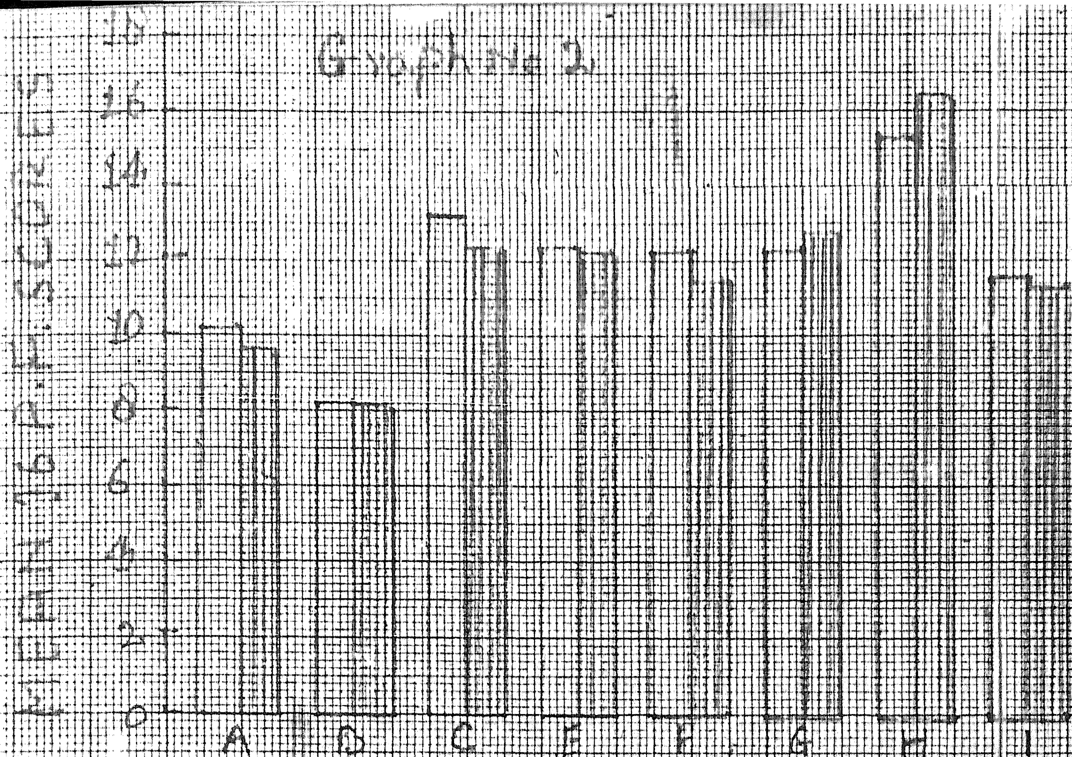
FEMALE - CANDIDATES

गृह-पर्यावरण के निम्न स्तर पर रहने छात्र-अध्यापकों में व्यक्तित्व विशेषता तत्व "ए, जी, एल, एम, एन, ओ, क्यू-1 और क्यू-2 आदि सामान्य स्तर पर रहे हैं । सामान्य से नीचे (ऋणात्मक स्तर) पर तत्व "बी, सी, और क्यू-4" आदि रहे हैं । इसके साथ ही उच्च स्तर पर रहने वाले तत्व "ई, एफ, एच, आई और क्यू-3" आदि आये हैं । इससे स्पष्ट होता है कि छात्र-अध्यापकों में व्यक्तित्व विशेषतायें सामान्य से अपर रही हैं । ऋणात्मक विचलन में मुख्य तत्व "बी" रहा है जो अध्यापक की बौद्धिक सम्पदा से सम्बन्धित होता है । जो व्यक्ति कम प्राप्तांक इस तत्व में पाता है उसमें कम मानसिक निष्पादन क्षमता होती है, धीमी गति से सीखता है, वह सही तथा रचनात्मक विवरण प्रस्तुत करने में असफल रहता है । यह क्रियायें कम बुद्धि का कारण भी हो सकती है और मानसिक तनाव या रोग के कारण भी । शोधकर्ता के मतानुसार निम्न पर्यावरण उन्हीं परिवारों में मिलता है जहाँ पर साक्षरता का तथा धन का अभाव होता है । आज 55 प्रतिशत बी०एड० चयन में विभिन्न प्रकार का कुल आरक्षण है । अतः बौद्धिक ऋणात्मक विचलन वंशानुक्रमीय देन भी हो सकती है और वर्तमान में अध्यापक व्यवसाय की अवमानना के कारण उत्पन्न मानसिक तनाव के कारण भी । इसी प्रकार से तत्व "सी" का ऋणात्मक विचलन छात्र-अध्यापकों की संवेगात्मक अस्थिरता को प्रगट करता है । अध्यापक का कार्य पूर्ण रूप से शांत वातावरण में ज्ञान का आदान-प्रदान करना होता है न कि अशान्त और असम्मान के साथ व्यवसाय के द्वारा रोजी-रोटी कमाना। अतः छात्र-अध्यापक अपने संवेगों पर नियन्त्रण करने में सफल नहीं हो पाते हैं । अन्तिम ऋणात्मक तत्व क्यू-4 आया है । इससे छात्र-अध्यापकों की संतुष्टि की दशा प्रगट होती है । इसका प्रमुख कारण व्यवसाय में उत्पन्न असामान्यदशा है । प्रत्येक अध्यापक स्वयं को उसी परिस्थिति में ढाल लेता है । किसी भी प्रकार का चेतनामय कार्य नहीं करता है । इसलिये उसका निष्पादन गिरता जाता है और वह आराम तलबी की जिन्दगी जीने लगता है । निम्नस्तरीय पुरूष वर्ग के रेखाचित्र को देखने से स्पष्ट होता है कि सामान्य स्तर से धनात्मक विचलन सिर्फ पाँच तत्वों में आया है तथा ऋणात्मक विचलन सिर्फ दो तत्वों में रहा है । अतः छात्र-अध्यापकों का व्यक्तित्व पार्श्वचित्र सामान्य स्तर का है । सिर्फ तत्व "ई" (सबमिसिवनेस

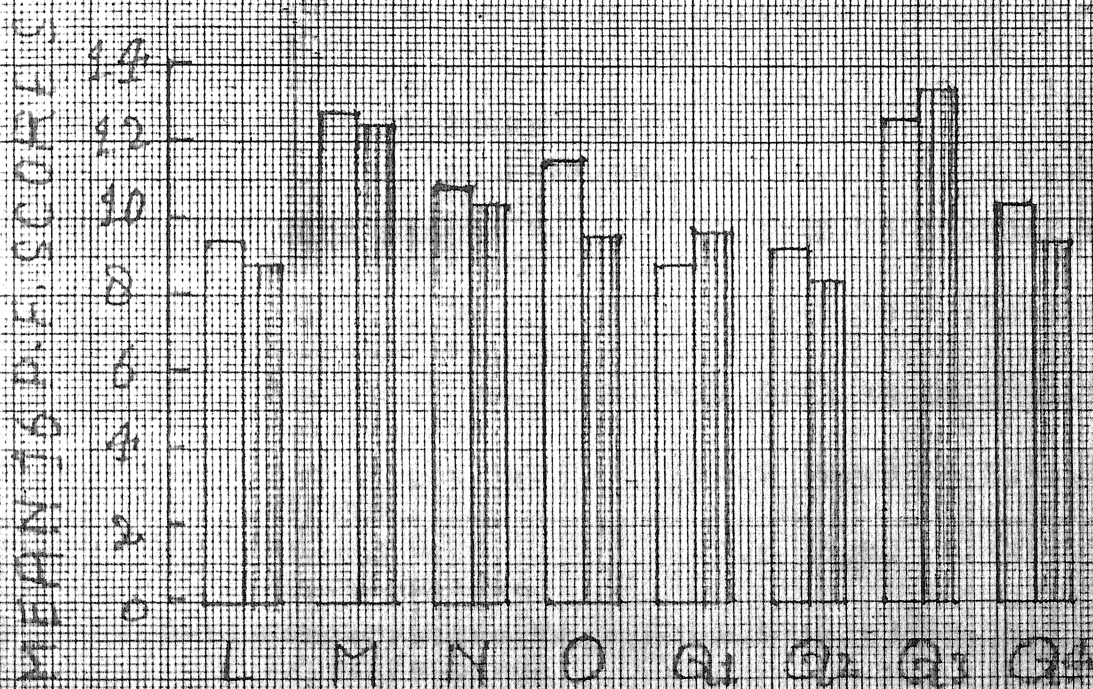
बनाम डामिनेंस) का प्रदर्शन उच्च स्तरीय रहा है । इसका स्टैन्स (7·5) अध्यापक प्रकृति को प्रगट करता है कि कभी मृदु, व्यवहार की आवश्यकता होती है और कभी प्रभावशाली पौरुष की ।

स्टैन्स तालिका नं० 4·7 में ही शोधकर्ता ने छात्रा-अध्यापिकाओं के व्यक्तित्व का विश्लेषण स्टैन्स के द्वारा प्रस्तुत किया है । स्त्रीवर्ग में भी विचलन कम पाया गया है । सामान्यस्तर पर तत्व "ए, सी, ई, जी, एल, एम, ओ, क्यू-1 तथा क्यू-2" आदि रहे हैं । जबकि सामान्य से ऋणात्मक विचलन की परिधि में तत्व "बी, एफ, तथा क्यू-4" आदि रहे हैं । इसी प्रकार से उच्च स्तर विचलन (धनात्मक) की ओर तत्व "एच, आई, एन, और क्यू-3" आदि रहे हैं । क्यू-4 का अर्थ तनाव की निम्न तथा उच्च दशा से सम्बन्धित होता है । तत्व "एफ" का सम्बन्ध व्यक्ति की प्रकृति तथा स्वभाव से होता है तथा तत्व "बी" का सम्बन्ध बौद्धिकता से होता है । ये तीनों ही तत्व मानसिक स्थिति को स्पष्ट करते हैं । इसमें बुद्धि का स्तर, सामयिक तनाव, समायोजन का अभाव, उपयुक्त प्रशिक्षण की व्यवस्था का न होना आदि कारक छात्रा-अध्यापिकाओं के व्यक्तित्व को प्रभावित करते हैं । अध्यापन एक कला है जिसका विकास प्रशिक्षण और स्वयं की प्रतिभा पर निर्भर करता है । इन दोनों का निम्न पर्यावरण वर्गमें अभाव सा पाया जाता है । परिणामस्वरूप शिक्षिका का समर्पित व्यक्तित्व विकसित नहीं हो पाता है ।

निम्न पर्यावरण छात्रा-अध्यापिका वर्ग के रेखाचित्र को देखने से स्पष्ट होता है कि स्पष्ट ऋणात्मक स्थिति सिर्फ क्यू-4 में रही है और सामान्य तथा सामान्य से उच्च स्तर की विशेषतायें प्रगट होती हैं । शिक्षण का मुख्य पहलू अनुशासन स्थापित करना होता है ताकि बच्चों का सही विकास किया जा सके । छात्र वर्ग में यह तत्व (क्यू-3, स्टैन्स) (7·2) के रूप में प्रगट होता है । इस प्रकार कक्षा के बच्चों में अनुशासन स्थापना तभी सम्भव हो सकती है । जब प्रशिक्षण के द्वारा छात्रा-अध्यापिकाओं में यह विशेषता दृढ़ हो । जो प्रस्तुत अध्ययन में उपलब्ध हो रही है ।



PERSONALITY FACTORS



MEAN SCORES OF MALE [L.H.E.]

MEAN SCORES OF FEMALE [L.H.E.]

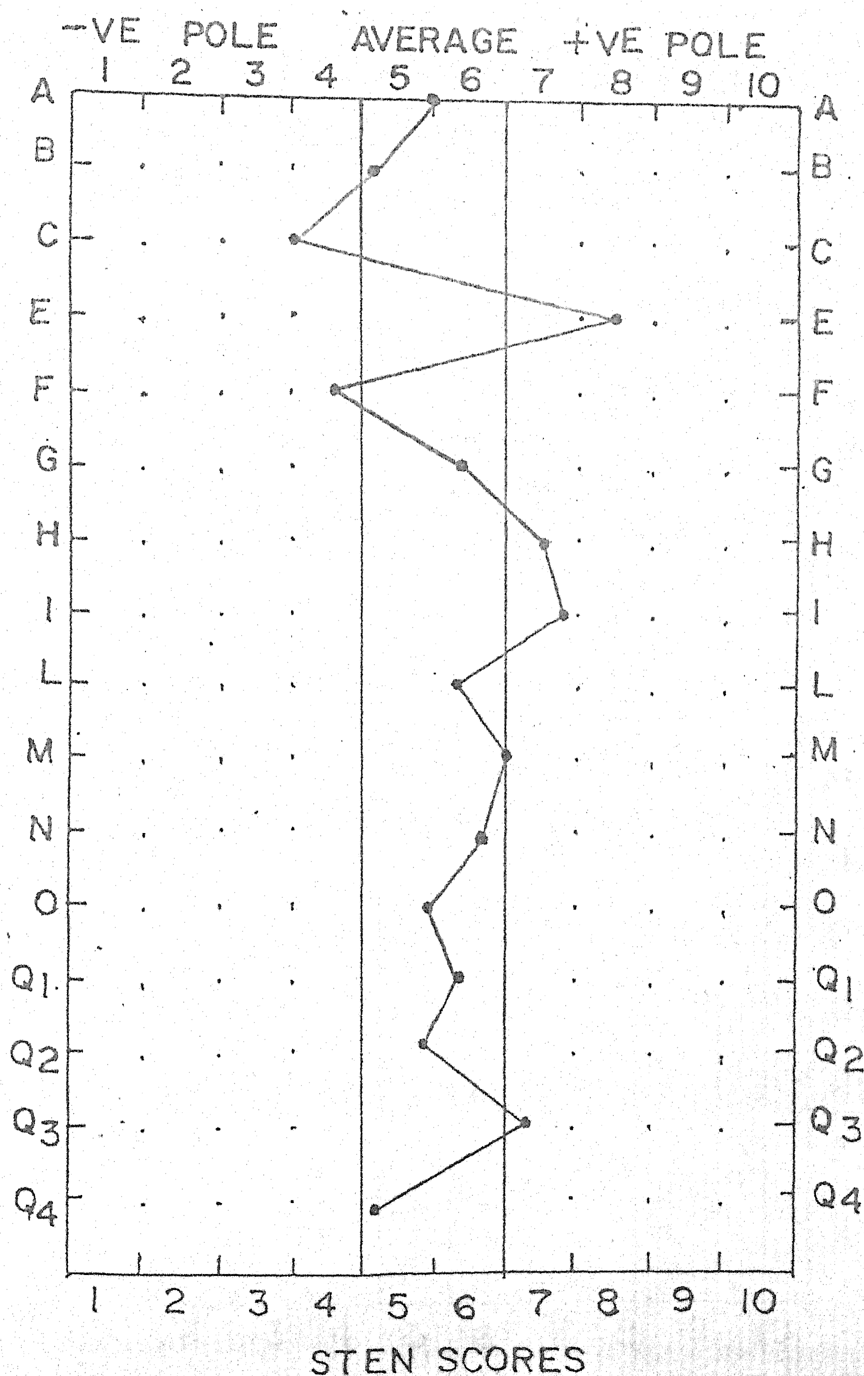
Table : 4.8

Mean Score Differences of Low Home Environment Male and Female Student-Teachers on 16 P.F.

	Factors and their description	Mean Scores Male	Female	C.R.	Interpretation
A	Reserved Vs. Outgoing.	10.5(2.5)	9.6 (3.2)	1.6	n.s.
B	Less intelligent Vs. More Intelligent.	8.1(2.1)	8.0 (1.7)	2.24	0.05
C	Emotionally less stable Vs. Emotionally stable	13.1(3.7)	12.2 (3.9)	1.6	n.s.
E	Humble Vs. Assertive	12.2(3.4)	12.1 (3.7)	1.13	n.s.
F	Sober Vs. Happy go lucky.	12.1(2.8)	11.7 (3.6)	0.43	n.s.
G	Expedient Vs. Conscientious.	12.2(2.7)	12.6 (3.3)	1.5	n.s.
H	Shy Vs. Venturesome.	15.7(4.4)	16.4 (5.5)	0.78	n.s.
I	Tough minded Vs. Tender minded.	11.61(2.7)	11.20(2.8)	0.80	n.s.
L	Trusting Vs. Suspicious.	9.43(2.3)	8.74(3.2)	1.6	n.s.
M	Practical Vs. Imaginative	12.81(3.3)	12.6 (3.95)	2.01	0.05
N	Forthright Vs. Shrewd.	10.9 (2.4)	10.31(3.14)	1.4	n.s.
O	Placid Vs. Apprehensive.	11.5 (3.9)	9.52(4.7)	2.8	0.01
Q-1	Conservative Vs. Experimenting.	8.97(2.6)	9.72(2.5)	1.9	n.s.
Q-2	Group dependent Vs. Self sufficient.	9.3 (2.6)	8.25(2.6)	2.53	0.01
Q-3	Undisciplined Vs. Controlled.	12.74(3.3)	13.40(3.13)	0.85	n.s.
Q-4	Relaxed Vs. Tense.	10.10(3.8)	9.27(4.4)	2.8	0.01

Note: ( ) = S.D. Scores.

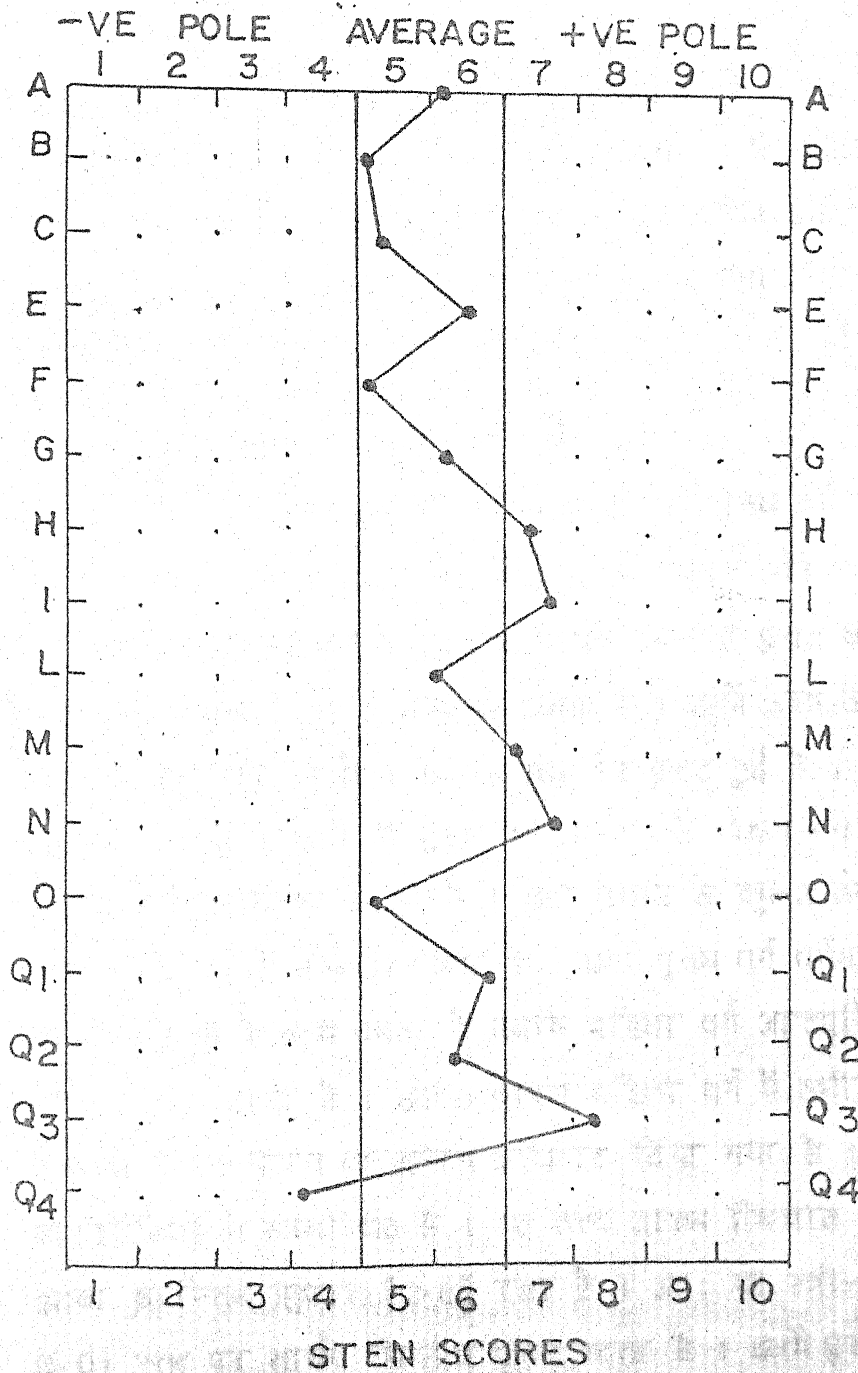
n.s. = Not Significant.



PERSONALITY PROFILES OF LOW

HOME ENVIRONMENT

MALE- CANDIDATES



PERSONALITY PROFILES OF LOW

HOME ENVIRONMENT

FEMALE - CANDIDATES

स्टैन्स के द्वारा दोनों वर्गों का विश्लेषण हो जाने के पश्चात् शोधकर्त्री ने पुरुष तथा स्त्री (छात्र-अध्यापकों) के मध्यमानों के अन्तर की सार्थकता का भी आकलन किया है । तालिका नं0 4.8 के कालम एक में व्यक्तित्व तत्व, कालम दो में पुरुष (छात्र-अध्यापकों) का मध्यमान तथा (प्रामाणिक विचलन), कालम तीन में स्त्री (छात्रा-अध्यापिकाओं) का मध्यमान (प्रामाणिक विचलन), कालम चार में क्रान्तिक अनुपात तथा कालम पाँच में सार्थकता का स्तर वर्णन किया गया है ।

व्यक्तित्व विशेषता तत्व "बी, एम, ओ, क्यू-2, और क्यू-4" आदि में सार्थक भिन्नता प्रगट हुई है । निम्न पर्यावरण पुरुष वर्ग व्यक्तित्व विशेषता तत्व "बी" (क्रान्तिक अनुपात 2.24) में बुद्धि का प्रभाव और व्यवहारिकता प्रगट होते हैं, अपेक्षाकृत महिला वर्ग के (0.05) सार्थक भिन्नता प्रगट करते हैं । तत्व क्यू-4 (रिलेक्स्ड बनाम टैन्स) से सम्बन्ध रखता है । इसमें छात्र/छात्रा-अध्यापकों के मध्यमान भिन्नता की सार्थकता 0.01 स्तर पर प्रगट हुई है । इनका क्रान्तिक अनुपात (2.8) रहा है । इसमें भी पुरुष वर्ग आराम से शिक्षण व्यवसाय को अपनाते हैं और महिला वर्ग तनावग्रस्त रहती है । इसी प्रकार से क्यू-2 तत्व (समूह निर्भरता बनाम आत्मनिर्भरता) से सम्बन्ध रखता है । इसमें पुरुष वर्ग वर्तमान परिस्थितियों में अध्यापक समूह के साथ चलता है जबकि महिला वर्ग आत्मनिर्भरता की ओर अग्रसर होती प्रतीत होती है । इसका कारण महिला वर्ग में सभी (स्त्री-पुरुष) को समानता के साथ जीवन-यापन का समान अधिकार दिया गया है । तत्व "ओ" (प्लेसिड बनाम स्परीहेंसिव) से सम्बन्धित है । यह तत्व आत्म विश्वास से सम्बन्ध रखता है । इसका क्रान्तिक अनुपात (2.8) रहा है । अतः यह स्त्री-पुरुष वर्ग के पर्यावरण में 0.01 स्तर पर सार्थक भिन्नता प्रगट करता है । इसमें पुरुष वर्ग में अधिक आत्म-विश्वास प्रतीत होता है अपेक्षाकृत महिला वर्ग के । इसका कारण महिलाओं का संकोची स्वभाव, असुरक्षा, व्यवहार कुशल न होना तथा तनाव आदि उनमें आत्म विश्वास में कमी पैदा कर देते हैं । तत्व "एम" का सम्बन्ध (यथार्थ बनाम काल्पनिक) विचार व व्यवहार से है । इसमें दोनों वर्गों का क्रान्तिक अनुपात (2.01) रहा है ।

इससे प्रगट होता है कि छात्र-अध्यापक वर्ग तथा छात्रा-अध्यापिका वर्ग के मध्यमान अन्तर की सार्थकता 0.05 स्तर पर प्रगट हुई है । इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि पुरुष वर्ग अधिक यथार्थ तथा व्यवहारिक होते हैं अपेक्षाकृत स्त्री वर्ग के । इसका मुख्य कारण पुरुष वर्ग का घर के बाहर रहकर धन अर्जित करना और परिवार का पालन-पोषण समाज के नियमों के अन्तर्गत करना होता है यानि वह अधिक अनुभव प्राप्त करता है जबकि महिला वर्ग अध्यापिका होने के पश्चात् भी परिवार के घेरे तक ही सीमित रहती है । इसके पास अनुभव नहीं होते हैं । वह विचारों को अनुभव बनाती है जो काल्पनिक होते हैं और व्यवहारिकता से दूर होते हैं । स्त्री जाति आकांक्षाओं से पूर्ण होती है जबकि पुरुष वर्ग साधनहीन आकांक्षाओं को नहीं करता है । अतः दोनों में अन्तर होना स्वाभाविक है ।

उच्च स्तर छात्र/छात्रा-अध्यापक वर्ग तथा निम्न स्तर छात्र/छात्रा-अध्यापक वर्ग की व्यक्तित्व विशेषताओं में समानता तथा अन्तर आया है जो यह प्रगट करता है कि साधन सम्पन्नता, माता-पिता का व्यवहार, सीखने के अवसर और प्रोत्साहन आदि कारक व्यक्तित्व गठन को प्रभावित करते हैं । उच्च स्तर रेखाचित्र तथा निम्न स्तर रेखाचित्र के देखने से स्पष्ट होता है कि निम्न स्तर पर पुरुष वर्ग में व्यक्तित्व तत्व "ए, सी, एम, ओ, और क्यू-4" प्रमुख रहे हैं जबकि स्त्री वर्ग में तत्व "एफ, एच, क्यू-1, और क्यू-2" आदि अधिक पाये गये हैं । इसी प्रकार से उच्च स्तर पर तत्व "ए, सी, एल, क्यू-2 और क्यू-4" पुरुष छात्रों में श्रेष्ठ रहे हैं जबकि महिला छात्रा-अध्यापकों में तत्व "जी, एच, एम, क्यू-1 और क्यू-3" आदि प्रमुख रहे हैं । अतः व्यक्तित्व अध्ययन से स्पष्ट होता है कि कुछ व्यक्तित्व विशेषताओं में पर्यावरण का प्रभाव परिलक्षित होता है और कुछ में वंशानुक्रम का । पर्यावरण व्यक्ति को सुसंस्कृत बनाने में मदद देता है न कि किसी योग्यता के बढ़ाने में । पर्यावरण से व्यक्ति की योग्यता में तीव्रता आती है उसमें अधिकता नहीं आती है । अतः पर्यावरण व्यक्तित्व-पार्श्वदृश्य के लिये आवश्यक प्रतीत होता है ।

शिक्षण कौशल तथ्यों का विश्लेषण :-

शोधकर्ता ने गृह पर्यावरण तथा व्यक्तित्व विशेषताओं के तथ्यों का विश्लेषण करने के पश्चात् शिक्षण कौशल अनुसूची (स्वनिर्मित) के द्वारा उच्च वर्ग तथा निम्न वर्ग प्राप्तांकों का विश्लेषण किया । शोधकर्ता स्वयं प्रत्येक प्रशिक्षण महाविद्यालय गई और प्रत्येक महाविद्यालय से 10 पुरुष तथा 10 स्त्री-छात्र अध्यापकों पर तथ्य संकलन किया । इनका विश्लेषण कुल (50) पुरुष-छात्र-अध्यापकों और (50) स्त्री-छात्रा-अध्यापिकाओं का निम्न रूप में प्रस्तुत है -

तालिका - 4.9

शिक्षण कौशल उच्च वर्ग प्राप्तांकों का मध्यमान, प्रामाणिक विचलन, मध्यमान त्रुटि तथा विचरण गुणक का विवरण :-

शिक्षण कौशल	छात्र अध्यापक वर्ग = 50				छात्रा-अध्यापिका वर्ग = 50			
	मध्यमान	प्रा० वि०	मध्य० त्रुटि	विचरण गु०	मध्यमान	प्रा० वि०	मध्य० त्रुटि	वि० गु०
प्रेरणा कौशल	4.7	1.21	.17	26.30	4.6	1.2	.17	26.0
योजना एवं संचार	4.8	1.14	.16	24.4	4.9	1.1	.15	22.9
शिक्षण कौशल	4.2	1.1	.15	26.1	4.5	1.04	.14	23.1
परीक्षण कौशल	4.5	1.4	.2	31.01	4.3	1.0	.142	23.2
कक्षा प्रबन्ध कौशल	5.5	1.12	.16	20.4	4.95	1.1	.15	22.21

शोधकर्ता ने शिक्षण कौशल अनुसूची के द्वारा उच्च स्तर छात्र/छात्रा-अध्यापकों पर एकत्रित तत्यों का मध्यमान, प्रामाणिक विचलन, मध्यमान त्रुटि तथा विचलन गुणक

आदि सांख्यिकी प्रयोग के द्वारा विश्लेषण तथा व्याख्या की । तालिका 4.9 से स्पष्ट होता है कि पुरुष तथा स्त्री छात्र-अध्यापकों में उच्चतम मध्यमान कक्षा प्रबन्ध कौशल में रहा है । इसी तरह से दोनों समूहों में निम्नतम मध्यमान शिक्षण विधि कौशल में रहा है । इसी प्रकार से दोनों ही वर्गों में तुलना करने पर स्पष्ट होता है कि शिक्षण कौशल के सभी मध्यमान एक ही क्रम में पाये गये हैं । इनका क्रम उच्च से निम्न की ओर कक्षा प्रबन्ध कौशल, योजना कौशल, प्रेरणा कौशल, परीक्षण कौशल तथा अन्त में शिक्षण विधि कौशल रहा है । इस प्रकार से शिक्षण के क्षेत्र में दोनों की एकरूपता प्रगट होती है । अन्तर सिर्फ दोनों वर्गों के स्वभाव के कारण हो सकता है । दोनों वर्गों के विचलन को देखने से स्पष्ट होता है कि पुरुष वर्ग परीक्षा में उच्चतम तथा कक्षा प्रबन्ध में निम्नतम विचलन रहा है । जबकि स्त्री वर्ग में प्रेरणा कौशल (26.0) में उच्च तथा अनुशासन में निम्न वि0ग्0 (22.0) रहा है । दोनों वर्गों में निम्न स्तर पर समानता प्रतीत होती है जबकि उच्च स्तर पर भिन्नता है । इससे स्पष्ट होता है कि छात्र-अध्यापक परीक्षण कौशल में विषयवस्तु को अधिक महत्व देते हैं जबकि छात्रा-अध्यापिका यथार्थ पर बल देती हैं ।

शिक्षण कौशल का विश्लेषण करने से स्पष्ट होता है कि दोनों ही वर्ग समान रूप से कक्षा-शिक्षण पर ध्यान देते हैं । अन्तर सिर्फ परिस्थिति और वातावरण के कारण उत्पन्न होता है । शिक्षण कौशल तालिका से स्पष्ट होता है कि दोनों ही वर्ग शिक्षण-विधि पर कम ध्यान दे रहे हैं क्योंकि आज शिक्षण के क्षेत्र में मनोवैज्ञानिक विधियों का प्रयोग हो रहा है । साथ ही पुरानी विधियों को हम त्याग नहीं पा रहे हैं । शोधकर्ती अध्यापिका होने के नाते स्वयं महसूस करती है कि आज का अध्यापक नवीन तथा प्राचीन विधियों को मिलाकर कार्य कर रहा है अत: जो परिणाम मिलना चाहिए, वे नहीं मिलते हैं । सिखाये गये ज्ञान को जाँचने के लिए परीक्षा का प्रयोग विभिन्न तरीकों से अध्यापक करते हैं । इनके प्रयोग में सबसे अधिक विचलन (31.01) रहा है । इसका कारण शिक्षक पर सामाजिक, शैक्षिक और आर्थिक प्रभाव हो सकते हैं । परिणामस्वरूप वे छात्र/छात्राओं का मूल्यांकन

निश्चित मानकों के अनुसार स्थापित करने में असफल रहे हैं । स्त्री-छात्रा-अध्यापिकाओं का उच्च विचलन प्रेरणा कौशल (26.0) रहा है । इसका कारण नयी शिक्षण विधियों का प्रयोग में लाना है । इससे उन पर मेहनत भी कम आती है और बच्चे स्वयं की बौद्धिक शक्ति का रचनात्मक तथा सृजनात्मक प्रयोग भी करते हैं । इस प्रकार से शिक्षण कार्य शीघ्र याद भी हो जाता है और स्थायी भी होता है ।

शिक्षण कौशल उच्चवर्ग की तरह से ही शोधकर्ती ने निम्नवर्ग के छात्र/छात्रा-अध्यापकों के मध्यमान, प्रामाणिक विचलन, मध्यमान-त्रुटि तथा विचलन गुणक आदि सांख्यिकी के प्रयोग द्वारा तथ्यों का विश्लेषण किया । इसको निम्न तालिका के द्वारा प्रस्तुत किया गया है :-

तालिका सं0 4.10

शिक्षण कौशल निम्नवर्ग प्राप्तांकों का मध्यमान, प्रामाणिक विचलन, मध्यमान त्रुटि तथा विचरण गुणक का विवरण :-

शिक्षण कौशल	छात्र-अध्यापक वर्ग = 50				छात्रा-अध्यापक वर्ग = 50			
	मध्यमान	प्रा0वि0	मध्य0 त्रुटि	वि0गु0	मध्यमान	प्रा0वि0	मध्य0 त्रुटि	वि0गु0
प्रेरणा कौशल	5.4	0.88	.12	16.3	4.9	0.81	.11	17.00
योजना एंव संचार कौशल	5.1	0.9	.13	17.6	5.5	0.82	.117	15.00
शिक्षण विधि कौशल	4.8	1.0	.14	20.8	4.9	0.71	.101	14.00
परीक्षण कौशल	5.2	0.9	.174	17.3	4.8	0.7	.1	14.6
कक्षा-प्रबन्ध कौशल	5.01	0.85	.12	16.9	4.7	0.46	.65	9.7

निम्न वातावरण छात्र/छात्रा-अध्यापक वर्ग की मध्यमान, प्रामाणिक विचलन, मध्यमान त्रुटि तथा विचलन गुणक आदि को देखने से स्पष्ट होता है कि पुरूष वर्ग में प्रेरणा कौशल सबसे उच्च स्थान पर रही है और निम्न स्तर पर शिक्षण विधि कौशल रही है। इसके बावजूद स्त्री वर्ग में योजना कौशल उच्च स्तर पर रही है और निम्न स्तर पर कक्षा प्रबन्ध रहा है। यदि क्रम-बद्धता के अनुसार छात्र-अध्यापक कौशल को प्रस्तुत करें तो प्रथम स्थान पर प्रेरणा, द्वितीय स्तर पर परीक्षा, तृतीय पर योजना, चतुर्थ पर कक्षा प्रबन्ध तथा पंचम स्तर पर शिक्षण विधि आदि कौशल रहे हैं। इसी तरह से छात्रा-अध्यापकों का प्रथम स्तर योजना, द्वितीय - शिक्षण तथा प्रेरणा और चतुर्थ पर कक्षा प्रबन्ध कौशल रहे हैं। इन शिक्षण कौशलों में एक बात स्पष्ट हो रही है कि कक्षा प्रबन्ध कौशल पर दोनों वर्ग एक मत हैं। कक्षा प्रबन्ध को दोनों ही वर्गों ने प्रमुखता दी है। इसका प्रमुख कारण है नव जवानों को अनुशासनमय बनाना ताकि राष्ट्र तथा समाज की प्रगति सामान्य रूप से होती रहे। दोनों वर्गों के विचलन गुणक को देखें तो स्पष्ट होता है कि पुरूष वर्ग में उच्चतम विचलन शिक्षण विधि ﴾20.8﴿ तथा स्त्री वर्ग में प्रेरणा कौशल ﴾17.0﴿ रहा है। इसी प्रकार से वि0गु0 सबसे कम ﴾16.3﴿ पुरूष वर्ग तथा स्त्री वर्ग में कक्षा प्रबन्धन में ﴾9.7﴿ रहा है। सभी कौशलों में विचलन देखने से पता चलता है कि पुरूष वर्ग शिक्षण कौशल में अधिक विचलन स्थापित करता है अपेक्षाकृत स्त्री वर्ग के।

यह मनोवैज्ञानिक रूप से सही प्रतीत होती है कि अनुसूची के प्रशासन में वैयक्तिकता का प्रभाव स्वतः ही आ जाता है। व्यक्ति ﴾स्त्री/पुरूष﴿ स्वंय को मानक पर मूल्यांकित करने में असफल रहता है। पुरूष वर्ग स्वयं की प्रधानता प्रस्तुत करता है जबकि स्त्री वर्ग सामान्य तथा सुरक्षात्मक स्तर को प्रस्तुत करती है। इसमें एक प्रमुख कारण छात्र/छात्रा के स्वभाव में भिन्नता का होना है। कक्षा प्रबन्धन में जो समानता मध्यमान स्तर पर देखने को मिली है, वह पुरूष के लिये प्रयासरत होने से है और स्त्री के लिये स्वतः ही प्राप्त हो जाती है। जब दोनों

का विचलन गुणक विश्लेषित किया गया तो पाया कि दोनों में पुरूष वर्ग का कक्षा प्रबन्धन (16.9) तथा स्त्री वर्ग का (9.7) आया है । जो स्त्री वर्ग की अपेक्षा पुरूषों में अधिक विचलन है । इसका प्रमुख कारण पारिवारिक शिक्षा का प्रभाव मात्र हो सकता है । पुरूष वर्ग परिवार की शिक्षा को मन माफिक परिवर्तित करते हैं जबकि स्त्रीवर्ग परिवार की शिक्षा पर स्थिर रहते हैं । सामान्य से व्यवहार का विचलन बालकों में अच्छा मानाजाता है जबकि छात्राओं के लिये असामान्य (अपमानजनक) माना जाता है ।

प्रेरणा कौशल के स्तर में विचलन देखने से स्पष्ट होता है कि पुरूष वर्ग में सबसे कम स्तर रहा है जबकि स्त्री वर्ग में सबसे उच्च स्तर विचलन रहा है । इससे स्पष्ट होता है कि प्रेरणा कौशल का प्रयोग वैयक्तिक भिन्नता के ऊपर निर्भर करता है । दोनों वर्गों में (16.3 तथा 17.0) के रूप में रहा है । यानि स्त्री वर्ग प्रेरणा के स्त्रोत को इतना महत्व नहीं देती हैं जबकि पुरूष वर्ग इसको सबसे अधिक महत्व देता है । परिणामस्वरूप इस कौशल में सबसे कम विचलन पुरूष वर्ग में रहा है और सबसे अधिक विचलन स्त्री वर्ग में रहा है ।

शोधकर्ता के द्वारा शिक्षण कौशल के विश्लेषित तथ्यों (उच्च पर्यावरण छात्र/छात्रा-अध्यापक तथा निम्न पर्यावरण छात्र/छात्रा-अध्यापक) से स्पष्ट होता है कि स्त्री वर्ग में वस्तुनिष्ठता अधिक पाई गई है अपेक्षाकृत पुरूष वर्ग के । इसका प्रमुख कारण सामाजिक, शिक्षात्मक और राजनैतिक प्रभाव होते हैं जो पुरूष वर्ग को प्रभावित करते हैं जबकि स्त्रीवर्ग इनसे दूर रहती है और तथ्यात्मक मानकों के आधार पर कार्य करती है । भारतीय संस्कारित प्रभाव स्त्रीवर्ग को अधिक प्रभावित करता है, जिससे वे स्वयं का शिक्षण कौशल पूर्ण रूप से प्रभावित पाती हैं । ये प्रभाव समाज की मनोदशा को देखकर क्रियाशील होते हैं, न कि कक्षास्थिति, शिक्षण परिवर्तन या बालक के विकासात्मक पहलू को । शोधकर्ता का अनुभव बतलाता है कि स्त्री वर्ग का शिक्षण कौशल स्त्रियोचित कार्यों के द्वारा निर्धारित होता है जबकि पुरूषवर्ग का आनुभाविक

तौर पर निष्कर्ष के तौर पर कहा जा सकता है कि शिक्षण कौशल में पर्यावरण, यौन, सामाजिक-आर्थिक आदि परिवर्तियों के प्रभाव के कारण विचलन पाया जाना स्वाभाविक है ।

शोधकर्ता ने जब शिक्षण कौशल का विश्लेषण मध्यमान, प्रामाणिक विचलन तथा विचलन गुणक के द्वारा स्पष्ट किया तो महसूस हुआ कि मध्यमान अन्तर की सार्थकता जानना आवश्यक है ताकि उच्चस्तर छात्र-अध्यापक वर्ग तथा छात्रा-अध्यापक वर्ग के बीच मध्यमानों में स्थापित अन्तर वास्तविक अन्तर का परिणाम न हो अपितु संयोग का परिणाम हो । इसको "टी" अनुपात के द्वारा प्रस्तुत किया गया है -

तालिका नं0 4.11

"टी" अनुपात आँकलन के द्वारा उच्च पर्यावरण प्राप्त छात्र/छात्रा-अध्यापक के शिक्षण-कौशल का विवरण :-

शिक्षण कौशल	मध्य0 अन्तर	क्रा0अनु0	अन्तर	"टी" मान	व्याख्या सार्थकता स्तर
प्रेरणा कौशल	0.1	.24	49	.416	असार्थक
योजना एंव संचार कौशल	0.1	.224	49	.45	असार्थक
शिक्षण-विधि कौशल	0.3	.214	49	1.40	असार्थक
परीक्षण कौशल	0.2	.24	49	.83	असार्थक
कक्षा-प्रबन्ध कौशल	0.55	.22	49	2.50	सार्थक .05 स्तर

शिक्षण कौशल तालिका नं0 4.11 से स्पष्ट होता है कि छात्र-अध्यापक और छात्रा-अध्यापिका वर्ग के शिक्षण कौशलों, प्रेरणा कौशल, योजना एंव संचार कौशल शिक्षण विधि कौशल आदि में सार्थक अन्तर नहीं स्पष्ट हुआ है । केवल कक्षा प्रबन्धन कौशल में सार्थक अन्तर स्पष्ट हुआ है ।

अध्यापक के लिये कक्षा का प्रबन्ध करना सिर्फ छात्र अनुशासन से ही सम्बन्ध नहीं रखता है बल्कि कक्षा के सभी पहलुओं में आवश्यकतानुसार अनुशासन होना चाहिए । यदि ये पहलू ठीक होता है तो कक्षा का दैनिक कार्यक्रम सामान्य रूप से चलता है अन्यथा शिक्षण वातावरण सही शिक्षण के लिये उपयुक्तता प्रदान नहीं करता है । दोनों वर्गों में सार्थकता का अन्तर (0.05) स्तर पर प्रगट हुआ है । इससे स्पष्ट होता है कि दोनों वर्गों में कक्षा प्रबन्धन में समानता का भाव होते हुये भी अन्तर होता है । आज बाल केन्द्रित शिक्षा का प्रचलन है और छात्र/छात्रा को दण्ड देने की मनाही है । ऐसी स्थिति में पुरुष का आक्रामक होना और स्त्री का सुधारात्मक कक्षा प्रबन्धन में भिन्नता स्थापित करता है । आज का शिक्षक प्रत्येक बच्चे को मानवीय गुणों से युक्त देखना चाहता है जबकि उसकी पशुतुल्य मूल प्रवृत्तियों के प्रभाव को नजर अन्दाज करता है । शिक्षक प्रशिक्षण की अनिवार्यता एक शिक्षक को "बालक क्या है?" और "उसका विकास कैसे करना है ?" आदि के बारे में सिखाता है । परिणामस्वरूप दोनों वर्गों के शिक्षण कौशल में समानता स्पष्ट हुई है ।

सार्थकता अन्तर (0.05) स्तर स्पष्ट करता है कि कक्षा प्रबन्ध की विधि एक सी होते हुये भी स्त्री-पुरुष की मानसिकता, सोच, स्वभाव और लागू करने की प्रवृत्ति के कारण भिन्नता हो सकती है । शोधकर्ता का अनुभव बतलाता है कि पुरुष छात्र-अध्यापक कक्षा में अनुशासनहीनता को सहन नहीं करते हैं । वे शारीरिक, मानसिक, आर्थिक दण्डों की व्यवस्था करते हैं । शिक्षक-प्रशिक्षण में शारीरिक दण्ड को अमान्य ठहराया गया है, क्योंकि इसका बालक के विकास पर मनोवैज्ञानिक प्रभाव पड़ता है । फिर भी यह दण्ड प्रणाली माध्यमिक स्तर पर लागू है । इसके

विपरीत छात्रा-अध्यापिकाओं की मानसिकता छात्राओं या कक्षा के प्रति अधिक भावात्मक और सहानुभूतिपूर्ण होती है । वे अपनी कक्षा को और बच्चों के घर को एक ही क्रम में देखकर प्रबन्ध सिखलाती है । अतः पुरूषों की अपेक्षा महिला वर्ग बच्चों के साथ अधिक प्यार व सहानुभूति का प्रदर्शन करते पाये जाते हैं । परिणामस्वरूप छात्रायें अपने शिक्षकों को अधिक सम्मान देती हैं और निर्देशों का पालन करती हैं, अपेक्षाकृत छात्र वर्ग के ।

शोधकर्ता ने उच्च स्तरीय छात्र/छात्रा-अध्यापकों की तरह ही निम्न स्तरीय छात्र/छात्रा-अध्यापकों के शिक्षण कौशल के मध्यमानों के अन्तर की सार्थकता का आँकलन किया । इसका वर्णन निम्न तालिका के द्वारा "टी" अनुपात के रूप में प्रस्तुत है :-

तालिका नं० 4.12

"टी" अनुपात आँकलन के द्वारा निम्न पर्यावरण प्राप्त छात्र/छात्रा-अध्यापकों के शिक्षण-कौशल का विवरण :-

शिक्षण कौशल	मध्य० अन्तर	क्रा०अनु०	अन्तर	"टी" मान	व्याख्या सार्थकता स्तर
प्रेरणा कौशल	0.5	0.167	49	2.99	सार्थक .01 स्तर
योजना एंव संचार कौशल	0.4	0.17	49	2.35	सार्थक .05 स्तर
शिक्षण-विधि कौशल	0.1	0.173	49	0.58	असार्थक
परीक्षण कौशल	0.4	0.16	49	2.50	सार्थक .05 स्तर
कक्षा प्रबन्ध कौशल	0.31	0.13	49	2.38	सार्थक .05 स्तर

"निम्न स्तर" पर्यावरण में विकसित छात्र/छात्रा-अध्यापकों के शिक्षण-कौशल की मध्यमान अन्तर तालिका नं0 4.12 से स्पष्ट होता है कि प्रेरणा-कौशल (0.01), योजना एंव संचार कौशल (0.05), परीक्षण कौशल (0.05), तथा कक्षा प्रबन्धन कौशल (0.05) स्तर पर सार्थक भिन्नता स्पष्ट हुई है । इन कौशलों में सिर्फ शिक्षण विधि कौशल में सार्थक भिन्नता स्पष्ट नहीं हुई है जबकि दोनों वर्गों मे मध्यमानों का अन्तर (0.1) रहा है । जबकि प्रेरणा कौशल में मध्यमान अन्तर सबसे अधिक (0.5) रहा है । अतः "टी" अनुपात तालिका से स्पष्ट होता है कि सबसे अधिक "टी" मान प्रेरणा कौशल में, और सबसे कम "टी" मान योजना एंव संचार कौशल में देखने को मिला है । छात्र/छात्राओं को ज्ञान प्राप्ति के प्रति जागरूक बनाना, प्रेरित करना और उत्साह जागृत करना शिक्षण का महत्वपूर्ण पक्ष है । प्रशिक्षण में दोनों ही वर्गों को समान रूप से एक ही कक्षा में समान अध्यापकों के द्वारा शिक्षण दिया जाता है, फिर भी अपनी-अपनी क्षमता, क्रियाशीलता, लगन तथा मानसिक सोच आदि के आधार पर बच्चों को प्रेरित किया जाता है । अतः अन्तर होना स्वाभाविक प्रतीत होता है ।

इसी प्रकार से योजना, परीक्षा, और कक्षा प्रबन्धन में भी एकरूपता सम्भव नहीं हो पायी है । इन सभी में व्यवसायिक रुचि, लगन, समाज को बनाने की ललक आदि की तीव्रता के कारण दोनों वर्गों में भिन्नता स्थापित हो रही है । इसमें स्वभाव, सामाजिक सम्मान का भाव और शिक्षा के प्रति समर्पण आदि भी प्रभाव डालते हैं । अतः शिक्षक की विषयपरकता और वस्तुनिष्ठता आदि दृष्टिकोण भी शिक्षण कौशलों को प्रभावित करते हैं । सिर्फ एक शिक्षण-कौशल में सार्थक भिन्नता स्पष्ट नहीं हो पाई है वह है शिक्षण विधि कौशल (0.58) "टी" मान । इसकी समता का कारण दोनों वर्गों की विषय की प्रस्तुतीकरण तथा तैयारी की भूमिका हो सकती है । प्रशिक्षण के दौरान दोनों ही वर्गों को समान रूप से विषयवस्तु की तैयारी, योजना और प्रस्तुतिकरण के तरीके बताये जाते हैं । अतः प्रत्येक पाठयोजना के स्टैप समान होते हैं जिनका प्रयोग कक्षा में होता है ।

निष्कर्ष के तौर पर कहा जा सकता है कि छात्र-अध्यापक वर्ग का शिक्षण के प्रति निराशावादी दृष्टिकोण होता है और छात्रा-अध्यापक वर्ग का आशावादी दृष्टिकोण । परिणामस्वरूप शिक्षण कौशल में अधिकतर अन्तर दोनों वर्गों में प्राप्त हुआ है । शोधकर्ती के विचार में ऐसी भिन्नता होना स्वाभाविक प्रतीत होती है ।

सहसम्बन्धों का विश्लेषण एवं व्याख्या :-

जब शोधकर्ती को स्वतन्त्र परिवर्ती और परतन्त्र परिवर्ती के मध्य सम्बन्ध जानना होता है तो वह सहसम्बन्ध की गणना करती है । सहसम्बन्ध युग्मित मापों के सह-परिवर्तन ॄकनकोमिटेन्ट वैरियेशनॄ को निर्दिष्ट करता है, वे युग्मित प्राप्तांक ॄपियर्ड स्कोरॄ होते हैं । ये युग्मित प्राप्तांक उन परिवर्तनों का निरूपण करते हैं, जो स्वतन्त्र परिवर्ती के कारण परतन्त्र परिवर्ती में उत्पन्न हो जाते हैं । जितनी बार स्वतन्त्र परिवर्ती के मूल्य में परिवर्तन किया जाता है, उतनी बार ही परतन्त्र परिवर्ती के मूल्य में भी परिवर्तन आता है । इस प्रकार से परिवर्तन शिक्षा क्षेत्र में, मनोवैज्ञानिक क्षेत्र में और अन्य समाज मनोवैज्ञानिक क्षेत्रों में देखने को मिलते हैं । अतः दो परिवर्तियों के बीच सम्बन्ध को जानने के लिये सहसम्बन्ध गुणांक के द्वारा सम्बन्ध की मात्रा को ज्ञात करते हैं । "गिलफोर्ड" ।956ॄ सहसम्बन्ध गुणांक वह अकेली संख्या है जो यह बताती है कि दो वस्तुयें किस सीमा तक एक दूसरे से सहसम्बन्धित हैं, तथा एक के परिवर्तन से दूसरे के परिवर्तनों को किस सीमा तक प्रभावित करते हैं ।

"जब व्यक्ति या वस्तुयें औसत से अधिक या औसत से कम एक दिशा में हों और साथ ही साथ एक दूसरी दिशा में भी औसत, औसत से कम या औसत से अधिक हों तो यह प्रवृत्ति सहसम्बन्ध कहलाती है ।" ॄबिलीमर्स और लिंडक्वेस्ट, ।950ॄ । अतः सहसम्बन्ध गुणँाक का प्रयोग निम्नलिखित दशाओं में होता है :-

।. जब दो या अधिक गुणों, क्षमताओं या विशेषताओं का तुलनात्मक अध्ययन करना होता है, तो सहसम्बन्ध गुणांक की गणना करते हैं ।

2. शैक्षिक मार्गदर्शन में इसका उपयोग है ।

3. सह-सम्बन्ध व्यक्ति को उनके व्यवहार के सम्बन्ध में पूर्वानुमान किया जा सकता है और उनके व्यवसायिक मार्ग दर्शन में सहायक होता है ।

4. परीक्षणों की विश्वसनीयता निश्चित करने में इसकी सहायता ली जाती है ।

5. परीक्षण वैधता में सह-सम्बन्ध गुणांक का महत्त्व है, नव-निर्मित परीक्षण के प्राप्तांकों एंव प्रमाणीकृत परीक्षण के प्राप्तांकों के बीच सह-सम्बन्ध गुणांक देखा जाता है ।

6. तत्त्व विश्लेषण करते समय सहसम्बन्ध मैट्रिक्स बनाना होता है, जिसके लिये सह-सम्बन्ध गुणांक की आवश्यकता होती है ।

प्रस्तुत अध्ययन में शोधकर्ता ने सहसम्बन्धों के द्वारा परिकल्पनाओं का निम्न प्रकार से विश्लेषण प्रस्तुत किया है :-

(अ) उच्च गृह पर्यावरण के प्राप्तांक छात्र/छात्रा-अध्यापकों के शिक्षण कौशल के मध्य ।

(ब) निम्न गृह पर्यावरण के प्राप्तांक छात्र/छात्रा-अध्यापकों के शिक्षण कौशल के मध्य ।

(स) गृह पर्यावरण के प्राप्तांक व्यक्तित्व प्राप्तांक तथा शिक्षण कौशल के मध्य ।

यहाँ पर अध्ययन का उद्देश्य है कि बी०एड० प्रशिक्षणरत छात्र/छात्राओं के शिक्षण कौशल और गृह पर्यावरण सम्बन्धों का अध्ययन करना । इस दृष्टिकोण से उच्च तथा निम्न स्तर वाले छात्र/छात्रा-अध्यापकों के दो वर्गों का उनके शिक्षण कौशल के साथ सम्बन्ध का विश्लेषण करना है, जिसको निम्न तालिका द्वारा प्रगट किया गया है -

तालिका नं0 4.13

गृह-वातावरण के उच्च स्तरीय वर्ग का शिक्षण कौशल के मध्य सहसम्बन्ध गुणांक

क्र0सं0	शिक्षण-कौशल पर्यावरण घटक	प्रेरणा	यो0 एंव सं0	शि0वि0	परी0	कक्षा प्रबंध
1-	नियन्त्रण	0.24	0.13	0.52+	0.32	0.72+
2-	संरक्षण	0.1	0.12	0.02	0.12	0.32
3-	दण्ड	0.2	0.03	0.14	0.33	0.14
4-	निश्चयात्मकता	0.32	0.23	0.04	0.31	0.21
5-	सा0 बहिष्कार	0.62+	0.37	0.42	0.31	0.02
6-	पुरष्कार	0.53+	0.32	0.31	0.40	0.32
7-	सुवि0 वंचित	0.41	0.04	0.02	0.31	0.36
8-	पोषण	0.61+	0.16	0.21	0.04	0.31
9-	तिरस्कार	0.12	0.04	0.14	0.15	0.52+
10-	अनुमति सूच0	0.07	0.32	0.12	0.18	0.23

शोधकर्ता द्वारा उच्च स्तर वाले वातावरण के छात्र/छात्रा-अध्यापकों का शिक्षण कौशल के मध्य सहसम्बन्ध गुणांक ज्ञात किया और पाया कि वातावरण के आयाम "नियन्त्रण" का शिक्षण विधि (.52) और कक्षा प्रबन्ध (.72) के मध्य धनात्मक सहसम्बन्ध पाया गया । इससे यह स्पष्ट होता है कि जिन परिवारों में नियन्त्रित पर्यावरण होता है उनके बच्चों में अनुशासन की प्रवृत्ति उच्च स्तर की पायी जाती है । सामान्य रूप से यह देखने में भी आता है कि उच्च वातावरण में पोषित बच्चे अच्छे प्रशासक और प्रभावशाली व्यक्तित्व वाले बनते हैं । ये लोग सिद्धान्त तथा व्यवहार में कुशल होते हैं । अतः प्रस्तुत अध्ययन में उच्च वातावरण वर्ग के छात्र/छात्रा-अध्यापकों में कक्षा प्रबन्ध तथा नियन्त्रण में धनात्मक सहसम्बन्ध पाया जाना स्वाभाविक प्रतीत होता है । इसके साथ ही उच्च वातावरण घटक

"नियन्त्रण" का शिक्षण विधि कौशल के साथ धनात्मक सहसम्बन्ध पाया गया है । इससे स्पष्ट होता है कि इस वर्ग के छात्र/छात्रा-अध्यापक अपने व्यक्तित्व का प्रभाव कक्षा पर डालकर अनुशासन स्थापित तो करते ही हैं साथ ही शिक्षण कार्य को प्रभावशाली भी बनाते हैं और साथ ही उनकी शिक्षण पद्धति ऐसी शैली में प्रस्फुटित होती है कि कक्षा एकाग्रचित्त होकर ग्रहण करती है । साथ ही मनोवैज्ञानिकों ने ज्ञान प्राप्ति तथा स्थायित्व में ध्यान की एकाग्रता को प्रमुखता दी है, जो अनुशासन की परिणति मात्र होता है ।

गृह-वातावरण के उच्च स्तरीय वर्ग के छात्र/छात्रा-अध्यापकों के "सामाजिक बहिष्कार" घटक और "प्रेरणा कौशल" के मध्य धनात्मक सहसम्बन्ध पाया है । इससे स्पष्ट होता है कि धनात्मक सहसम्बन्ध (.062) इस वर्ग को प्रेरित करते हैं कि अपने व्यवसाय में कुशलता प्राप्त करना आवश्यक है अन्यथा शिक्षक समाज में उपयुक्त सम्मान प्राप्त न हो पायेगा । शिक्षक का बहिष्कार अपने शिक्षक समाज से सम्बन्धित होता है न कि अन्य किसी से । परिवार के वातावरण से बच्चे सीखते हैं । जब बच्चे अपना स्व कार्य परिवार के मानकों के स्तर पर नहीं करते हैं तो उनको पुरस्कार व दण्ड और प्रशंसा व निन्दा में से किसी एक को चुनना होता है । यही वातावरण में व्याप्त सामाजिक बहिष्कार होता है । यह भावना स्थायी होकर यौवनावस्था में शिक्षण व्यवसाय में उपयुक्त प्रशिक्षित अध्यापक बनने की प्रेरणा देती रहती है । परिणामस्वरूप सामाजिक बहिष्कार तथा प्रेरणा कौशल के मध्य धनात्मक सहसम्बन्ध स्थापित हुआ है ।

उच्च स्तरीय वातावरण घटक पुरस्कार का प्रेरणा कौशल के साथ धनात्मक सहसम्बन्ध (0.53) पाया गया है । जो दोनों के प्रभाव को परिलक्षित करता है । परिवार के वातावरण में आर्थिक और मानसिक रूप से पुरस्कार बच्चों को प्राप्त होता है । बच्चों की क्रियाशीलता वृद्धि पुरस्कार भाव से होती है और वे अपने तन, मन और धन से अपने लक्ष्य की पूर्ति में जुट जाते हैं । भारतीय परिवारों में सदैव ही अच्छे कार्यों के लिये पुरस्कार की व्यवस्था रही है । इसके वशीभूत होकर वे कठिन से कठिन कार्यों को भी सरलता से करते हैं । यही भाव वयस्क होने पर उनमें

प्रशंसा के रूप में प्रेरणा देता है । अपने व्यवसाय में प्रशंसा पाने के लिये प्रत्येक छात्र/छात्रा-अध्यापक प्रेरणावश अच्छा शिक्षक बनता है । अतः उसे आत्म सन्तोष होता है, व्यवसाय में सम्मान मिलता है तथा एक अच्छा अध्यापक बनने की सदैव कोशिश करता है । यह सम्मान समाज के द्वारा तभी प्राप्त होता है जब आप उसके निर्धारित मानकों पर खरे उतरते हैं । परिणामस्वरूप, पुरस्कार और प्रेरणा कौशल अन्तः सह-सम्बन्धित पाये गये हैं ।

उच्च स्तरीय वातावरण वर्ग के घटक "पोषण" तथा "प्रेरणा" कौशल के मध्य धनात्मक सहसम्बन्ध (0.61) पाया गया है । इसका तात्पर्य है कि जो माता-पिता अपनी सन्तानों को प्यार, सहानुभूति, सहयोग और शारीरिक तथा मानसिक पोषण सही रूप से देते हैं उनके बच्चे अपने में अतिरिक्त शक्ति महसूस करते हैं । इस शक्ति का वे प्रस्फुरण दैनिक कार्यों के करने में करते हैं । इसी भाव का स्थायित्व कक्षा शिक्षण में संलग्न उच्च स्तरीय वर्ग में देखने को मिला है । इस वर्ग के कक्षा-अध्यापकों में आत्म विश्वास, आत्मसम्मान का भाव स्वतः ही विकसित होता रहता है । यह लोग प्रयत्न और भूल के द्वारा सीखकर अपना विकास करते हैं । थार्नडायक (1930) का मत है कि सीखने की प्रगति भूलों के निरसन और सार्थक विधि का प्रयोग पर निर्भर करती है । इसके साथ ही उच्च वर्ग अनुभव स्थानान्तरण के परिणामों से भी लाभान्वित होता है । (डीज, 1952) । परिणामस्वरूप, पोषण और प्रेरणा के मध्य धनात्मक सहसम्बन्ध पाया गया है ।

वातावरण के उच्च स्तरीय वर्ग के छात्र/छात्रा-अध्यापकों के घटक तिरस्कार और शिक्षण कौशल "कक्षा प्रबन्ध" के मध्य धनात्मक सहसम्बन्ध (0.52) पाया गया है । वातावरण के घटक तिरस्कार से तात्पर्य बच्चों को परिवार के मानकों के आधार पर व्यक्तित्व गठन करना है, न कि स्वयं के आधार पर । इस भाव का स्थायित्व बचपन में ही बच्चों के मस्तिष्क में हो जाता है । यानि शिक्षण के क्षेत्र में बड़ों (अध्यापकों) का कहना मानना ही उचित होगा । अन्यथा तिरस्कार के भाव के शिकार बनेंगे । इस तिरस्कार से उनमें मानसिक तनाव होगा, निराशा होगी, और

मानसिक ग्रन्थियों के शिकार बनेंगे । परिणामस्वरूप उनका शिक्षक व्यक्तित्व असा-मान्यता का शिकार हो सकता है । इसके डर से वे अनुशासन में रहकर जैसा प्रशिक्षक कहते हैं उसको मानना स्वीकार कर लेते हैं । शिक्षण कार्य में दैनिक कार्य, दिनचर्या, व्यक्तित्व, कमियों को दूर करना, आज्ञा पालन आदि कार्य कक्षा प्रबन्ध के ही अंग हैं जिनसे शिक्षण में कुशलता, तन्मयता और प्रगति उत्पन्न होती है । परिणामस्वरूप तिरस्कार घटक और कक्षा-प्रबन्ध कौशल में धनात्मक सहसम्बन्ध प्रगट हुआ है ।

तालिका नं0 4.14

गृह वातावरण के निम्न स्तरीय वर्ग का शिक्षण कौशल के मध्य सहसम्बन्ध गुणांक

क्र0सं0	शिक्षण कौशल	प्रेरणा	यो0 एंव सं0	शि0वि0	परी0	कक्षा प्र0
1-	नियन्त्रण	0.13	0.14	0.61+	0.52+	0.43
2-	संरक्षण	0.48+	0.21	0.23	0.26	0.32
3-	दण्ड	0.8+	0.13	0.14	0.17	0.67+
4-	निश्चयात्मकता	0.3	0.07	0.06	0.03	0.23
5-	सा0बहिष्कार	0.12	0.06	0.04	0.18	0.41
6-	पुरस्कार	0.6+	0.16	0.17	0.27	0.32
7-	सुवि0 बंचित	0.5+	0.24	0.19	0.31	0.42
8-	पोषण	0.72+	0.15	0.32	0.41	0.23
9-	तिरस्कार	0.13	0.24	0.27	0.78+	0.52+
10-	अनुमति सूच0	0.06	0.17	0.21	0.14	0.51+

तालिका नं0 4.14 में गृह वातावरण के निम्न स्तरीय छात्र/छात्रा-अध्यापकों का शिक्षण कौशल के मध्य सहसम्बन्ध गुणांक की व्याख्या की गई है । तालिका से स्पष्ट है कि सबसे अधिक धनात्मक सहसम्बन्ध वातावरण घटक "दण्ड" (0.8) शिक्षण कौशल घटक प्रेरणा के मध्य रहा है और सबसे कम धनात्मक सहसम्बन्ध (0.5)

सुविधा वंचित बनाम प्रेरणा के बीच रहा है । वातावरण घटक नियन्त्रण का शिक्षण विधि तथा परीक्षण कौशल के मध्य धनात्मक सहसम्बन्ध रहा है । इससे स्पष्ट होता है कि जिन परिवारों में नियन्त्रण पाया जाता है उनके वयस्क प्राणी अपने को कक्षा शिक्षण में और छात्रों के मूल्यांकन में भी नियन्त्रण लागू करते हैं । बी0एड0 के छात्र/छात्रा-अध्यापक प्रशिक्षण के दौरान स्वयं को नियन्त्रित मानकर और कक्षा में उपयुक्त विधि का चुनाव करके बच्चों को ज्ञानदेते हैं । ये लोग विषयों के अनुसार विधि का प्रयोग करते हैं । शोधकर्ती स्वयं एक शिक्षिका है । वह व्यवहार में देखती आ रही है कि प्रयोगिकी प्रशिक्षण के दौरान छात्र/छात्रा अनुशासन का प्रयोग नहीं करते हैं बल्कि शीघ्रातिशीघ्र चालीस पाठ्योजनाओं को पढ़ा देना चाहते हैं । नियन्त्रित परिवार के छात्र/छात्रा-अध्यापक नियमबद्ध होकर स्वयं तो क्रियाशील होते ही हैं, साथ ही कक्षा के बच्चों को भी सही ज्ञान प्रदान करते हैं । परिणामस्वरूप गृह वातावरण के घटक नियन्त्रण और शिक्षण-विधि कौशल के मध्य धनात्मक सहसम्बन्ध रहा है ।

इसी के साथ "नियन्त्रण" घटक का सहसम्बन्ध परीक्षण के साथ धनात्मक (0.52) रहा है । इससे स्पष्ट होता है कि जो छात्र/छात्रा-अध्यापक नियंत्रण को जीवन विकास में आवश्यक मानते हैं वे बच्चों के ज्ञान के परीक्षण करने यानि मापन एंव मूल्यांकन में वस्तुनिष्ठता का परिचय देते हैं । वे किसी का पक्षपात या सम्बन्धों का असर कक्षा के परीक्षण पर नहीं आने देते हैं । आज की परीक्षण विधियाँ छोटे-छोटे उत्तर एक उत्तर और अनेक उत्तरों में से सही को छाँटना, आदि रूप से प्रचलित हैं । इनकी प्रकृति वैज्ञानिक होती है और प्रशासन भी सरल होता है । परिणामस्वरूप शिक्षण कौशल "परीक्षा" में "नियंत्रण" घटक का धनात्मक सहसम्बन्ध स्थापित रहा है । इसके साथ ही नियंत्रण घटक का अन्य शिक्षण कौशल-प्रेरणा, योजना एंव संचार, और कक्षा प्रबन्ध के साथ कम सहसम्बन्ध रहा है ।

गृह पर्यावरण के घटक "दण्ड" का प्रेरणा तथा कक्षा प्रबन्ध कौशल के मध्य धनात्मक सहसम्बन्ध रहा है । इसका कारण मनोवैज्ञानिक है कि कोई भी व्यक्ति प्राप्त करना नहीं चाहता है । बी0एड0 प्रशिक्षणरत छात्र/छात्राओं ने परिवार में

दण्ड को पाया है और उसके परिणाम स्वयं को नियंत्रित करना तथा प्रशंसा या पुरस्कार के लिये प्रेरित होना माना है । अधिगम के विभिन्न प्रयोगों में "थार्नडायक" ने पाया कि दण्ड (बिजली का धक्का) लगने से सीखने वाले चूहे सही रास्ते को चुनने में स्वयं को नियंत्रित करते थे और गलत को त्यागने की कोशिश करते थे । यही प्रशिक्षणरत व्यक्तियों के साथ होता है । वे दण्ड से बचने के लिये सही प्रशिक्षण को महत्त्व देते और प्रेरित होते हैं ताकि उनको प्रशंसा मिले, सम्मान मिले और वे एक अच्छे अध्यापक के रूप में विकसित हों । परिणामस्वरूप दण्ड और प्रेरणा कौशल के बीच धनात्मक सहसम्बन्ध रहा है ।

इसी के साथ निम्न पर्यावरण घटक "दण्ड" का धनात्मक सहसम्बन्ध (0.67) शिक्षण कौशल "कक्षा प्रबन्ध" के मध्य भी रहा है । इससे स्पष्ट होता है कि बचपन में माता पिता अपने बच्चों को अनैच्छिक या समाजविरोधी क्रियाओं को न करने के लिये शारीरिक या प्रभावशाली दण्ड देते थे । इस प्रकार से बच्चे दण्ड का सही प्रयोग करना और स्वयं को नियंत्रित करना भी सीख जाते हैं । शिक्षण के क्षेत्र कक्षा प्रबन्ध अध्यापक का महत्वपूर्ण कार्य माना जाता है । आज इसे अनुशासन मानते हैं । कक्षा प्रबन्ध में अध्यापक नियंत्रण, कक्षा की प्रत्येक वस्तु में अनुशासन, शिक्षण नियंत्रण, बच्चों के शारीरिक-मानसिक संतुलन और कक्षा वातावरण, आदि कारक भी सम्मिलित होते हैं । इस प्रकार से कक्षा प्रबन्ध में निपुणता प्राप्त करना एक अध्यापकीय गुण माना जाता है । परिणामस्वरूप दण्ड का भय और अच्छा अध्यापक बनने की इच्छा ने दोनों परिवर्तियों के मध्य धनात्मक सहसम्बन्ध स्थापित होने में सहायता की है । इसके साथ ही वातावरण घटक "दण्ड" का योजना एंव संचार, शिक्षण विधि और परीक्षा, आदि शिक्षण कौशलों के साथ कम सहसम्बन्ध रहा है ।

तालिका नं0 4.14 से स्पष्ट होता है कि निम्न पर्यावरण घटक पुरस्कार और शिक्षण कौशल "प्रेरणा" के मध्य धनात्मक सहसम्बन्ध (0.6) रहा है । इससे स्पष्ट होता है कि परिवार में बच्चों को भौतिक पुरस्कार अच्छे कार्य करने के लिए, ज्ञानात्मक विकास के लिये तथा अच्छी आदतों के निर्माण हेतु दिया जाता था ।

यही भावना छात्र/छात्रा-अध्यापकों में जाग्रत होकर अच्छा शिक्षक बनने के लिये, कक्षा को ज्ञान के प्रेरित करने के लिये, शिक्षा के अच्छे वातावरण के लिये और बच्चों का सर्वांगीण विकास करने, आदि में सहयोग देती रहती है । प्रेरणा कौशल से तात्पर्य बच्चों को ज्ञान, आदत, व्यक्तित्व विकास, आदि के समुचित विकास के लिये तरह-तरह से उत्साहित करते रहना । यही पुरस्कार की प्रेरणा वयस्क बच्चों में प्रशंसा, सम्मान और प्रतिष्ठा के रूप में प्रेरित करती रहती है । परिणामस्वरूप बी0एड0 के छात्र/छात्रा-अध्यापकों को अपने शिक्षण-प्रशिक्षण के द्वारा मौखिक या लिखित जो प्रशंसा मिलती है वह प्रेरणादायिनी बनकर उनके शिक्षक व्यक्तित्व का पूर्ण व समुचित विकास करने में सहायक होती है ।

निम्न स्तरीय गृह वातावरण के घटक "सुविधाओं से वंचित" और शिक्षण-कौशल "प्रेरणा" के मध्य धनात्मक सहसम्बन्ध (0.5) पाया गया है । सुविधाओं से वंचित घटक से तात्पर्य बच्चों को परिवार से मिलने वाले अधिकार-प्यार, सम्मान, और परिस्थितियों आदि से वंचित रखना तथा वे नियंत्रित व्यवहार या क्रियायें कर सकें । इस प्रकार का व्यवहार बच्चों को ये सिखाता है कि यदि हम बड़ों (अध्यापकों) के द्वारा प्राप्त मार्गदर्शन का पालन करते हैं तो हमें सभी सुविधायें व अच्छा प्रशिक्षण प्राप्त होगा । इस प्रकार से नियंत्रण में किया गया व्यवहार अथवा क्रियायें बी0एड0 प्रशिक्षणार्थियों को सदैव उपयुक्त प्रशिक्षण के लिये प्रेरित करती रहती हैं । परिणामस्वरूप प्रेरणा और सुविधाओं से वंचित घटक में धनात्मक सहसम्बन्ध पाया गया है । इसके अतिरिक्त इस घटक का शिक्षण कौशल-योजना एंव संचार, शिक्षण विधि, परीक्षा तथा कक्षा प्रबन्ध आदि के साथ कम सहसम्बन्ध रहा है ।

पर्यावरण घटक "पोषण" और शिक्षण कौशल "प्रेरणा" में भी धनात्मक सहसम्बन्ध पाया गया है । इसका मुख्य कारण माता-पिता का बच्चों के प्रति बिना किसी शर्त के प्यार, वात्सल्य और अपनत्व का भाव का जन्मजात होना है । पोषण से तात्पर्य बच्चों की चाह, ममता से है, और प्रेरणा से तात्पर्य क्रिया के प्रति उत्साहित होना है । बी0एड0 प्रशिक्षणरत छात्र/छात्रा स्वयं को अध्यापकों के भाव

से ओतप्रोत कर लेते हैं और उसी प्रकार से व्यक्तित्व को धारण करना प्रारम्भ कर देते हैं । जैसा कि "सिसरो" ने "परसोना" के अभिप्राय में बताया है कि व्यक्ति एक ऐसे स्वरूप को धारण कर लेता है जिससे वह जो दिखाई देता है, वह होता नहीं है, और जो होता है वह दिखाई नहीं देता है । इस प्रकार से छात्र/छात्रा-अध्यापक अपनी कक्षा के बच्चों को स्वयं की सन्तान के समान मान कर प्यार, वात्सल्य, ममता, आदि देते हैं और उनको ज्ञान, क्रिया तथा भाव के प्रति प्रेरित करते हैं । इसीलिये गुरू और शिष्य के सम्बन्ध को पवित्र तथा सबसे अधिक महत्वपूर्ण माना गया है । गुरू का मार्गदर्शन शारीरिक, मानसिक और आध्यात्मिक तीनों ही प्रकार का पोषण देता है और सामाजिक व राष्ट्रीय उद्देश्यों की पूरा करने की प्रेरणा भी । परिणामस्वरूप पोषण घटक का प्रेरणा शिक्षण कौशल के प्रति धनात्मक सहसम्बन्ध पा जाना स्वाभाविक है । इसके साथ ही योजना एंव संचार, शिक्षण विधि, परीक्षा और कक्षा प्रबन्ध, आदि शिक्षण कौशलों में बहुत कम धनात्मक सहसम्बन्ध स्थापित हुआ है ।

परिवार के वातावरण का निम्न स्तर वर्ग के घटक "तिरस्कार" का परीक्षा (0.78) तथा कक्षा प्रबन्ध (0.52) के साथ धनात्मक सहसम्बन्ध प्राप्त हुआ है । परिवार में तिरस्कार से तात्पर्य बच्चों को सशर्त क्रिया या व्यवहार करने को बाध्य होना पड़े । इसके विपरीत जाने पर उनका विभिन्न प्रकार से तिरस्कार किया जाता है । वे स्वयं के व्यवहार में स्वतन्त्र नहीं रहते हैं, बल्कि परिवार के सदस्यों के ऊपर निर्भर करते रहते हैं । अतः ऐसे बच्चों में निर्भरता की भावना विकसित हो जाती है । प्रस्तुत शोधकार्य में बी0एड0 प्रशिक्षणरत छात्र/छात्रा इस बात को समझ लेते हैं कि निर्देशों का पालन अच्छी तरह से करना है । यदि ऐसा न किया गया तो अच्छे अध्यापक बनने की कामना पूरी नहीं हो पायेगी । तिरस्कार उनमें हीन भावना, कुंठायें, निराशायें, तनाव, ग्रन्थियों, आदि मानसिक बीमारियों को जन्म देता है । इससे, उनके व्यक्तित्व का संतुलन, समायोजन, संगठन, आदि बिगड़ने लगता है और वे असामान्य की ओर प्रस्तुत होने लगते हैं । अतः वे छात्र/छात्रायें जो बचपन में इस परिस्थिति से गुजर चुके हैं, अब उसको दोहराना नहीं चाहते हैं, और शिक्षण में निर्देशों का सही पालन करके परीक्षा में खरे उतरते हैं । साथ ही

अब अध्यापक के रूप में वे ऐसे बच्चों को सामान्य बनने तथा ज्ञान प्राप्ति में सहायता
भी करते हैं। तिरस्कारयुक्त बच्चे एक ऐसी भावना से ग्रसित हो जाते हैं जो उनकी
शक्ति को नकारात्मक कार्योंकी ओर लगाती हैं और वे स्वयं को "मुख्य" बताने के
लिये अनावश्यक कार्य करते हैं ताकि शिक्षकों का ध्यान उन पर जाय। अतः बचपन
के अनुभवों से लाभान्वित होकर स्वयं में सुधार लाना, और परीक्षा में सही सफलता
प्राप्त करना जैसे विचार ही दोनों परिवर्तियों में धनात्मक सम्बन्ध स्थापित कर
सके हैं।

घटक "तिरस्कार" और "कक्षा प्रबन्ध" कौशल के बीच धनात्मक सहसम्बन्ध
(0.51) रहा है। इससे स्पष्ट होता है कि जिन बच्चों को अपने परिवार में
तिरस्कार का सामना करना पड़ा है, वे उसके मूल्य को जानते हैं। निम्न स्तरीय
वातावरण वाले परिवारों में यह हमेशा देखने को मिलता है, क्योंकि वहां पर
शिक्षा, धन, सम्मान, आदि का सदैव अभाव पाया गया है। परिणामस्वरूप व्यक्ति
को कठोर श्रम करके आत्मनिर्भर बनना पड़ता है तो वे बच्चों की आवश्यकताओं को
पूरा कैसे करें। आज का समाज, परिवार और माता-पिता के द्वारा विकसित संस्-
कारों का सजीव प्राणी है जो अनुशासन के द्वारा अपने विकास को प्रगट करता है।
बी0एड0 के छात्र/छात्रा-अध्यापकों ने अपने अनुभव से लाभ उठाकर कक्षा के प्रबन्ध को
मजबूत किया ताकि उनके सुपरवाइज़र उनके कार्य को प्रशंसा की दृष्टि से देखें, न कि
निंदा से। वे समाज के सम्बल बनकर स्वयं का स्थान आदर का बनाना चाहते हैं।
क्योंकि बी0एड0 के चयन में उनको स्वर्णिम मौका मिला है कि वे स्वयं का सम्मान
स्थापित कर सकें। अतः वे अपनी पूरी ताकत लगाकर कक्षा प्रबन्ध को मजबूत करते
हैं और इस प्रकार से स्वयं के हीन भाव को दूर करते हैं। इसके अतिरिक्त इस
परिवर्ती का प्रेरणा, योजना व संचार, शिक्षण विधि, आदि कौशलों के साथ
साधारण सम्बन्ध स्थापित हो सका है। गृह वातावरण के निम्न स्तर वर्ग की
तालिका 4.15 से स्पष्ट होता है कि गृह वातावरण घटक "अनुमति सूचकता और शि
कौशल कक्षा-प्रबन्ध के मध्य धनात्मक सहसम्बन्ध रहा है। इससे साफ जाहिर है कि

जो बच्चे अपने परिवार से आज्ञा लेकर कार्य या व्यवहार करते रहे हैं वे जीवन में भी अनुशासित रहे होंगे । बी0एड0 प्रशिक्षणरत छात्र/छात्रायें इसी अनुमति सूचकता के वशीभूत होकर अपने प्रशिक्षण को पूरा करते हैं । परिणामस्वरूप उनकी कक्षा संतुलित, अनुशासित और स्वयं भी पाबंद रहते हैं । इस कारण उनके शिक्षक उनकी प्रशंसा ही नहीं करते हैं बल्कि शिक्षक के सिद्धान्तों में कक्षा प्रबन्ध को उत्तमता प्रदान करके शिक्षण कुशल बनाते हैं । ये अपने निर्देशकों के प्रत्येक आदेश, संकेत व निर्देश का अनुपालन करके शिक्षक अनुशासन का पालन करते हैं और कक्षा को व्यवस्थित बनाकर अच्छे शिक्षक होने की भूमिका भी अदा करते हैं । अतः परिवर्ती अनुमति सूचकता और कक्षा प्रबन्ध के मध्य धनात्मक सहसम्बन्ध प्रगट हो सका है । साथ ही प्रेरणा, योजना व संचार, शिक्षण विधि, और परीक्षा, आदि कौशलों के साथ कम सहसम्बन्ध स्थापित हुआ है ।

तालिका नं0 4.15 का विश्लेषण और व्याख्या करने से स्पष्ट होता है तथा यह निष्कर्ष निकलता है कि गृह वातावरण के निम्नस्तरीय वर्ग के छात्र/छात्रा-अध्यापकों तथा उनके शिक्षण कौशलों के मध्य धनात्मक सहसम्बन्ध बहुत अधिक घटकों के बीच स्थापित रहा है । वातावरण के 10 घटकों में से सिर्फ तीन घटक संरक्षण, निश्चयात्मकता, और सामाजिक बहिष्कार ऐसे हैं जिनका शिक्षण कौशल के किसी आयाम के साथ धनात्मक सहसम्बन्ध स्थापित नहीं हुआ है । इसका प्रमुख कारण इस वर्ग को सही संरक्षण का न मिलना, व्यवसाय की कोई निश्चयात्मकता का न होना, और स्वयं को बचपन से कमजोर समझना हो सकता है । क्योंकि साधनों का अभाव इन तीन परिवर्तियों (घटकों) के प्रभाव को बच्चों के विकास में अवरुद्धतापूर्ण मानता है । इसमें माता-पिता, के द्वारा प्रदत्त संरक्षण नकारात्मक भूमिका अदा करते हैं और किसी भी प्रकार की निश्चितता प्रगट करने में सफल नहीं हो पपते हैं। सामान्य स्तर को प्राप्त न कर पाने के कारण वे प्रत्येक क्षेत्र में बहिष्कृत से रहते हैं । अतः अध्यापकीय कौशल के विभिन्न आयामों में से किसी भी सफलता को प्राप्त नहीं कर पाये हैं । आज का वैज्ञानिक तथा मनोवैज्ञानिक शिक्षण किसी भी कौशल में योग्यता प्राप्त कर लेना ही पूर्ण एवं सफल शिक्षक बन जाता है, क्योंकि प्रत्येक शिक्षण कौशल एक दूसरे से अंतः सहसम्बन्धित होते हैं और आपसी प्रभाव डालते हैं ।

विभिन्न परिवर्तियों के घटकों के मध्य सहसम्बन्धों का विश्लेषण तथा व्याख्या करने के पश्चात् शोधकर्ती बी०एड० छात्र/छात्रा-प्रशिक्षणकर्ताओं के गृह वातावरण, व्यक्तित्व और शिक्षण कौशल आदि परिवर्तियों के आपस में सहसम्बन्ध गुणांक का विश्लेषण तथा व्याख्या करना आवश्यक समझती है, जिससे सम्पूर्ण परिवर्तियों के सम्बन्ध स्पष्ट हो सकें ।

तालिका नं० 4.15

बी०एड० प्रशिक्षणरत छात्र/छात्राओं के गृह-पर्यावरण, व्यक्तित्व तथा शिक्षण कौशल के मध्य सहसम्बन्ध गुणांक मान -

विभिन्न चर	उच्च स्तर	निम्न स्तर
1. गृह पर्यावरण एंव शिक्षण कौशल	+0.531	+0.512
2. गृह-पर्यावरण एंव व्यक्तित्व विशेषतायें	+0.672	0.251
3. शिक्षण कौशल एंव व्यक्तित्व विशेषतायें	+0.524	0.312

तालिका नं० 4.15 में प्रथम कालम में - परिवर्ती, द्वितीय में उच्च स्तर वर्ग सहसम्बन्ध, और तृतीय कालम में - निम्न स्तर वर्ग सहसम्बन्ध प्रगट किया गया है । गृह पर्यावरण और शिक्षण कौशल के मध्य धनात्मक सहसम्बन्ध पाया गया है । इसमें उच्च स्तर वर्ग में सहसम्बन्ध (0.531) तथा निम्न स्तर वर्ग का सहसम्बन्ध (0.512) पाया गया है । इससे स्पष्ट होता है कि परिवार का वातावरण बच्चों को प्रभावित करता है । वे उससे अपने को ज्ञानवान बनाते हैं और उसके सकारात्मक तत्वों का स्थानान्तरण शिक्षण व्यवसाय में करते हैं । गृह पर्यावरण के घटक नियंत्रण, दण्ड, पुरस्कार, पोषण, अनुमतिसूचकता सीखने के प्रभावशाली कारक माने जाते हैं । (डीज, 1952) । इसके अतिरिक्त संरक्षण, निश्चयात्मकता, तिरस्कार, आदि को

अप्रत्यक्ष कारक माना गया है । इस प्रकार से गृह पर्यावरण के प्रत्येक घटक का सीखने के साथ सम्बन्ध है । इसलिये शिक्षण कौशल पर उच्च तथा निम्न दोनों प्रकार के वर्गों का धनात्मक सहसम्बन्ध स्थापित हुआ है ।

तालिका नं0 4.15 में बी0एड0 प्रशिक्षणरत छात्र/छात्राओं के गृह पर्यावरण तथा व्यक्तित्व विशेषताओं के मध्य सहसम्बन्ध प्रदर्शित किया गया है । इसमें उच्च स्तर वर्ग के गृह पर्यावरण और व्यक्तित्व विशेषताओं के मध्य धनात्मक सहसम्बन्ध {0.672} रहा है । तथा निम्न स्तर वर्ग के मध्य {0.251} सहसम्बन्ध रहा है । इसका अभिप्राय यह है कि व्यक्तित्व गठन में उच्च वातावरण के घटक प्रभावशाली भूमिका अदा करते हैं, जबकि निम्न स्तरीय वातावरण अप्रभावशाली रहता है । व्यक्तित्व के विकास में परिवार की भूमिका अहं होती है । बच्चों के माता-पिता उनको पूर्व स्थापित स्थितियों के अनुकूल व्यवहार सिखाने के लिये तत्पर रहते हैं, ताकि उनका व्यक्तित्व मनोवांछित तरीके का बन सके {हिलगार्ड, 1962} । इसी के साथ-साथ लिंटन {1955} ने व्यक्तित्व विकास निर्धारकों में लिंग, व्यवसाय, सम्मान, परिवार, अनुकूलता, आदि पाँच बातों को मुख्य माना है । इन सभी तथ्यों पर उच्च स्तरीय वातावरण में ध्यान दिया जाता है जबकि निम्न स्तरीय वातावरण में नहीं । परिणामस्वरूप उच्चस्तरीय वर्ग के छात्र/छात्रा-अध्यापकों का व्यक्तित्व विशेषताओं के साथ धनात्मक सहसम्बन्ध रहा है और निम्न स्तर वर्ग का नहीं ।

शिक्षण कौशल और व्यक्तित्व विशेषताओं के मध्य उच्च स्तरीय वर्ग में {0.524} रहा है और निम्न स्तरीय वर्ग में {0.312} रहा है । इससे स्पष्ट होता है कि अध्यापक का व्यक्तित्व शारीरिक मानसिक योग्यताओं का गत्यात्मक संगठन मात्र नहीं होता है, बल्कि उस पर प्रशिक्षण का प्रभाव भी पड़ता है । अत: परिवार के द्वारा विकसित व्यक्तित्व के साथ शिक्षक प्रशिक्षण को मिलाकर अध्यापकीय व्यक्तित्व {बी0एड0 छात्र/छात्रा} तैयार होता है । अत: उच्च स्तर वातावरण

प्रभावशाली व्यक्तित्व के विकास में सहायक होता है, जबकि निम्न स्तर वातावरण साधारण व्यक्तित्व का विकास कर पाता है । व्यक्तित्व की इन्हीं व्यक्तित्व विशेषताओं का प्रगटीकरण बी०एड० के छात्र/छात्रा अपने शिक्षण व्यवसाय में करते हैं। शिक्षण व्यवसाय में बाह्य व्यक्तित्व का प्रथम भाव होता है, बाद में ज्ञानात्मक पक्ष को तैयार प्रशिक्षण के दौरान कर ही लिया जाता है । अतः उच्च वर्ग को सिर्फ शिक्षण कौशलों के प्रयोगों पर ध्यान देना होता है, जबकि निम्न वर्ग को व्यक्तित्व तथा शिक्षण कौशल दोनों पर । परिणामस्वरूप उच्च स्तर वर्ग शिक्षण में अधिक सफलता प्राप्त करता है, अपेक्षाकृत निम्न वर्ग (बी०एड० छात्र/छात्रा वर्ग) के ।

निष्कर्ष के तौर पर स्पष्ट होता है कि परिवार का वातावरण व्यक्तित्व तथा शिक्षण कौशल, आदि परिवर्तियों के साथ सम्बन्ध स्थापित करता है, जो लोग अपने स्थायी अनुभवों का स्थानान्तरण शिक्षण प्रशिक्षण के दौरान कर लेते हैं, लाभान्वित होते हैं, अन्यथा नहीं ।

बिन्दु मापनी का विश्लेषण एंव व्याख्या

गृह पर्यावरण, व्यक्तित्व विशेषताओं और शिक्षण कौशल का विश्लेषण एंव व्याख्या करने के पश्चात् शोधकर्ता के लिये यह आवश्यक हो जाता है कि शिक्षण कौशल का तीन बिन्दु मापनी (थ्री प्वाइन्ट स्केल) पर विश्लेषण एंव व्याख्या की जाये ताकि इनका शिक्षण स्तर स्पष्ट हो सके । अतः शोधकर्ता ने छात्र/छात्रा-अध्यापकों को अच्छा-सामान्य-निम्न (खराब), आदि तीन बिन्दु स्तर पर निम्न प्रकार से प्रदर्शित किया है -

तालिका नं0 4.16

तीन बिन्दु मापनी के आधार पर शिक्षण कौशल की प्रतिशत तालिका

छात्र-अध्यापक (50)				छात्रा-अध्यापिका (50)		
अच्छा	सामान्य	खराब	शिक्षण-कौशल	खराब	सामान्य	अच्छा
65.0	31	4.0	प्रेरणा कौशल	10.2	39.8	50.0
60.0	36.5	3.5	यो0 एंव सं0	2.4	30.0	67.6
27.5	65.0	7.5	शि0 वि0	4.3	63.0	32.7
43.2	50.0	6.8	परीक्षण कौ0	2.1	37.9	60.0
90.0	7.6	2.4	कक्षा प्रबं0	3.4	16.6	80.0

शिक्षण कौशल प्रतिशत तालिका से स्पष्ट होता है कि पुरुष तथा महिला अध्यापन में विशेष अन्तर नहीं है । प्रत्येक शिक्षण कौशल में अच्छा प्रदर्शन (90 प्रतिशत से ऊपर ही रहा है । अतः प्रत्येक शिक्षक/शिक्षिका) 68.00 प्रतिशत सामान्य और 16 प्रतिशत उच्च स्तर) को शिक्षण करना चाहिए । अतः शिक्षण स्तर कुल (84 प्रतिशत) होना चाहिए, जबकि प्रस्तुत अध्ययन में शिक्षण स्तर प्रतिशत 90 प्रतिशत से ऊपर ही रहा है ।

छात्र-अध्यापक और छात्रा-अध्यापिकाओं में प्रतिशत का उच्च स्तर कक्षा प्रबन्धन में क्रमशः (97.6) सामान्य + अच्छा मिलाकर और (96.6), आदि के रूप में रहा है । इससे यह स्पष्ट होता है कि दोनों ही वर्ग शिक्षा के क्षेत्र "अनुशासन" को महत्त्व देते हैं, ताकि जीवन भी अनुशासनमय बन सके । इससे स्पष्ट होता है कि प्रत्येक परिवार अपने बच्चों को अनुशासनमय वातावरण देने की कोशिश करते हैं, ताकि वे बड़े होकर समाज व राष्ट्र को सही दिशा दे सकें । इसी प्रकार से शिक्षण-विधि कौशल का प्रयोग छात्रा-अध्यापिकाओं का अच्छा रहा है अपेक्षाकृत छात्र-अध्यापकों के।

इससे स्पष्ट होता है कि मनोवैज्ञानिक मनोवैज्ञानिक शिक्षण तरीकों (शिक्षण सूत्र, शिक्षण विधि और शिक्षण सिद्धान्त) का प्रयोग छात्रायें अधिक संतुलित तथा उपगिता के आधार पर करती है अपेक्षाकृत छात्र-अध्यापकों के । इसका कारण शिक्षण को एक सृजनात्मक कार्य मानना भी है जिसमें विभिन्न कौशलों का प्रयोग शिक्षक के द्वारा किया जाता है और जिसमें महिला वर्ग सक्षम होता है । उसको अपने पर्यावरण से प्रत्येक कार्य को सुन्दरता के साथ करने को प्रेरणा प्राप्त होती है, जबकि पुरुष वर्ग को ऐसी प्रेरणा नहीं दी जाती है । महिला के प्रत्येक कार्य की सुन्दरता उसको अपने पति के परिवार में समायोजन में भी सहायता करती है । अतः परिवार के सदस्य उसके व्यक्तित्व में विभिन्न कौशलों का समावेश कर देते हैं ।

प्रत्येक शिक्षक या शिक्षिका समाज में विकसित होती है । आज उसके विकास पर शाश्वत मूल्यों का कम प्रभाव पड़ता है और परिवर्तित मूल्यों का अधिक । परिणामस्वरूप वह भौतिक मूल्यों का सहारा लेकर जीवन को विकसित करता है, जबकि उसको मानवीय मूल्यों के द्वारा स्वयं का विकास करना चाहिए । आज बिना तर्क के कोई ज्ञान स्वीकार नहीं होता है, जबकि अध्यापन में तर्क को (शिक्षक/शिक्षिका) स्वयं का अपमान मानता है । परिणामस्वरूप शिक्षण कौशलों के प्रतिमानों में समानता होते हुये भी वैयक्तिक अन्तर स्पष्ट होता है, जो कक्षा-अध्यापक तथा कक्षा-अध्यापिका के पारिवारिक पालन-पोषण, वातावरण, पारिवारिक सुझाव और अनुभवों का परिणाम होते हैं । इस प्रकार से उच्च या निम्न वातावरण वर्ग के शिक्षक/शिक्षिका स्वयं को एक नये व्यक्तित्व में ढालने के लिये तत्पर रहते हैं और शिक्षण कौशलों का प्रयोग करने में सफलता हासिल करना चाहते हैं ।

अध्याय - पंचम

शोध निष्कर्ष एंव सुझाव

1. अध्ययन के निष्कर्ष
2. अध्ययन के विस्तृत निष्कर्ष
3. शिक्षारत व्यक्तियों के लिये सुझाव
4. भविष्य के शोधकर्ताओं के लिये सुझाव

अध्ययन के निष्कर्ष

शोध कार्य की प्रथम परिकल्पना "बी0एड0 प्रशिक्षणरत छात्र/छात्रा-अध्यापकों के गृह वातावरण और उनका व्यक्तित्व विशेषताओं के बीच सार्थक अन्तर नहीं होता है", का परीक्षण किया गया । यह परिकल्पना पूर्ण रूप से स्वीकार हो चुकी है । अन्तर केवल परिवार के सदस्यों के सोच का आज भी है कि लड़के तथा लड़की के विकास में अन्तर मानना । गोफ्डर (1972), झा (1990), प्रतिभा (1983), आदि ने अपने अध्ययनों से स्पष्ट किया है कि व्यक्तित्व विशेषताओं के विकास में यौन भिन्नता के आधार पर अन्तर नहीं होता है ।

व्यक्तित्व विशेषता विश्लेषण तालिका (4.5) तथा (4.7) से दोनों वर्गों (स्त्री-पुरुष) की समानता ही स्पष्ट होती है । दोनों ही वर्गों की 16 विशेषताओं में से - "ए, ई, एम, ओ, और क्यू-1", आदि पाँच विशेषतायें सामान्य स्तर पर रही हैं । अतः छात्र/छात्रा-अध्यापक में "रिजर्व्ड बनाम आउट गोइंग, हम्बल बनाम असर्टिव, प्रेक्टिकल बनाम इमैजिनेटिव, प्लेसिड बनाम ऐप्रिहेंसिव, और कंजरवेटिव बनाम एक्सपेरीमेंटिंग, आदि विशेषतायें समान रूप से पाई गयीं हैं । इससे स्पष्ट होता है कि शिक्षण व्यवसाय में कुछ ऐसी चीजें हैं जिनका ग्रहण करना स्त्री तथा पुरुष दोनों ही वर्गों के अध्यापकों के लिये आवश्यक होता है । एक शिक्षक के लिये गम्भीरता, विनम्रता, व्यवहारिकता, प्रसन्नता, विचारशीलता, और रूढ़िवादी तथा प्रयोगात्मक, आदि गुण आवश्यक बतलाये गये हैं । इनके बिना वह न तो स्व की संतुष्टि कर पाता है और न अपनी कक्षा की । अतः ज्ञान से परिपूर्ण, यथार्थ में विश्वास और नये-नये प्रयोग के द्वारा शिक्षा क्षेत्र में परिवर्तन लाना ही शिक्षक की पहचान होती है । "ब्रे, एस.ई." (1965) ने अपने कार्यों से समर्थन किया है ।

व्यक्तित्व विशेषता में उच्च सकारात्मक विचलन तत्त्व "एच तथा क्यू-3" में स्त्री-पुरुष में समान रूप से स्थापित हुआ है । फिर भी दोनों के स्टैन्स मानकों में अन्तर है । इससे स्पष्ट होता है कि दोनों के जातीय स्वभाव, शारीरिक बनावट, परिवार का प्रभाव, तथा पारिवारिक संस्कार, आदि के प्रभाव का असर व्यक्तित्व गठन पर पड़ा है । हमारे देश में छात्रा वर्ग के स्वतन्त्र व्यवहार को समाजोचित नहीं माना जाता है । अतः वे समूह के साथ क्रियाशील रहती हैं §पाण्डेय-1983§ । स्त्री-अध्यापिका भय, कुंठा और निराशा से पीड़ित रहती है, क्योंकि उसे कक्षा से लड़ना, सहयोगी अध्यापक/अध्यापिकाओं से लड़ना, प्रशासक से लड़ना और फिर समाज से भी लड़ना होता है । कार्य की समानता केकारण उसे सहयोग न मिलकर सहानुभूति मिलती है, जो उसके शिक्षिका अहं तथा सोच को ठेस पहुँचाती है । उनके साहस प्रदर्शन को उच्छृंखलता माना जाता है । इसी तरह के परिणाम "त्रिवेदी §1993§, निगम §1973§, तिवारी §1977§, आदि के अध्ययनों से भी प्राप्त हुये हैं ।

तत्व "बी॰, सी, एफ, जी, और क्यू-4, आदि में दोनों ही वर्गों का ऋणात्मक विचलन रहा है । वे तत्व बौद्धिकता, संवेगात्मकता, चेतनात्मकता, आदि मानसिक स्तरों से सम्बन्धित होते हैं ।शिक्षा के क्षेत्र में बौद्धिक जागरूकता, संवेगात्मक नियंत्रण और स्वचेतना का उत्कर्ष आवश्यक माना गया है §डॉ0 राधाकृष्णन, 1050§ । प्रस्तुत शोध कार्य में ऋणात्मक विचलन वर्तमान की राजनीतिक हस्तक्षेप, छात्र उच्छृंखलता, अध्यापकों में समर्पण का अभाव तथा भौतिकवादी दृष्टिकोण की होड़ आदि के कारण हो सकता है । दोनों वर्ग इसे कौशल के रूप में लेते हैं, लेकिन विद्यालय और कक्षा का वातावरण उनको कौशल दिखाने का मौका ही नहीं देते हैं। अतः उनमें चिड़चिड़ापन, कुंठा, निराशा और अतृप्त आदि मानसिक विकार उत्पन्न होने लगते हैं । शिक्षण में कौशल प्रदर्शन का कार्य "सृजनशीलता" से जुड़ा होता है । शिक्षण कौशल में उत्पन्न अवरोध उनमें ऋणात्मक विचलन उत्पन्न कर देते हैं, इस

प्रकार से स्त्री-पुरूष (छात्र-अध्यापक) बच्चों को जानना, व्यक्तित्व विकास, स्वभाव में संतुलन तथा अचेतन के प्रभाव, आदि से अपने सामान्य स्तर से ऋणात्मक विचलन प्राप्त कर लेते हैं ।

यदि हम व्यक्तित्व विशेषता स्टैन्स तालिका (4.5 तथा 4.7) को देखें तो पाते हैं कि सोलह तत्वों में से बारह तत्वों में समानता स्पष्ट हुई है और चार में भिन्नता । इस प्रकार से शोधकार्य की प्रथम परिकल्पना प्रशिक्षणरत छात्र/छात्रा-अध्यापकों के गृह-पर्यावरण और उनकी विशेषताओं के बीच सार्थक अन्तर नहीं होता है, स्वीकृत एवं सिद्ध होती है । प्रस्तुत अध्ययन की द्वितीय परिकल्पना, "प्रशिक्षण-रत छात्र/छात्रा-अध्यापकों के गृह-पर्यावरण का उनके शिक्षण कौशलों में सार्थक अंतर नहीं रखते हैं", का परीक्षण किया गया । प्रस्तुत परिकल्पना गृह-वातावरण के आयाम-नियंत्रण, दण्ड, पुरस्कार, सुविधाबंधित, पोषण, तिरस्कार, तथा अनुमति सूचकता, आदि सात आयामों के साथ स्वीकृत हुई है । मात्र तीन आयाम ऐसे हैं जिनके साथ धनात्मक सम्बन्ध स्थापित नहीं हो सका है । इससे स्पष्ट होता है कि वर्तमान छात्र/छात्रा-अध्यापकों की पीढ़ी स्वयं को स्वतन्त्र रूप से विकसित होना चाहती है । अतः संरक्षण को वे उतना ही उचित मानते हैं जितना उनके विकास के लिये आवश्यक हो । शिक्षण में सीनियर को सम्मान देना चाहे वह इस योग्य है या नहीं, उपयुक्त प्रतीत नहीं होता है । अतः प्रशिक्षण तथा पुस्तकीय ज्ञान दोनों का तालमेल ही शिक्षण में योग्यता हासिल करवाने में सहायक होता है । इसी के साथ निश्चयात्मकता के साथ भी वातावरण का सम्बन्ध तथा सामाजिक बहिष्कार के साथ सह-सम्बन्ध (0.12 - 0.41) तक रहा है, क्योंकि आज नकारात्मक शिक्षा से मनोविज्ञान ने बच्चों के विकास के लिये उपयुक्त नहीं माना है । इसी प्रकार के निष्कर्ष "राव (1965), गुप्ता (1967), शर्मा (1971), सालू (1979), आदि ने भी अपने शोध-कार्यों से ज्ञात किये हैं ।

सहसम्बन्ध गुणांक तालिका 4.15 से स्पष्ट होता है कि गृहवातावरण घटक-नियंत्रण का शिक्षण कौशल-शिक्षण विधि (0.61) तथा परीक्षण (0.52) के बीच

धनात्मक सम्बन्ध स्थापित रहा है । इसी प्रकार से दण्ड का कक्षा प्रबन्ध (0.67), पुरस्कार का (0.6), प्रेरणा कौशल के साथ, सुविधाबंचित का (.05) प्रेरणा कौशल, पोषण का (0.72), तिरस्कार का (0.78) परीक्षा, कक्षा प्रबन्ध (0.52) के साथ तथा अनुमति सूचकता (0.51) के साथ धनात्मक सम्बन्ध स्थापित रहा है । इससे स्पष्ट होता है कि पर्यावरण के द्वारा प्रदत्त अनुभव वयस्कता में स्थानान्तरित होकर कार्य या व्यवहार को सहयोग देकर लाभ उठाने में सहयोग देते हैं । परिवार का वातावरण बालक के विकास को सुनिश्चित तथा उपयुक्त बनाता है । इसीप्रकार से शिक्षण कौशलों को दिशा देना, सही प्रयोग करना, और शिक्षण-वातावरण को सुनिश्चित करना, आदि ही शिक्षण होता है । परिणामस्वरूप छात्र/छात्रा-अध्यापकों को गृह-वातावरण और शिक्षण कौशलों के बीच सार्थक सम्बन्ध होता है, यह परिकल्पना भी स्वीकृत एंव सिद्ध होती है । इसका समर्थन अग्रवाल (1988), अरोड़ा (1991), आदि ने अपने कार्यों के द्वारा भी की है ।

प्रस्तुत अध्ययन की तृतीय परिकल्पना "प्रशिक्षणरत छात्र/छात्रा-अध्यापकों के व्यक्तित्व विशेषताओं (पार्श्वदृश्य) और शिक्षण कौशल में सार्थक अन्तर नहीं होता है" को परीक्षित किया गया है । शोधकर्ता ने इस सम्बन्ध को जानने के लिये सह-सम्बन्ध गुणांक का प्रयोग किया । इसमें उच्च स्तर वर्ग का सह-सम्बन्ध गुणांक (0.524) रहा है । इससे स्पष्ट होता है कि शिक्षक का प्रभावशाली व्यक्तित्व शिक्षण को प्रभावित करता है । विद्वानों ने शिक्षक के व्यक्तित्व को त्रिआयामी माना है - एक तो वह सामाजिक प्राणी होता है, द्वितीय उसे एक व्यवसायी बनना पड़ता है और तृतीय उसके कंधों पर राष्ट्र निर्माण का बोझ भी होता है । इन तीनों में संतुलन स्थापित करके उसे चलना होता है । यही कारण है कि वह अपने ज्ञानात्मक प्रभाव से स्वयं के व्यक्तित्व को प्रभावशाली बनाता है । परिणामस्वरूप उसके प्रत्येक निर्देश को छात्र/छात्रा सत्य मानकर स्वीकार करते हैं । इसीलिए नेता व्यक्तित्व, खिलाड़ी व्यक्तित्व, प्रशासक व्यक्तित्व के साथ-साथ शिक्षक व्यक्तित्व की गरिमा भी मानी गई है । इसका समर्थन पाण्डेय (1983), झा (1990), त्रिवेदी (1993), आदि शोधकर्ताओं ने अपने अध्ययनों से पुष्टि की है ।

स्टैन्स तालिका नं0 (4.5 तथा 4.7) से स्पष्ट होता है कि व्यक्तित्व विशेषताओं के विकास में स्त्री-पुरुष अध्यापकों में समानता अधिक देखने को मिली है भिन्नता कम । इनमें 16 विशेषताओं में से 12 में समानता स्थापित हुई है और केवल चार में भिन्नता । इसी के साथ तालिका नं0 4.11 से स्पष्ट होता है कि निम्न स्तर वर्ग का सहसम्बन्ध गुणांक (0.312) रहा है, जो धनात्मकता को तो प्रगट करता है लेकिन उच्च वर्ग की अपेक्षा काफी कम है । इसमें व्यक्तित्व विशेषताओं का दोष नहीं है, बल्कि उस परिवार के वातावरण का है जिसमें इन छात्र-अध्यापकों का पालन-पोषण हुआ है । व्यक्तित्व का शारीरिक और मानसिक विकास परिवार की देन होती है । मैकाइवर (1949) तथा गैरेट (1968) का मानना है कि वंशानुक्रम और संस्कार का प्रगटीकरण बच्चों में परिवार की देन होती है । परिणामस्वरूप निम्न स्तर वर्ग के व्यक्तित्व और शिक्षण कौशल के मध्य सहसम्बन्ध गुणांक (0.312) का आना उचित सम्बन्ध घोषित करता है । निम्न स्तर वर्ग असंतुलन, अभाव, जातिवाद, साम्प्रदायवाद, निराशा, आदि से परिपूर्ण पर्यावरण का पर्यायवाची होता है । इसमें विकसित बच्चे स्वयं का व्यक्तित्व किस प्रकार का ढाल पायेंगे, निश्चित नहीं हो सकता है । सरकार की आरक्षण नीति ने उनको एक शिक्षक बनने का मौका दिया है । इनके व्यक्तित्व के साथ धनात्मक सम्बन्ध (0.312) का आया है, यह परिस्थितिवश बहुत ही अच्छा माना जाना चाहिए । शोधकर्ता ने निम्नस्तरीय वर्ग के परिवारों को पास से देखा और मूल्यांकित किया है, और पाया है कि इनके बच्चों के विकास के अवसर बहुत ही कम होते हैं । फिर भी वे शिक्षक-शिक्षिका बनकर समाज में सम्मान चाहते हैं, और इसी भावना के वशीभूत होकर स्वयं के "शिक्षक व्यक्तित्व" का विकास करते हैं । इसका समर्थन जार्ज (1976), सिंह (1976), छाया (1974), गौर (1980), एन्थोनी (1980), आदि प्रभृति विद्वानों ने भी अपने निष्कर्षों से किया है ।

प्रस्तुत अध्ययन की चतुर्थ परिकल्पना "उच्च गृह-वातावरण प्राप्त छात्र/छात्रा अध्यापक अपने व्यक्तित्व लक्षणों में सार्थक अन्तर नहीं रखते हैं", का परीक्षण किया गया । स्टैन्स तालिका 4.6 में शोधकर्ता ने उच्च वर्ग के छात्र/छात्रा अध्यापकों में

"टी" मूल्य को प्रदर्शित किया है । 16 व्यक्तित्व विशेषताओं में से केवल पाँच तत्वों में ही भिन्नता प्रगट हुई । अतः स्पष्ट होता है कि 12 तत्वों के बीच सार्थक संबंध है । यदि यथार्थ रूप से देखा जाय तो प्रतीत होताहै कि तत्व "बी" §बौद्धिकता§, तत्व "एम" §व्यवहारिकता§, तत्व "ओ" §विचारशीलता§, तत्व क्यू-2 §निर्भरता§ और तत्व "क्यू-4" §संवेगात्मावस्था§, आदि विशेषताओं से सम्बन्धित है । ये सभी विशेषतायें एक अध्यापक के लिये परमावश्यक हैं । कारण सिर्फ मौजूदा परिवेश, अध्यापक का स्वभाव, आरक्षण, राजनैतिक दबाव, आदि के कारण स्त्री/पुरुष की विशेषताओं में सार्थक भिन्नता स्पष्ट हुई है । इसका समर्थन "मित्तल" §1990§, त्रिवेदी §1993§, मिश्र §1988§, झा §1990§, आदि के अध्ययनों से भी स्पष्ट होता है ।

सहसम्बन्ध तालिका नं0 4.15 से स्पष्ट होता है कि उच्च स्तर वर्ग के छात्र/छात्रा-अध्यापकों का व्यक्तित्व विशेषताओं के साथ सह-सम्बन्ध गुणांक §0.672§ रहा है । इससे स्पष्ट होता है कि उच्च गृह वातावरण वर्ग के छात्र/छात्राओं का व्यक्तित्व संकलन श्रेष्ठ होता है । इसका सबसे बड़ा कारण निश्चितता होती है । वे स्वयं को आत्मनिर्भर, स्वतंत्र, साधन सम्पन्न और उच्चता के भाव से भरे रहते हैं । उनका प्रदर्शन नियंत्रित, सामयिक, और मानकों के अनुसार होता है । इस निष्कर्ष को "पोल" §1976§, बैकटोल्ड §1978§, जयगोपाल §1974§, आदि विद्वानों ने भी समर्थन किया है । लेकिन जब समग्र छात्र/छात्रा-अध्यापकों का अध्ययन किया जायेगा तो व्यक्तित्व विशेषताओं में भिन्नता आना स्वाभाविक है । शिक्षण कार्य बौद्धिक, कौशलात्मक, और भावात्मक संतुलन, आदि से निर्देशित होता है । परिणामस्वरूप स्त्री-पुरुष अध्यापकों के व्यक्तित्व विकास में सार्थक अन्तर नहीं होता है । अतः यह परिकल्पना भी स्वीकृत एंव सिद्ध होती है ।

प्रस्तुत अध्ययन की पाँचवीं परिकल्पना "निम्न वातावरण प्रशिक्षणरत छात्र/छात्रा-अध्यापकों के व्यक्तित्व लक्षणों में सार्थक अन्तर नहीं होता है" का परीक्षण किया गया । यह परिकल्पना 16 व्यक्तित्व तत्वों में से 12 में अन्तर स्पष्ट नहीं

करती हैं । निम्न स्तरीय वातावरण वर्ग में सामाजिक कुरीतियों और असामाजिक-ताओं ने परिवार को जर्जर, विसंगठित और दुर्बल बना दिया है । ऐसे वर्ग का प्रत्येक व्यक्ति स्वयं को अशांत एंव असुरक्षित अनुभव करता है । यह स्थिति प्रत्येक छात्र/छात्रा-अध्यापक की होती हैजो इस वर्ग का होता है । अतः उनकी सोच, मानसिकता, साधन प्रचुरता और विकास के अवसर सामान्य रूप से समान ही होते हैं । परिणामस्वरूप उनके व्यक्तित्व का विकास भी समानता लिये हुये होता है ।

"टी" अनुपात प्रकट करने वाली स्टैन्स तालिका 4.8 से स्पष्ट होता है कि तत्व "बी" (2.24), तत्व "एम" (2.01), तत्व "ओ" (2.8), तत्व "क्यू-2" (2.53) तथा तत्व "क्यू-4" (2.8) क्रान्तिक अनुपात में पाये गये हैं । यह सभी तत्व स्त्री-पुरुषों के मध्यमानों की अन्तर की सार्थकता प्रकट करते हैं । फिर भी आज का प्रशिक्षण प्राप्त करने वाला छात्र अध्यापक स्वयं को अध्यापक बनना सोच लेता है और वैसा ही विकास करता है । साथ ही कुछ लोग अध्यापक नहीं बनना चाहते हैं, फिर भी बी0एड0 करते हैं तो उनके व्यक्तित्व विकास में वह प्रखरता नहीं आ पाती है । परिणामतः दोनों में भिन्नता आवश्यक हो जाती है । साथ ही वे परिवार जो छात्राओं को शिक्षिका या नौकरी करवाने की मानसिकता का विरोध करते हैं, वे बच्चों को अच्छे अध्यापक बनने के विकास में सहयोग नहीं देते हैं । शोधकर्ता ने अपने अनुभव में पाया कि छात्र/छात्रा-अध्यापक निश्चित वेशभूषा, प्रभाव-कारी शिक्षण विधियों के प्रयोग, पाठ योजना, सहायक सामग्री, आदि महत्वपूर्ण बातों का विरोध करते हैं और कहते हैं कि वर्तमान में किसी भी विद्यालय में ऐसा नहीं होता है तो हम क्यों करें ? यह विरोधाभास उपयुक्त लगता है । लेकिन सही व उपयुक्त प्रणाली के द्वारा विकास करना आवश्यक होता है । अतः दोनों के व्यक्तित्व विकास में एकरसता देखने को मिलती है । पं0 श्रीराम शर्मा (वेदमूर्ति, तपोनिष्ठ) (1986) का विचार था कि सामाजिक वातावरण का उसके सदस्यों पर असाधारण प्रभाव पड़ता है । उत्कृष्ट परिस्थितियों में श्रेष्ठ व्यक्तियों का निर्माण होता है और निकृष्ट परिस्थितियाँ, निकृष्ट व्यक्तित्वों का विकास करती हैं ।

बी0एड0 प्रशिक्षणरत छात्र/छात्राओं के गृह पर्यावरण एंव व्यक्तित्व विशेषताओं के मध्य सहसम्बन्ध गुणांक प्रगट करने वाली तालिका 4.15 से स्पष्ट होता है कि निम्न स्तर वर्ग का सह-सम्बन्ध गुणांक (.251) रहा है । यह धनात्मकता है लेकिन दोनों परिवर्तियों में कम सम्बन्ध स्पष्ट करता है । क्योंकि पूर्ण सह-सम्बन्ध +1.0 होता है और +.7, .8, .9 उच्च धनात्मक तथा +.4, .5, .6 सामान्य धनात्मक तथा +.1, .2, 0.3, आदि निम्न स्तरीय धनात्मक सहसम्बन्ध माना जाता है । अतः स्पष्ट होता है कि दोनों परिवर्तियों में सार्थक अन्तर नहीं पाया जाता है । इसकी पुष्टि "चतुर्वेदी" (1970), "शंब" (1965), दयाल (1983), प्रतिभा (1983), पाण्डेय (1983), आदि ने अपने निष्कर्षों द्वारा भी की है ।

अतः निम्न पर्यावरण बी0एड0 छात्र/छात्रा अध्यापकों के व्यक्तित्व लक्षणों में सार्थक अन्तर नहीं होता है, परिकल्पना भी स्वीकृत एंव सिद्ध होती है ।

प्रस्तुत अध्ययन की छठवीं परिकल्पना उच्च पर्यावरण, प्रशिक्षणरत छात्र/छात्रा-अध्यापकों के शिक्षण-कौशल को प्रभावित नहीं करते हैं, का परीक्षण किया गया । उच्च पर्यावरण तालिका 4.11 जिसमें "टी" अनुपात का आकलन किया गया है, में प्रतीत होता है कि प्रेरणा कौशल, योजना एंव संचार कौशल, शिक्षण विधि कौशल और परीक्षण कौशल में सार्थक भिन्नता नहीं है । लेकिन कक्षा प्रबन्ध कौशल में (.05) स्तर पर सार्थक भिन्नता स्पष्ट हुई है । इसका कारण पुरुषवर्ग का कठोर एंव दण्डात्मक अनुशासन में विश्वास करना मात्र हो सकता है, जबकि महिला अध्यापक सुधारात्मक अनुशासन को लागू करने में विश्वास करती हैं । महिला छात्रा-अध्यापक हमेशा उपयुक्त तथा सौन्दर्यानुभूति भाव तथा विचार का प्रदर्शन करके कक्षा प्रबन्ध करती हैं, जबकि पुरुष छात्र अध्यापक अपनी आक्रामकता, रोषपूर्ण व्यवहार, शारीरिक दण्ड, आदि के द्वारा कक्षा प्रबन्ध में विश्वास करते हैं । अतः यह स्पष्ट हो जाता है कि उच्च वर्ग पर्यावरण में विकसित छात्र/छात्रा-अध्यापक अपने शिक्षण कौशलों को प्रभावित करते हैं ।

यदि हम तालिका 4.13 का अवलोकन करें तो पाते हैं कि उच्च स्तरीय वातावरण वाले छात्र/छात्रा-अध्यापकों का उनके शिक्षण कौशलों के साथ सार्थक संबंध है । इसमें कक्षा प्रबन्ध के साथ (.72), शिक्षण विधि के साथ (0.52), प्रेरणा के साथ (.62), पोषण के साथ (.61), पुरस्कार (.53), सामाजिक बहिष्कार (.62), आदि सामान्य उच्च धनात्मक सहसम्बन्ध प्रगट हुआ है । प्रस्तुत तालिका में धनात्मक सहसम्बन्ध का विस्तार (.02 - .72) तक पाया गया है । अतः स्पष्ट होता है कि उच्च स्तरीय वातावरण बी0एड0 प्रशिक्षणरत छात्र/छात्राओं के शिक्षण व्यवहार में श्रेष्ठता लाने में मदद देता है । इस निष्कर्ष का समर्थन "लेल्सन" (1988), डॉ0 राधाकृष्णन (1950), एन्थोनी (1980), मिश्रा (1982), अग्रवाल (1988), आदि विद्वानों ने अपने शोध कार्यों से स्पष्ट किया है । अतः शोध कार्य की परिकल्पना "उच्च पर्यावरण, प्रशिक्षणरत छात्र/छात्रा-अध्यापकों के शिक्षण कौशल को प्रभावित नहीं करते हैं, अस्वीकृत होती है ।

प्रस्तुत अध्ययन की सातवीं परिकल्पना, "निम्न पर्यावरण, प्रशिक्षणरत छात्र/छात्रा-अध्यापकों के शिक्षण कौशल को प्रभावित नहीं करते हैं, का परीक्षण किया गया । इस परिकल्पना ने मात्र दो वातावरण के घटकों को छोड़कर अन्य आठ घटकों के साथ सम्बन्ध स्थापित किया है । इनमें निश्चयात्मकता और सामाजिक बहिष्कार घटक हैं । अतः सातवीं परिकल्पना अस्वीकृत होती है ।

गृह वातावरण घटकों के साथ, शिक्षण कौशलों का सह-सम्बन्ध गुणांक स्पष्ट करने वाली तालिका (4.15) से स्पष्ट होता है कि "नियंत्रण" घटक का सहसम्बन्ध गुणांक (0.61) शिक्षण विधि कौशल तथा (0.52) परीक्षण कौशल के साथ रहा है । यह स्पष्ट करता है कि जो छात्र/छात्रा-अध्यापक अपने परिवारों में अनुशासन में रहे हैं और अपने व्यक्तित्व का निश्चित मानकों के आधार पर विकास किया है, वे शिक्षण के क्षेत्र में भी कक्षा कार्य को अनुशासनबद्ध रूप में करते हैं । कक्षा शिक्षण में सही विधि का चुनाव तथा छात्र/छात्राओं का मापन एवं मूल्यांकन नियंत्रण में होना चाहिए ताकि ज्ञान की धारण शक्ति स्पष्ट हो सके । गृह पर्यावरण घटक

संरक्षण (0.48) का प्रेरणा कौशल के साथ सहसम्बन्ध गुणांक रहा है । इससे स्पष्ट होता है कि जो बच्चे माता-पिता को अनुकरणीय मानते हैं, उनका विकास अच्छा एंव शीघ्र होता है । इससे उनको सदैव प्रेरणा मिलती रहती है । परिवार उत्कृष्ट कार्यों के लिये पुरस्कार तथा प्रशंसा का प्रयोग प्रेरित करने के लिये करता है । इससे बच्चों की क्रियाशीलता में तीव्रता आती है । इसी का प्रयोग छात्र/छात्रा-अध्यापकों ने अपनी कक्षा के शिक्षण में भी किया है । परिवार उच्च स्तर या निम्न स्तर कैसा भी हो बच्चों को प्रेरित करता ही है । पर्यावरण घटक "दण्ड" का सहसम्बन्ध गुणांक (0.8) प्रेरणा के साथ तथा (0.67) कक्षा प्रबन्ध के साथ रहा है । थार्न डायक (1930) का मत है कि सीखने में दण्ड का सकारात्मक महत्व है । यही दण्ड बच्चों में गलत कार्य न करने की प्रेरणा देता है और उस "अतिरिक्त शक्ति" को वह सही कार्यों के करने में लगा देता है । दण्ड का सम्बन्ध कष्टों या दुःखों से होता है जो हमें भय तथा दुःख देता है । इस प्रकार का स्थायी भाव छात्र/छात्रा-अध्यापकों को प्रेरित भी करता है और कक्षा प्रबन्ध को सही भी बनाता है । इसी प्रकार से पुरस्कार का सहसम्बन्ध (0.6) प्रेरणा कौशल के साथ रहा है । कक्षा शिक्षण के लिये ठीक है, अच्छा है, बहुत अच्छा है, आदि शब्द ही बच्चों को प्रेरणा देते हैं कि वे सही कार्य की ओर प्रेरित हों, ताकि उनका सामान्य विकास हो सके ।

निम्न स्तरीय पर्यावरणीय वर्ग के घटक "सुविधाओं से बंचित" का सह-सम्बन्ध (0.5) प्रेरणा कौशल के साथ रहा है । इससे स्पष्ट होता है कि बच्चों में मेहनत व लगन की वृद्धि इसी का परिणाम होती है । जो छात्र/छात्रा-अध्यापक अपने परिवार से साधनहीनता के शिकार रहे हैं वे अब कक्षा को इसका शिकार नहीं बनने देना चाहते हैं । इसीलिये वे बच्चों के कठिन परिश्रम करने और हमेशा उत्कृष्ट कार्य करने की प्रेरणा देते रहते हैं । इसी के साथ पोषण घटक का सहसम्बन्ध गुणांक (0.72) प्रेरणा कौशल के साथ रहा है । यह स्पष्ट करता है कि जो बच्चे प्यार से, समय से पालित-पोषित किये जाते हैं, वे साधनहीन होने पर भी उच्च इच्छा शक्ति के बल पर उत्कृष्ट कार्य करते हैं । इसी भाव को वे अध्यापक बनने के बाद अपनी कक्षा के पोषण में सकारात्मक रूप देना प्रारम्भ कर देते हैं ।

तालिका संख्या 4.14 के अंतिम दो घटक का भी सहसम्बन्ध शिक्षण कौशल के साथ धनात्मक रहा है । तिरस्कार (0.78) का परीक्षण कौशल के साथ धनात्मक सहसम्बन्ध रहा है । इस प्रकार से छात्र/छात्रा-अध्यापक स्वयं का मूल्यांकन परीक्षा में खरा उतरने के लिये करता है । वह सभी कौशलों का निष्कर्ष शिक्षण के मूल्यांकन में समझता है । इस प्रकार से वे स्वयं का मूल्यांकन कक्षा का मूल्यांकन और छात्रों का मूल्यांकन बड़े मनोयोग से करते हैं । साथ ही कक्षा प्रबन्धन पर भी जोर देते हैं। ज्ञान रूपी धन अनुशासन के द्वारा ही प्राप्त होता है । यही कक्षा अनुशासन धीरे-धीरे जीवन का अनुशासन बनता है और व्यक्ति सफलता की ओर बढ़ता है । गृह वातावरण का दसवां घटक -अनुमति सूचकता" का सहसम्बन्ध गुणांक (0.51) कक्षा प्रबन्ध कौशल के साथ रहा है । यानि जो परिवार बच्चों को बड़ों की आज्ञा पालन करना सिखाते हैं वे अध्यापक प्रशिक्षण में भी निर्देशकों की आज्ञा को महत्व देते हैं । परिणामस्वरूप उनकी कक्षा का प्रबन्ध अनुमति के द्वारा संचालित होता है, छात्र-अध्यापक का महत्व समझते हैं और फिर वह मनोयोग से शिक्षण कार्य करता है ।

उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट होता है कि निम्नस्तरीय गृह-वातावरण के छात्र/छात्रा-अध्यापकों का शिक्षण कौशल के साथ सार्थक सम्बन्ध होता है । इनमें प्रेरणा कौशल के साथ पाँच घटकों का, कक्षा प्रबन्धन का तीन घटकों, परीक्षण का दो घटकों और शिक्षण विधि का एक घटक के साथ सार्थक सम्बन्ध स्थापित हुआ है । इन निष्कर्षों का समर्थन "मैथ्यू (1936), छाया (1974), सर्वानंद (1988), पाण्डे (1982), आदि प्रभृति विद्वानों ने अपने अध्ययन से किया है । अतः यह परिकल्पना पूर्ण रूप से अस्वीकृत होती है, लेकिन निम्न पर्यावरण छात्र/छात्रा-अध्यापकों के शिक्षण कौशल की "टी" अनुपात तालिका 4.12 में शिक्षण कौशलों के साथ सार्थक भिन्नता स्पष्ट हुई है । इसमें प्रेरणा कौशल (0.01), स्तर पर, योजना एंव संचार कौशल (0.05), परीक्षण कौशल (0.05), तथा कक्षा प्रबन्ध कौशल (0.05) स्तर पर सार्थक भिन्नता प्रगट हुई है । वास्तविकता सिर्फ समायोजन स्थापित होने की है । स्त्री तथा पुरूष वर्ग में संवेगात्मक, शारीरिक, बौद्धिक तथा समायोजन सम्बन्धी भिन्नता तो होती ही है । परिणामानुसार इन्हीं का प्रगटीकरण वे अपने

शिक्षण व्यवहार में भी करते हैं । अतः निम्न स्तर वर्ग के वातावरण घटक प्रत्येक छात्र/छात्रा-अध्यापक के शिक्षण को प्रभावित तो करते हैं, लेकिन स्त्री-पुरुष के शिक्षण में स्वाभाविक रूप से भिन्नता पाई जाती है । इस प्रकार से शोध कार्य की सातवीं परिकल्पना भी स्वीकृत एंव सिद्ध होती है ।

प्रस्तुत अध्ययन की आठवीं परिकल्पना, "बी0एड0 प्रशिक्षणरत छात्र/छात्रा-अध्यापकों के गृह-पर्यावरण घटकों के प्रभाव में सार्थक अन्तर नहीं होता है, का परीक्षण किया गया । यह परिकल्पना पूर्णरूप से अस्वीकृत हुई है । इसके गृह पर्यावरण उच्च वर्ग तथा गृह पर्यावरण निम्न वर्ग दोनों के स्त्री-पुरूषों के बीच मध्यमान सार्थक भिन्नता का आँकलन किया गया और पाया गया कि दोनों ही वर्गों में सार्थक भिन्नता स्थापित हुई है । इसी प्रकार के निष्कर्ष अग्रवाल (1988), अंजुम (1985), शर्मा (1984), आदि ने भी अपने अध्ययन से ज्ञात किये हैं ।

परिवार एक छोटा समाज होता है जिसमें व्यक्ति को उसी तरह से जुड़ा रहना पड़ता है जैसा कि शरीर के साथ अन्य अवयव जुड़े रहते हैं । संसार के समस्त सुखों की तुलना में पारिवारिक सौहार्द का महत्व भारी बैठता है । माता-पिता का वात्सल्य, पत्नी का प्यार, भाई-बहनों का सहयोग ही परिवार की आधारशिला मानी जाती है । इनकी प्राप्ति से ही बच्चों में सद्भाव, उदारता, सहृदयता, सहिष्णुता, सहकारिता, आदि मानवीय गुणों का विकास होता है । अतः इन सबका प्राप्त होना परिवार के वातावरण और सोच पर निर्भर करता है । जो परिवार अपने वातावरण को उत्कृष्ट बनाते हैं उनके बच्चों का विकास भी श्रेष्ठ गुणों से युक्त होता है और जिन परिवारों की सोच व साधनहीनता निम्नस्तरीय होती है, उनके बच्चों में निम्नस्तरीय गुणों का विकास स्वतः होता रहता है । परिणामस्वरूप बी0 एड0 की छात्र/छात्रा-अध्यापकों में भी वातावरण के 10 घटकों के प्रभाव में अंतर स्पष्ट रहा है ।

तालिका 4.4 में गृह वातावरण (उच्च तथा निम्न वर्ग) के "टी" मूल्य का आँकलन किया गया है । उच्च स्तर वर्ग में पुरूष वर्ग मध्यमान (266.5), प्रामाणिक विचलन (17.0), मा0 त्रुटि (2.43), तथा स्त्री वर्ग में मध्यमान (267.7), प्रामाणिक विचलन (17.40), मा0 त्रुटि (2.5) रही है और दोनों न्यादर्शों के "टी" मूल्य (4.4) रहे हैं । इससे स्पष्ट होता है कि पर्यावरण के उच्च स्तर वर्ग के स्त्री/पुरूष में .01 स्तर पर सार्थक भिन्नता है । यानि दोनों वर्गों के मध्यमान में प्राप्त अन्तर, वास्तविक अन्तर है । जिससे स्पष्ट होता है कि छात्रा-अध्यापक के और छात्र-अध्यापक के विकास में परिवार वातावरण में अन्तर होता है । इसी प्रकार से निम्न स्तरीय वर्ग का "टी" मूल्य (8.0) प्राप्त हुआ है जो दोनों स्त्री-पुरूष पर पारिवारिक प्रभाव की भिन्नता को स्पष्ट करते हैं । इस बात की पुष्टि "अंजुम आरा (1985), राव (1965), गुप्ता (1967), अरोड़ा (1991), अग्रवाल (1988), आदि ने अपने-अपने अध्ययनों के निष्कर्षों के द्वारा की है ।

प्रस्तुत अध्ययन का क्षेत्र बुन्देलखण्ड माना गया है जो प्रत्येक दृष्टि से पिछड़ा हुआ माना गया है (झाँसी गजट) । इस क्षेत्र में कृषि तथा व्यवसायहीनता है । पीने के पानी का आज भी अभाव है । भौगोलिक दृष्टि से पथरीला है । शिक्षा की दृष्टि से निरक्षरता अधिक है । उच्च वर्ग की प्रबलता के कारण निम्न वर्ग साधन विहीन है । आज भी "जिसका डण्डा उसकी भैंस" वाली कहावत चरितार्थ होती है । एक ओर बुन्देले ठाकुर हैं तो दूसरी ओर यादव हैं जो क्षेत्र के सम्पूर्ण विकास से सहमत नहीं होते हैं । परिणामस्वरूप निम्नवर्ग साधनहीन परिवारों से आता है, अत: स्त्री/पुरूष छात्र-अध्यापकों में अन्तर है तथा उच्च वर्ग की मानसिकता स्त्रियों के बारे में रूढ़िवादी है, जिससे उच्च वर्ग के छात्र-अध्यापक और छात्रा-अध्यापिकाओं में वातावरण का प्रभाव भिन्न रूप से पाया गया है ।

निष्कर्ष के तौर पर यह कहा जा सकता है कि गृह पर्यावरण का प्रभाव बच्चों के विकास पर पड़ता है । जब वे वयस्क होते हैं और व्यवसाय को चुनते हैं

तो प्रशिक्षण के समय सकारात्मक प्रभावों का चयन करके स्थानान्तरण के द्वारा वे अपने को क्रियाशील बनाते हैं । अन्तर सिर्फ परिवार के प्रभावों की ग्राह्यशीलता और अनुकरणीय व्यवहार की है । उच्च वर्ग को परिवार से अनुकरणीय और सकारात्मक प्रभाव अधिक मिलते हैं, अपेक्षाकृत निम्नवर्ग के । उसी परिमाण में वे अपने शिक्षण व्यवसाय में उनका स्थानान्तरित भी करते हैं । परिणामस्वरूप दोनों (स्त्री-पुरुष) वर्गों में भिन्नता (विकासीय) स्पष्ट होती है ।

शोधकर्ता के शोध का मुख्य उद्देश्य गृह पर्यावरण का छात्र/छात्रा-अध्यापकों के शिक्षण कौशलों पर प्रभाव को जानना है । इस हेतु उसने तीन बिन्दु मापनी पर पुरुष तथा स्त्री अध्यापकों के गुणात्मक प्रतिशत को तालिका नं० 4.17 में प्रगट किया है । इनका निष्कर्षात्मक स्वरूप निम्न प्रकार से रहा :-

गुणात्मक स्तर/यौन	अच्छा	सामान्य	खराब
छात्र-अध्यापक	57.14 प्र.श.	38.02 प्र.श.	4.84 प्र.श.
छात्रा-अध्यापक	58.08 " "	37.46 " "	4.46 प्र.श.

उपर्युक्त तालिका से स्पष्ट होता है कि गृह पर्यावरण के प्रभाव के सकारात्मक स्वरूप के कारण छात्र-अध्यापक अपने शिक्षण में अधिक श्रेष्ठ पाये गये हैं । इसका कारण निश्चित नियमों का पालन, निर्देशों का पालन, कक्षा को प्रेरित करना, बच्चों के साथ प्यार एंव सहानुभूति प्रदर्शित करना, आदि तत्व हो सकते हैं । इसके साथ ही साथ शिक्षण कार्य में रुचि लेना तथा मेहनत करना ताकि समाज में अपना सम्मान स्थापित हो सके । इस प्रकार से स्पष्ट होता है कि गृह पर्यावरण, का छात्र/छात्रा-अध्यापकों के शिक्षण कौशलों पर सार्थक प्रभाव पड़ता है, यानि गृह-पर्यावरण प्रत्येक अध्यापक-अध्यापिका के शिक्षण कार्य को समान रूप से प्रभावित करता है । इसका समर्थन "मार्टिन (1975), "लूला" (1974), "देव" (1974), "चक्रवर्ती" (1978), तथा मल्होत्रा (1976), आदि ने अपने निष्कर्षों में किया है ।

अध्ययन के विस्तृत निष्कर्ष :-

शोधकर्ता ने अपने अध्ययन का क्षेत्र बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय के प्रशिक्षण महाविद्यालयों को बनाया है जिनमें बी०एड० प्रशिक्षण नियमित तथा विशेष योजना के तहत प्रचलित है । इन महाविद्यालयों में प्रशिक्षणरत छात्र/छात्रा-अध्यापकों के उच्च स्तरीय (क्यू-3) तथा निम्न स्तरीय (क्यू-1) के आधार पर विभाजित करके व्यक्तित्व विशेषताओं तथा शिक्षण कौशल, आदि परिवर्तियों का अध्ययन किया गया है । इन परिवर्तियों में सार्थक भिन्नता अथवा सम्बन्ध स्थापित नहीं हो सका है, क्योंकि शिक्षा मानव के विकास के लिये अतिआवश्यक मानी जा रही है । शिक्षा का उद्देश्य "व्यक्तित्व का सर्वांगींण विकास" (महात्मा गाँधी, 1937) माना जा रहा है । शिक्षा के द्वारा ज्ञान का सम्बर्धन, स्वावलंबन, स्वाभिमान, संयम और शालीनता, आदि मानवीय गुणों का विकास होगा ।

(1) अतः अध्यापक-प्रशिक्षण को सकारात्मक बनाने के लिये पारिवारिक वातावरण के निम्न घटकों पर ध्यान दिया जाये :-

(अ) परिवार के 10 घटकों में से सिर्फ "ए, बी, एफ, एच, और जे", आदि घटकों पर ध्यान दिया जाय ताकि अध्यापकीय गुणों का विकास ज्ञान के स्थानान्तरण के द्वारा सम्भव हो सके ।

(ब) परिवार के वातावरण से साधनहीनता की विमुखता होनी चाहिए जिससे बच्चों की शिक्षा प्रभावित न हो सके । आज प्रशासन द्वारा कुछ योजनायें चलाई जा रही हैं, लेकिन उनका पर्याप्त लाभ परिवारों को नहीं मिल पा रहा है ।

(स) परिवार के वातावरण से कुरीतियों को दूर होना चाहिए ताकि उनमें वैज्ञानिक दृष्टिकोंण का विकास हो सके और वे लड़का-लड़की में भेद न करके समान परवरिश करें ।

§द§ निरक्षर परिवारों में प्रौढ़ शिक्षा के द्वारा नया दृष्टिकोण एवं नई चेतना जाग्रत करवाई जाय ताकि वे अपने परिवार के वातावरण को सृजनशील बना सकें ।

§य§ परिवार के वातावरण में शाश्वत मूल्यों के साथ-साथ राष्ट्रीय मूल्यों का विकास भी करना चाहिए ताकि वे आपस में भाईचारा, सहयोग, सहकारिता, समानता और सहिष्णुता, आदि मानवीय गुणों को धारण करके राष्ट्र को मजबूत बना सकें ।

§2§ परिवार के वातावरण विभिन्न घटकों के द्वारा छात्र/छात्रा-अध्यापकों के व्यक्तित्व का प्रशिक्षण के द्वारा "अध्यापकीय व्यक्तित्व" में परिमार्जन होता है। अतः व्यक्तित्व विकास के लिये निम्न बातों पर ध्यान देना चाहिए :-

§अ§ शिक्षण के क्षेत्र में बौद्धिक सम्पदा का सबसे अधिक महत्त्व माना गया है । प्रस्तुत शोध निष्कर्ष में दोनों ही वर्गों में इस तत्व ने ऋणात्मक विचलन पाया है, जबकि मस्तिष्क ही एक ऐसा अवयव है जिसमें कोशा विभाजन नहीं होता है । अतः बुद्धि की कमी न होकर सिर्फ एकाग्रता का अभाव माना जा सकता है जो मानसिक शक्ति को शिक्षण में लगाने में असमर्थ है ।

§ब§ शिक्षा देते समय व्यक्तित्व विशेषता तत्व "सी" और "क्यू-3" का काफी महत्व माना जाता है । "सी" तत्व संवेगोंपर नियन्त्रण प्रगट करते हैं और "क्यू-3" अनुशासन स्थापना । अतः एक शिक्षक को प्रशिक्षण के समय इन दोनों व्यक्तित्व §अध्यापक§ विशेषताओं में महारत हासिल करनी चाहिए ।

§स§ अध्यापकीय व्यवहार "शालीन" और व्यवहारिक" होना चाहिए । इसके लिए तत्व "एफ" और "एम" की अधिकता पर ध्यान देना चाहिए ।

§द§ इन सब व्यक्तित्व विशेषताओं के साथ-साथ प्रयोगशील शिक्षक का विशिष्ट गुण माना गया है । अतः तत्व कू-। का विकास प्रशिक्षण के दौरान होना चाहिए । शिक्षण करने के साथ नये-नये प्रयोग विभिन्न क्षात्रों में करते रहना चाहिए ताकि कक्षा की समस्याओं का समाधान होता रहे ।

§3§ वातावरण का अध्ययन बी0एड0 प्रशिक्षणरत छात्र/छात्राओं के ऊपर किया गया है । अतः इस प्रशिक्षण को अधिक प्रभावशाली बनाने के लिये निम्न तथ्यों पर भी ध्यान देना होगा :-

§अ§ सरकार को बी0एड0 प्रशिक्षण को अपने हाथ में लेना चाहिए और समर्पित युवक तथा युवतियों को ही प्रशिक्षण सम्भव हो ।

§ब§ यह कोर्स दो वर्ष का होना चाहिए ताकि इसके प्रत्येक पहलू पर अधिक से अधिक प्रशिक्षण दिया जा सके ।

§स§ बाल-मनोविज्ञान का ज्ञान, नवीन शिक्षण विधियों का ज्ञान और कक्षा प्रबंधन का ज्ञान अच्छी तरह से प्रदान करना चाहिए । इससे अध्यापक कक्षा को अच्छी तरह से पढ़ा सकते हैं ।

§द§ सीखने के स्थानान्तरण का अभ्यास आवश्यक है । ताकि छात्र/छात्रा-अध्यापक अपने परिवार से सीखे हुये सकारात्मक व्यवहार का कक्षा शिक्षण में सहयोग ले सकें ।

§य§ बी0एड0 प्रशिक्षण में नैतिक शिक्षा को अनिवार्य बनाया जाय ताकि परिवार के संस्कारों को वे भुना सकें । साथ ही अपने सम्मान को उचित स्थान दे सकें। इस प्रकार से उनके मन से हीन भाव निकल सकेगा और सम्मानीय भाव स्थापित हो पायेगा ।

§4§ वर्तमान शिक्षा में "अध्यापक-अभिभावक" संघ का प्रचलन हो चुका है । इसमें समय-समय पर बच्चों के माता-पिता विद्यालय आते हैं और बच्चों की

कठिनाइयों यानि शिक्षा से सम्बन्धित विवरण प्रस्तुत करते हैं । इन बैठकों में बच्चों के माता-पिता को, परिवार के वातावरण को समृद्धिशाली, सृजनशील और सकारात्मक बनाने के लिये, शोध के निम्न निष्कर्षों से अवगत कराना चाहिए :-

(अ) परिवार के वातावरण में आत्मनिर्भरता होनी चाहिए । बच्चों को स्वतन्त्रतापूर्वक नये व्यवहारों या क्रियाओं को सीखने के अवसर दिये जायें । इस प्रकार से वे अपनी पहचान परिवार में बनाकर श्रेष्ठ सदस्य बनने की कोशिश करेंगे । उनको प्रयत्न और भूल द्वारा, साहचर्य द्वारा, सूझ द्वारा कैसे नये ज्ञान को सीखा जाता है, बताना चाहिए । इस प्रकार से वे बच्चे स्वयं ही समस्या समाधान को सीख सकेंगे ।

(ब) बच्चों के सीखे गये में से सही और गलत को मूल्यांकन के द्वारा विभाजित किया जाय ताकि बच्चे स्वयं का मूल्य समझ सकें और सतत् प्रयत्न करें ताकि उनकी गलतियाँ स्वत: ही दूर हो सकें । यह मूल्यांकन ज्ञान का और सीखने का ही न हो बल्कि सर्वांगीण विकास का होना चाहिए । यही परिवर्तन स्थायी बनकर व्यवसाय में स्थानान्तरण के द्वारा अनुकरणीय सहयोग देते हैं ।

(स) सीखे गये व्यवहार का मूल्यांकन करने के पश्चात् उसका परिष्करण आवश्यक माना जाता है । इससे व्यक्तित्व विकास में उत्पन्न असामान्यताओं का निरसन होता है और संकलित व्यक्तित्व का उदय होता चला जाता है और यही प्रक्रिया शिक्षक अपनी कक्षा के बच्चों के व्यक्तित्व के संकलन में लागू करता है ।

(द) इसके पश्चात् परिवार तय करता है कि किस बच्चे को क्या बनाया जाय और उसी के अनुसार उसकी शिक्षा या प्रशिक्षण की व्यवस्था भी करता है । अत: बच्चे के भविष्य का निर्धारण सोचना भी परिवार के वातावरण के ऊपर ही निर्भर करती है ।

(5) परिवार शिक्षा का अविधिक साधन होता है । इसी में बच्चों के विकास की नींव पड़ती है । यही उद्देश्य विद्यालय में भी लागू होता है । वहाँ पर बच्चों को केन्द्र मानकर बालकों का सर्वांगीण विकास किया जाता है । अत: शोधकर्ता ने अपने शोध के दौरान बच्चों के विकास के लिये, प्रशिक्षणरत अध्यापकों की निम्न बातों पर ध्यान अवश्य दिया है :-

(अ) राष्ट्रीय चेतना के विकास के सर्वधर्म समभाव के भाव का विकास करना चाहिए ताकि राष्ट्रीय एकता का सम्बर्धन हो सके ।

(ब) विद्यालय का वातावरण सकारात्मक, ज्ञानात्मक तथा शालीन होना चाहिए, जिससे प्रत्येक बच्चा स्वयं को समायोजित कर सके ।

(स) भारतीय सभ्यता एंव संस्कृति का प्रसार हो जिससे हम सभी भारतीय हैं, प्रतीत हो और अनेकता में एकता स्थापित हो सके ।

(द) शिक्षा के क्षेत्र से विभिन्न असमानताओं को हटा देना चाहिए, जिससे योग्यता विकास के अवसर प्रस्फुटित होंगे और छात्र तथा छात्रा का भेद समाप्त होकर आपसी सहयोग में वृद्धि होगी ।

(य) प्रशिक्षण के दौरान अध्यापक की दोहरी भूमिका समाप्त होनी चाहिए । वह केवल अध्यापक है चाहे वह विद्यालय सीमा में हो या समाज की सीमा में ।

(6) कक्षा अध्यापकों की स्टैन्स तालिका से स्पष्ट होता है कि यौन भिन्नता का शिक्षण पर कोई असर नहीं पड़ता है । दोनों में समानता दिखलाई देती है । कुछ तत्वों में अन्तर है जो सामयिक, परिस्थितिजन्य या स्त्री-पुरुष स्वभाव के कारण प्रतीत होते हैं । मनोवैज्ञानिकों की राय है कि छोटी कक्षाओं में स्त्री-अध्यापिकायें ही श्रेष्ठ साबित होती हैं । वे बच्चों के मनोभावों, उनके अनुशासन, क्रियाओं, आदि से परिवार से ही परिचित होती हैं । अत: शिक्षक-प्रशिक्षण में दोनों योनियों को समान स्तर पर मूल्यांकित किया जाय ।

§7§ बी0एड0 प्रशिक्षणरत छात्र/छात्राओं को कुसमायोजित बच्चों को सामान्य बनाने केलिये भी प्रशिक्षण देना आवश्यक है । कक्षा में कोई भी बच्चा समस्यात्मक हो सकता है, उसको सामान्य बनाना आवश्यक होता है, ताकि उसका सामान्य विकास हो सके । इसी प्रकार से बाल अपराध, पिछड़ा बालक, प्रतिभाशाली बालक और विकलांग बालकों को उचित शिक्षा देकर उनके व्यक्तित्व का सामान्य विकास करना शिक्षक का ही कर्तव्य होता है ।

शिक्षारत व्यक्तियों के लिये सुझाव

प्रस्तुत अध्ययन शिक्षा के विभिन्न क्षेत्रों से जुड़े नीति निर्धारक, प्रशासक, शिक्षक, माता-पिता, आदि के लिये भी लाभदायक हो सकता है । इसका उपयोग प्रशिक्षण §शिक्षा§ देने वाले महाविद्यालयों, शिक्षकों और प्रशिक्षण योजना बनाने वाले व्यक्तियों के लिये भी उपयोगी हो सकता है । अतः शोधकर्ती अपने शोध के निष्कर्षो के आधार पर कुछ सुझाव प्रस्तुत करती है :-

1- शिक्षा के क्षेत्र में होने वाले प्रयोगों से प्रत्येक देश लाभ उठाता है । हमें यह लाभ अपनी सभ्यता एंव संस्कृति तथा मूल्यों को केन्द्र मानकर उठाना चाहिए, ताकि भारतीय नागरिक का विकास हो सके ।

2- अध्यापक प्रशिक्षण में बालक को समझना, प्रेरित करना, विषय विधि, राष्ट्रीय उद्देश्यों की पूर्ति, पाठ्यचर्या तैयार करना, छात्रों का सर्वांगीण विकास करना, आदि क्षेत्रों में छात्र/छात्रा-अध्यापिकाओं को कुशल बनाना चाहिए ।

3- बच्चों का विकास प्रतियोगी भाव से होता है । उनमें कुछ कर गुजरने की भावना का प्रगटीकरण होना चाहिए । इस हेतु आपसी सहयोग, प्रतियोगिता और समानता, आदि का विकास होना चाहिए, ताकि वे एक दूसरे से "जलन" न कर सकें ।

4- शोध में पाया गया कि जो बच्चे गृह-वातावरण के घटक "नियन्त्रण" में विकसित हुये हैं उनका प्रभाव शिक्षण कौशल "कक्षा प्रबन्ध" पर सकारात्मक

रहा है । इससे स्पष्ट होता है कि अनुशासन के द्वारा बालक के स्वाभाविक विकास में अवरुद्धता नहीं आती है बल्कि उसको एक निश्चित रूप विकास के लिए मिलता है । अतः शिक्षण के प्रशिक्षण में बाह्य तथा आन्तरिक दोनों ही प्रकार के अनुशासन को महत्व मिलना चाहिए ।

5- आज शिक्षक-प्रशिक्षण को व्यवसाय के साथ जोड़ दिया गया है । इससे "जॉब ओरिएन्टेड" भाव की वृद्धि हुई है । इस हेतु सिद्धान्त और व्यवहार में समायोजन स्थापित करना आवश्यक है ताकि शिक्षण प्रभावशाली बन सके । इस प्रकार से यह परिमार्जित स्वरूप समाज की वर्तमान आवश्यकताओं को पूरा करने में समर्थ होगा ।

6- अध्यापक के लिये ज्ञान की गहराई, और ज्ञान की विधि यानि शैली दोनों का होना अतिआवश्यक माना गया है । वर्तमान की प्रवेश परीक्षा में ज्ञान के विस्तृत आयामों का मूल्यांकन हो जाता है लेकिन शैली का मूल्यांकन नहीं किया जाता है । अतः विद्वान व्यक्ति भी उत्तम शिक्षक नहीं बन सकता है । इसलिए प्रवेश परीक्षा के पश्चात् मौखिक परीक्षा भी होनी चाहिए ।

7- शिक्षा की चुनौती में शिक्षक प्रशिक्षण कार्यक्रम के संगठन को उपयुक्त नहीं माना गया है । इससे प्रशिक्षणरतों में जिज्ञासा पहल, वैज्ञानिक दृष्टिकोण, शारीरिक दक्षता, वैचारिक स्पष्टता और भाषाई कौशल, आदि का विकास समुचित नहीं हो पा रहा है । परिणामस्वरूप शिक्षक प्रशिक्षण कार्यक्रम का पुनर्गठन होना चाहिए ।

8- प्रशिक्षण के दौरान जिन विधियों और सिद्धान्तों का ज्ञान दिया जाता है, उनका व्यवहार में किसी भी विद्यालय में पालन नहीं होता है । अतः नये शिक्षकों की मनोवृत्ति न सीखने की बनती है और वे एक क्षणिक जोश दिखा करके उसे हमेशा के लिये त्याग देते हैं । अतः प्रशासकों को चाहिए कि वे

शिक्षकों से मनोवैज्ञानिक प्रविधियों को कक्षा शिक्षण में लागू करने की अनि-
वार्यता को घोषित करें ।

9- आज शिक्षक-प्रशिक्षण में गुणवत्ता का अभाव है और प्रशिक्षित अध्यापकों की भरमार है । इससे राष्ट्रीय चरित्र का हनन होता है । इसको बचाने के लिये"उपयुक्त प्रशिक्षित अध्यापक"का चुनाव होना चाहिए । वैदिक शिक्षा पद्धति में उपयुक्त गुरू के संरक्षण में गुरुकुल चला करते थे और राष्ट्रीय चरित्र का विकास निरन्तर होता रहा । आज भी इसी परम्परा की, अनुशासन की, श्रेष्ठ मूल्यों की स्थापना की आवश्यकता प्रतीत होती है ।

10- प्रत्येक प्रशिक्षण महाविद्यालय में साधन सम्पन्नता होनी चाहिए ताकि प्रशिक्षण-रत छात्र/छात्रायें लाभान्वित हो सकें । इसके लिये पुस्तकालय तथा वाचनालय, विज्ञान प्रयोगशाला, मनोविज्ञान कक्ष, भूगोल कक्ष, इतिहास कक्ष, गृह विज्ञान कक्ष, और डार्क रूम, आदि को आवश्यक माना गया है । इस प्रकार से प्रशिक्षणरत लोग नई तकनीक अपने अनुसार सीख सकेंगे ।

11- आज प्रशिक्षण में सामुदायिक क्रिया कलापों में खेल-कूद, सांस्कृतिक कार्यक्रम, कला एंव संगीत, तथा शैक्षिक सर्वेक्षण, प्रौढ़-साक्षरता, स्वास्थ्य एंव सफाई शिक्षा, बालक पोषण, पापुलेशन शिक्षा, आदि को लागू किया गया है । इनका उद्देश्य आयोजन के तरीकों से परिचित कराना माना है । जबकि इन कार्यक्रमों का प्रशिक्षण छात्र/छात्रा-अध्यापकों को सही ढंग से मिलना चाहिए जिससे वे अपने भविष्य के व्यवसाय में इससे लाभान्वित हो सकें ।

12- प्रशिक्षण का वातावरण समृद्धशाली होना चाहिए । इसमें गुरू तथा शिष्य मिल-कर अध्यापक व्यक्तित्व का विकास कर सकें । यह विकास रचनात्मक, शांत तथा अध्यापकीय भाव से ओतप्रोत होना चाहिए । इसमें प्रेक्टिकल ज्ञान अधिक दिया जाय जिससे वे शिक्षा की समस्याओं का सामना कर सकें और उनका स्वयं ही समाधान खोज सकें ।

अनुसंधान के क्षेत्र -

शोधकर्ता ने प्रस्तुत अध्ययन में गृह वातावरण के विभिन्न घटकों के प्रभावों को छात्र/छात्रा-अध्यापकों के व्यक्तित्व निर्माण तथा शिक्षण कौशल को जानने के लिये अध्ययन किया है । इसमें गृह पर्यावरण का प्रभाव स्पष्ट रूप से प्रभावी साबित हुआ है । प्रस्तुत अध्ययन ने कुछ नये प्रश्नों को जन्म दिया है, जिनके समाधान के लिये अध्ययन के नये क्षेत्रों में अनुसंधान होना चाहिए । अतः नये अनुसंधान क्षेत्र निम्न प्रकार से हो सकते हैं :-

1- शिक्षक प्रशिक्षण सम्बन्धी नीतियों का अध्ययन करना ताकि बदलते हुये परिवेश में उपयुक्त अध्यापक विकसित हो सकें ।

2- अन्तर्क्षेत्रीय व अन्तर्राज्यीय पाठ्यक्रमों का विकास और मूल्यांकन क्षेत्र ।

3- शिक्षण के प्रभाव और दृष्टिकोण निर्धारण का अध्ययन करना ।

4- बड़े न्यादर्श का प्रयोग करके परिवार के वातावरण के प्रभाव को अधिक विश्वसनीय और सार्थक जानकारी प्राप्त करना ।

5- गृह वातावरण के उन घटकों का अध्ययन करना जो सकारात्मक और नकारात्मक शिक्षा प्रदान करते हैं ।

6- सामाजिक-आर्थिक स्तर का वातावरण पर प्रभाव तथा शैक्षिक उपलब्धि का मापन करना ।

7- शिक्षक-प्रशिक्षण क्षेत्र की समस्याओं का अध्ययन करना ।

8- माता-पिता में प्रेरणा, दृष्टिकोण और शैक्षिक निष्पादनों में सम्बन्ध का अध्ययन करना ।

9- ग्रामीण तथा शहरी परिवार के वातावरण का अध्ययन करना ।

10- कक्षा अभ्यास में सिद्धान्त और अभ्यास दोनों का प्रयोग करते हुये नीति निर्धारित करना ।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

सन्दर्भ-ग्रन्थ

अदावल, एस. बी. -"क्वालिटी ऑफ टीचर्स,"ट्रेनिंग ऑफ टीचर्स, अमिताभ प्रकाशन, इलाहाबाद, 1979.

अरोरा, के. - "डिफरेन्सेज बिटविन इफेक्टिव एण्ड इन इफेक्टिव टीचर्स", नई दिल्ली, एस. चाँद, 1978.

आयजेनिक - "मैनुअल ऑफ माडस्ले परसनालिटी इन्वेन्टरी", यूनिवर्सिटी ऑफ लन्दन प्रेस, 1959 दी.

आनन्द, एस.पी. - "टीचर इफेक्टिवनेस इन स्कूल्स", जरनल ऑफ इण्डियन एजूकेशन, 1983.

आलपोर्ट परसेनलिटी - "ए साकालोजिकल इण्टरप्रीटेशन, न्यूयार्क, हाल्ट, 1936.

इनसाइक्लोपीडिया ऑफ एजूकेशनल रिसर्व, थर्ड एडीसन, न्यूयार्क ।

एण्ड्रूज जान एच. एम. - "एडमिनिस्ट्रेटिव ऑफ साइकोलाजिकल डिफरेंसेज बिट्वीन सेकेण्डरी टीचर्स ऑफ डिफरेन्ट सब्जेक्ट फील्ड" एलबर्ट जरनल ऑफ एजूकेशनल रिसर्च, दिसम्बर, 1957(3).

ओलुम्बा के.ई. - "ए रिव्यू ऑफ स्टेट ऑफ स्टेट ऑफ आर्ट ऑफ रिसर्च ऑन एसेसिंग टीचर इफेक्टिवनेस", अफ्रीका, ओटवा आई डी आर सी, 1978.

कपिल एच.के. - "अनुसन्धान विधियाँ" हर प्रसादभार्गव प्रकाशन, आगरा, 1978.

कपिल एच.के. - "सांखियकी के मूल तत्व" विनोद पुस्तक मन्दिर आगरा परिवर्द्धित संस्करण, 1984.

कास्स डब्ल्यू. एन. - "ए स्टडी ऑफ टीचर इफेक्टिवनेस अमंग सेकेण्डरी स्कूल टीचर्स एण्ड देयर प्यूपिल्स डिजर्ट, ए.स. इन्ट. (ए) वाल्यूम 39.

कॉफमैन विलियम बी. - "डिटरमिनिंग स्टूडेन्ट्स कान्सेप्ट्स ऑफ इफेक्टिव टीचिंग फ्राम देयर रेटिंग ऑफ इन्ट्रोडक्शन", द जरनलऑफ एजूकेशनल साइकोलॉजी, मई, 1954 वाल्यूम 45 नम्बर-5.

कार्लाइल ए.वी. - "प्रिडिक्टिंग परफॉरमेन्सेज इन द टीचिंग प्रोफेसन" जरनल ऑफ एजूकेशनल रिसर्च, मई, 1954 वाल्यूम 47 नम्बर 9.

काबरा द्वारिका दास - "शिक्षक नमोनमः, शिविरा, बीकानेर राजस्थान, सितम्बर, 1985 वर्ष 26 अंक 3.

कैटिल आर.बी. - हैण्डबुक 16 पी.एफ., इलिनास, 1970.

क्रानबैक एल. जे. - "प्रिन्सिपल्स ऑफ साइकोलाजिकल टेस्टिंग", सेकेण्ड एडीसन, हारपर न्यूयार्क, 1960.

कुमार पी. एण्ड मूथा डी.एन. - "सरटेन साइकोलाजिकल कोरिलेट्स ऑफ टीचर इफेक्टिवनेस", जरनल ऑफ एजूकेशन एण्ड साइकोलाजी - 41 (3).

कोरिगन डी. - "एटीट्यूड चेन्ज इन स्टूडेन्ट टीचर्स", जरनल ऑफ एजूकेशनल रिसर्च 1963, वाल्यूम 57 नम्बर 2.

गुप्ता वाई.के. एण्ड शम्सोरी के. - प्रिडिक्शन ऑफ टीचिंग इफीसियेंसी यू टीचर्स एटीट्यूड्स टुवर्ड प्रोफेसनल ट्रेनिंग", एजूकेशनल रिव्यू, 1982, 88 (3) 43-45.

गैरेट एच.ई. -"स्टेटिस्टिक्स इन साइकोलाजी एण्ड एजूकेशन", लांगमैन ग्रीन एण्ड कम्पनी, 1967.

गैल्म आर॰ – "ए स्टडी ऑफ बी0एड0 स्टूडेन्ट्स, ब्रिटिश जरनल ऑफ एजूकेशनल साइकोलाजी, वाल्यूम-40, 1970.

जैकब – "एटीट्यूड चेन्ज इन टीचर एजूकेशन ऐन इनक्वैरी इन टू द रोल ऑफ एटीट्यूड इन चेन्जिंग टीचर विहैवियर", जरनल ऑफ टीचर एजूकेशन 1968 वाल्यूम 9 नम्बर 4, 410-415.

ठक्कर वी. आर – "ए स्टडी ऑफ पोटेन्सियल इफेक्टिवनेस एण्ड देयर एजूकेशनल एटीट्यूड इन रिलेशन टु देयर रैपोट विथ द स्टूडेन्ट्स एण्ड देयर सरवाइवल एण्ड जॉब सेटिस्फैक्सन इन प्रोफेसन", पी-एच0 डी0 एजूकेशन, एम॰ एस॰ यूनिवर्सिटी, बड़ौदा, 1977.

डेव पी॰एन॰ – "रिसर्च ऑन टीचर इफेक्टिवनेस इन डेवलपिंग कन्ट्रीज", पर्सपेक्टिव्स इन एजूकेशन, 1985.

थार्न-डायक, ई॰एल॰ – "एजूकेशनल साइकोलाजी वाल्यूम-1, दि ओरिजनल नेचर ऑफ मैन॰ न्यूयार्क, कोलम्बिया, यूनि॰प्रेस, 1932.

ट्रैवर्स, एम॰ डब्लू॰ – "ऐन इन्ट्रोडक्शन टु एजूकेशनल रिसर्च न्यूयार्क मैक मिलन, 1964.

डेवीज लिलियन एस॰ – "सम रिलेशनशिप बिटविन उटीट्यूड, पर्सनैलिटी कैरेक्टरस्टिक्स एण्ड वरवल विहैवियर ऑफ सैलेक्टेड टीचर्स", डाक्टरल डिजर्टेशन यूनिवर्सिटी ऑफ मिनिसोटा, 1961, 225.

थार्नडाइक आर॰एल॰ – "परसनल सेलेक्सन, टेस्ट्स मेजरमेंट टेकनीक्स", न्यूयार्क, जॉनविली एण्ड सन्स, 1957, 262.

देवनाथ एच॰एन॰ – "टीचिंग इफीसियेन्सी, इट्स मेजरमेन्ट्स एण्ड डिटरमिनेंट्स पी-एच॰डी॰ थेसिस, विश्वभारती यूनिवर्सिटी, 1971.

पाण्डेय के.पी. - "शिक्षण व्यवहार की तकनालजी", अमिताभ प्रकाशन, दिल्ली 294-303.

पामर जी.एच. - "दि टीचर" हागटन मिफलिन को, बोस्टन, 1908.

पाल जे. - "परसनैलिटी स्टडी ऑफ द स्टूडेन्ट्स लीडर्स, पी-एच.डी. थीसिस, साम. विश्व., 1976.

पोटर ई.एल. - "द रिलेशनशिप ऑफ टीचर ट्रेनिंग एण्ड टीचिंग इक्सपीरियेन्स टु एसेसमेन्ट ऑफ टीचिंग परफारमेंस ऑफ कम्युनिटी/जूनियर कॉलेज फैकल्टी", जरनल ऑफ एजूकेशनल रिसर्च, 1978, 72 (2) 81-85.

बुच एम.बी. -ए सर्वे ऑफ रिसर्च इन एजूकेशन" सी.ए.एस.ई. बड़ौदा, एन.सी.ई.आर.टी. पब्लिकेशन, 1974.

बुच एम.बी. - "सेकेण्ड सर्वे ऑफ रिसर्च इन एजूकेशन" एस.ई.आर.डी. बड़ौदा, 1979, एन.सी.ई.आर.टी. पब्लिकेशन, 1979.

बुच एम.बी. - "थर्ड सर्वे ऑफ रिसर्च इन एजूकेशन" एन.सी.आर.टी. पब्लिकेशन, नई दिल्ली - 1986.

ब्रिकनर - "आब्जर्व्ड क्लासरूम विहेवियर एण्ड परसनैलिटी दायरस ऑफ 178 बिगनिंग टीचर्स. इण्टरनेशनल वाल्यूम 31 (11), 1970.

बर्क डी.डी. - "परसनैलिटी करेक्टरस्टिक्स ऑफ स्टूडेन्ट टीचर्स एण्ड देयर सुपरवाइजर्स यूनिवर्सिटी ऑफ मिनीसोटा, 1969.

बुवेकर जान एस. - "माडर्न फिलासफी ऑफ एजूकेशन", मैग्राहिल बुक कम्पनी आइयनसी 1962, 97.

भारतीय आधुनिक शिक्षा, एन.सी.ई.आर.टी. प्रकाशन नई दिल्ली वर्ष 6 अंक प्रथम जुलाई, 1988.

माध्यमिक शिक्षा आयोग 1952-53, भारत सरकार, नई दिल्ली.

माइजोरिवक्स केबिन - "एनवाइरनमेन्ट कोरिलेट्स ऑफ अवर मैण्टल एबिलिटीज़" जरनल ऑफ एक्सपेरीमेंटल एजूकेशन, वाल्यूम 39.

मेहरोत्रा आर.एन. - "इफेक्ट ऑफ टीचर एजूकेशन प्रोग्राम ऑन द एटीट्यूड ऑफ टीचर्स टुवर्ड द टीचिंग प्रोफेशन", सी.आई.ई., न्यू डेलही, 1973.

रायन्स डी.जी. - "कैरेक्टरिक्टीक्स ऑफ टीचर्स डिस्क्रीप्सन, कंपरीजन एण्ड एप्रेजल", वाशिंगटन डी.सी. अमेरिकन काउन्सिल ऑफ एजूकेशन 19

राय बीना - रिलेशनशिप बिटविन द मेजर्स ऑफ सक्सेज ऑफ टीचर्स ऐज स्टूडेन्ट्स अन्डर ट्रेनिंग एण्ड ऐज टीचर्स इन स्कूल्स", पी-एच.डी. थेसिस, दिल्ली यूनिवर्सिटी, 1965.

गुप्ता, आर.एन. - "कल्चरल रिलेटिविटी इन एजूकेशन", लखनऊ विश्वविद्यालय प्रकाशन.

अग्रवाल, रेखा - "बालकों की शैक्षिक निष्पत्ति पर पारिवारिक दशा का प्रभाव" (शोध - 1988).

रिपोर्ट ऑफ द एजूकेशन कमीशन, 1964-66, भारत सरकार ।

रिपोर्ट ऑफ द यूनिवर्सिटी कमीशन, 1948-49, भारत सरकार ।

रोशनसिने वारक बी. - "सिन्थेसिस ऑफ रिसर्च ऑन ट्रेनिंग", एजूकेशनल लीडरशिप, अप्रैल, 1986 वाल्यूम 43 नम्बर 7, 60-61.

वर्क ऑन टीचिंग इफेक्टिवनेस 1900-1952", इनसाइक्लोपीडिया ऑफ एजूकेशनल रिसर्च, वाल्यूम 3 पृष्ठ 1487.

वर्मा - "द स्टडी ऑफ वैल्यू, एटीट्यूड एण्ड एचीवमेंट्स आफ स्टूडेन्ट टीचर्स",
जरनल ऑफ एजूकेशनल साइकोलोजी 1972, 210-216.

वर्मा आई. वी. - "ऐन इन्वेस्टिगेशन इन टू द इम्पैक्ट ऑफ ट्रेनिंग ऑन द वैल्यूज,
एटीट्यूड परसनल प्राब्लम्स एण्ड एडजस्टमेन्ट्स ऑफ टीचर्स पी-एच.डी.
थेसिस आगरा यूनिवर्सिटी, 1968.

वशिष्ठ के. के. - "टीचर एजूकेशन इन इण्डिया", आगरा

वीटन ए. ई. - "वैल्यू डिफरेन्सेस एमंग पब्लिक हाईस्कूल टीचर्स", रिव्यू ऑफ
एजूकेशनल रिसर्च 1984, वाल्यूम 54 (2), 143-178.

वेन्कटेश - "टीचर्स सेटिस्फैक्शन विद एनवाइरनमेन्ट, ई.पी.ए. बुलेटिन वाल्यूम-5
(3-4) अक्टूबर-जनवरी 1983.

वीराराघवन विमला एण्ड भट्टाचार्या रीना - "कोरिलेट्स ऑफ टीचर इफेक्टिवनेस",
पर्सपेक्टिव्स इन एजूकेशन 1987 वाल्यूम 3 नम्बर 3, 161-167.

वेस्ट जान डब्ल्यू - "रिसर्च इन एजूकेशन", प्रेन्टिस हॉल ऑफ इण्डिया प्रा० लि०
दिल्ली, 1963.

शर्मा आर. ए. - "ए स्टडी ऑफ रिलेशनशिप ऑफ प्रिडिक्टर्स ऑफ टीचर इफेक्टिवनेस
ऐट एलिमेन्टरी लेबल एण्ड फोलोअप आफ्टर वन यीअर ऑफ ट्रेनिंग",
डी. फिल., मेरठ यूनिवर्सिटी, 1971.

शिक्षा की चुनौती - "नीति सम्बन्धी परिप्रेक्ष्य - शिक्षा मन्त्रालय, भारत सरकार,
नई दिल्ली, 1985.

शिक्षा विवेचन, प्रासंगिकता और उत्कृष्टता के लिये शिक्षक शिक्षा में अपेक्षित अनु-
सन्धान, मानव संसाधन विकास मन्त्रालय (शिक्षा विभाग) भारत सरकार
दिल्ली (ग्रीष्म) 1987.

श्रीवास्तव आर॰सी॰ एवं बोस के॰ – "थ्योरी एण्ड प्रेक्टिस ऑफ टीचर एजूकेशन इन इण्डिया", चुघ प्रकाशन इलाहाबाद, 1973.

सालू ई॰ विनिकेट – "द इफेक्ट ऑफ आउट ऑफ स्कूल इन्फ्लुएन्स ऑन हाई स्कूल स्टूडेन्ट्स इन कोयम्बटूर (1964).

शैल्डन डब्लू॰एच॰ – "द वेरायटीज ऑफ ह्यूमन फिजीक न्यूयार्क हारपर, 1940.

स्कीनर चार्ल्स ई॰ – "एजूकेशनल साइकोलाजी", एडीटर वान॰एल॰रसेल, साउदर्न इलियन्स यूनिवर्सिटी, 1964.

सक्सेना पी॰सी॰ – "एटीट्यूड्स, इन्टेलिजेन्स एण्ड परसोनेलिटी कोरिलेट्स ऑफ कार्म्पीटेन्ट टीचर्स", इण्डियन साइकोलाजिकल रिव्यू 1969, 5, 107-112.

सिंह राजेन्द्र – "नेचर एण्ड नीड ऑफ प्रोफेशनल ट्रेनिंग फॉर कॉलेज यूनिवर्सिटी टीचर्स", एम0एड0 डिजर्टेशन बी0एच0यू0 1980.

हारो विट्ज यम॰ – "स्टूडेन्ट टीचिंग एक्सपीरियेन्सेज एण्ड एटीट्यूड्स ऑफ स्टूडेन्ट टीचर्स", जरनल ऑफ टीचर एजूकेशन 1968 वाल्यूम 19 नम्बर 3 पृष्ठ 317-324.

हिलगार्ड – "इन्ट्रोडक्शन टु साइकोलाजी, लन्दन हार्ट डेविस, 1962.

मुख्य परीक्षण तथा सन्दर्भ

1. कपूर - "16 पी.एफ. हिन्दी एडिसन, भार्गवा बुक हाउस, आगरा, 1970.

2. मिश्र के.एस. - "होम एनवायरनमैन्ट इन्वेन्ट्री, अंकुर साइकोलाजिकल एजेन्सी, लखनऊ, 1989.

3. बुच एच.बी. - "ए सर्वे ऑफ रिसर्च इन एजूकेशन, I, II, III, IV, वाल्यूम, एन.सी.ई.आर.टी., नई दिल्ली.

4. हैरिस, डब्ल्यू.सी. - "एनसाइक्लोपीडिया ऑफ एजूकेशनल रिसर्च, न्यूयार्क, 1960.

शिक्षण कौशल अनुसूची

(श्रीमती कल्पना दीक्षित द्वारा विकसित)

छात्र/छात्रा का नाम : पिता का नाम:

शिक्षक-प्रशिक्षण महाविद्यालय का नाम : दिनांक :

नीचे कुछ कथन दिये गये हैं जो कक्षा में शिक्षक के कौशल को प्रकट करते हैं। प्रत्येक कथन को सावधानी से पढ़िये और सोचकर देखिये कि यह कथन आप पर कितने लागू होते हैं, मानो आप शिक्षण के समय इनका कितना प्रयोग करते हैं। आप अपनी पहली प्रतिक्रिया को हाँ/नहीं में से किसी एक पर सही (✓) का निशान लगाकर प्रकट करें।

	हाँ	नहीं
1. प्रेरणा तथा उत्साह कौशल :		
1. क्या आप छात्रों के मनोभावों को ध्यान में रखकर अध्यापन करते हैं ?		
2. क्या आप पाठ की प्रस्तावना सहायक सामग्री के प्रयोग द्वारा निकलवाते हैं ?		
3. क्या आप छात्रों को पाठ्य सहगामी क्रियाओं में सम्मिलित रखने में समर्थ हैं ?		
4. क्या आप कक्षा में गर्मजोशी का प्रदर्शन करते हैं ?		
5. क्या आप छात्रों की आवश्यकताओं से परिचित होते हैं ?		
6. क्या आप पाठ्यवस्तु की व्यवहारिकता पर बल देते हैं ?		
2. योजना तथा संचार कौशल :		
1. क्या आप उपर्युक्त भावों के सहयोग से पाठ्यवस्तु की व्याख्या करते हैं ?		
2. क्या आप सहायक सामग्री के द्वारा पाठ्यवस्तु का विश्लेषण करते हैं ?		
3. क्या आप विभिन्न शिक्षण विधियों का प्रयोग करते हैं ?		
4. क्या आप कहानी पद्धति के द्वारा छात्र व्यवहार को निर्देशित करते हैं ?		
5. क्या आप पाठ का विकास योजना, सहयोग और भावों की स्पष्टता के द्वारा करते हैं ?		
6. क्या आप पुनरावृत्ति प्रश्नों के द्वारा ज्ञान की बोधता को स्थापित करते हैं ?		

शिक्षण विधि कौशल :

हाँ | नहीं

1. क्या आप प्रश्नों का चयन व गठन सही रूप से करते हैं ?
2. क्या आपके प्रश्नों का गठन छात्र स्तर का होता है ?
3. क्या आप उत्तर खोजने के लिये छात्रों को प्रोत्साहित करते हैं ?
4. क्या आप छात्र वार्तालाप में समान हिस्सा लेते हैं ?
5. क्या आप छात्रों से 'पूरक' प्रश्न पूछते हैं ?
6. क्या आप समस्या समाधान मिलकर करते हैं ?

परीक्षा कौशल :

1. क्या आप छात्र प्रोन्नति का मूल्यांकन करते हैं ?
2. क्या आप छात्र कठिनाइयों में सहयोग देते हैं ?
3. क्या आप सुधारात्मक उपायों द्वारा छात्रों के ज्ञान का मापन करते हैं ?
4. क्या आप छात्रों को स्वयं आंकलन के लिये प्रोत्साहित करते हैं ?
5. क्या आप मनोवैज्ञानिक तरीकों से छात्रों का मूल्यांकन करते हैं ?
6. क्या शिक्षक स्वयं के ज्ञान का आंकलन करता है ?

कक्षा प्रबन्ध कौशल :

1. क्या आप छात्र उपस्थिति पर ध्यान देते हैं ?
2. क्या आप छात्र असामान्यता को सलाह द्वारा सामान्य बनाते हैं ?
3. क्या आप कक्षा का वातावरण नियन्त्रण के द्वारा शैक्षिक बनाते हैं ?
4. क्या आप जीवन में अनुशासन को प्रोत्साहन देते हैं ?
5. क्या कक्षा नियन्त्रण बच्चों में भय जाग्रत करता है ?
6. क्या आप बच्चों की कक्षा में मानसिक अनुपस्थिति पर ध्यान देते हैं ?